शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय

शेष प्रश्न



४32
52शे

शेष प्रश्न

शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय

डा॰ डिल्ली रमण रेग्मी
कल्याणी रेग्मी स्मारक
पुस्तकालय

सुबोध पब्लिकेशन्स

ts 9832
352

डा. डिल्ली रमण रेग्मी
कल्याणी रेग्मी स्मारक
पुस्तकालय
9059

Rs 25.00

प्रकाशक : सुबोध पब्लिकेशन्स (सुबोध पॉकेट बुक्स का उपक्रम), अंसारी रोड, नई दिल्ली-११०००२ / **संस्करण** : १६८६ / **मुद्रक** : अजय प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-११००३२
SHESH PRASHNA : by Shart Chandra Chattopadhyaya

शेष प्रश्न

अनेक बंगाली परिवार समय-समय पर आकर आगरा में बस गये थे। उन्होंने शाही समय में यहाँ के किले और भवनों का प्राय: अवलोकन किया था। अमीरों और नवाबों की जर्जर मजारों के नाम भी उन्हें याद हो आये थे। देखते-देखते ताजमहल उनके लिए अब कोई आकर्षण का केन्द्र नहीं रहा। संध्या की उदासी, नम आँखें, चन्द्रमा की ज्योत्सना में अधमुँदी आँखों से, कहने का तात्पर्य यह है कि सभी स्थितियों में वे ताजमहल को देख चुके थे। अब उनके प्रयोग लगभग समाप्त हो गये थे। उन्हें यह भी याद हो आया कि किस प्रसिद्ध लेखक ने ताजमहल पर क्या टिप्पणी की थी और किस कवि ने किस कविता की रचना की थी। कौन ताजमहल के पीछे छुपी प्रेम कहानी के पीछे अत्यन्त भावुक होकर फाँसी लगाकर मृत्यु का आलिंगन किया? सब-कुछ जाना-पहचाना-सा लगने लगा था।

आज बंगाली समाज में बड़ी चहल-पहल थी। कारण, आज बंगाली समाज के एक अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण व्यक्ति आये हुए थे। वे अकेले नहीं आये थे, बल्कि उनके साथ रूप-गुण-सम्पन्न उनकी एक लड़की भी थी। नाम था—मनोरमा।

शहर के एक किनारे विशाल हवेली खाली पड़ी थी। उसे ही उन्होंने किराये पर लिया था। बस, देखते-देखते वह सूना मकान चहल-पहल से भर गया। तब ऐसा लगा कि इस निर्जीव मकान में इस बंगाली ने प्राण-प्रतिष्ठा भर दी हो। उनके साथ नौकर, बावर्ची, चौकीदार, रसोइया, दास-दासियाँ, मोटरसाइकिल, घोड़ागाड़ी, सब-कुछ थे। बंगाली महाशय का नाम था आशुतोष बनर्जी। इस शानो-शौकत से साफ-साफ लगता था कि ये लोग बड़े ही रईस आदमी हैं। परन्तु बंगाली समाज का आकर्षण

का कारण इनकी सभ्यता न होकर उनका सरल और विनम्र स्वभाव था। बाप और बेटी दोनों शहर में आये। सारे बंगाली परिवारों का पता जान करके उनसे भेंट की। जहाँ भी गये बड़े प्रेम-भाव से कहा, "हम लोग बीमारी के कारण यहाँ आये हैं। यहाँ आपके अतिथि भी हैं। यदि आप हमें अपने में सम्मिलित नहीं करेंगे तो हमें अपना निर्वासन-काल काटना कठिन हो जायेगा।" बेटी घरों के अन्दर जा-जाकर उनकी स्त्रियों से मिली और एक ऐसा सम्बन्ध बना लिया कि मानो वे यहाँ कई दिनों से रह रहे हैं।

सभी इनसे मिलकर बहुत प्रसन्न हुए। जब भी कोई आशुतोष बाबू के यहाँ आता तो वे स्वयं अपनी गाड़ी भेज देते थे और गाड़ी उन्हें वापस भी छोड़ आती थी। एक सप्ताह में आशुतोष बनर्जी का मकान इतना परिचित हो गया कि वहाँ पर हर समय रौनक रहने लगी और आगरे में बंगाली परिवार यह बिल्कुल ही भूल गये कि वह लोग नये हैं। हर समय गाना-बजाना, नाच-रंग, हँसी-मजाक की महफिलें जमने लगीं। अभी तक संकोच-वश किसी ने यह जानने का प्रयास नहीं किया था कि ये लोग सनातनी हैं या ब्रह्मसमाजी। यहाँ इसकी कोई विशेष आवश्यकता भी नहीं थी। शिक्षित परिवार था और इसलिए सबने जान लिया था कि खान-पान के विषय में इनके यहाँ रूढ़िवाद का बोलबाला नहीं हो सकता। मनोरमा उच्च शिक्षा के कारण अभी तक अविवाहित थी, यही बात इसका स्पष्ट प्रमाण था कि धार्मिक रूढ़िवाद से यह परिवार बहुत दूर था। घर में मुसलमान बावर्ची था, इसकी ओर किसी का ध्यान ही नहीं गया था।

कॉलेज के प्रोफेसर हैं अविनाश मुखर्जी। बहुत दिन हुए उनकी पत्नी का देहांत हो गया—फिर विवाह नहीं किया। दस साल का उनका एक लड़का है। कॉलेज में पढ़ता है। आर्थिक स्थिति अच्छी है, निश्चिन्त और शांत जीवन है। दो साल पूर्व विधवा साली मलेरिया से पीड़ित होकर हवा बदलने यहाँ आयी थी। बुखार ने तो छोड़ दिया, पर बहनोई ने नहीं छोड़ा। परिणामतः वह घर की स्वामिनी है। लड़के की देखभाल करती है, घर-गृहस्थी सँभालती है, मित्र लोग इस संबंध की आलोचना करके हँसी उड़ाते हैं। अविनाश हँस देता है। कहता है, "भाई, व्यर्थ में लज्जित न करो, भाग्य की बात है। नहीं तो चेष्टा करने में तो कोई कसर नहीं रखी।"

अपनी स्त्री को बहुत प्रेम करता था अविनाश। मकान-भर में कई-कई पोज के उसके फोटो टँगे हुए हैं। सोने के कमरे में एक बड़ी ऑयल पेंटिंग है, मूल्यवान फ्रेम से जड़ी हुई। हर बुधवार को प्रातः अविनाश उस पर माला लटका देता है। बुधवार का दिन उसकी पत्नी की मृत्यु का दिन था।

अविनाश हरदम प्रसन्न रहता है। ताश-शतरंज में उसे विशेष रुचि है। छुट्टी के दिन उसके घर लोगों का बड़ा जमघट रहता है। आज किसी त्यौहार के कारण छुट्टी है। कुछ प्रोफेसर लोग खाने-पीने के बाद आ धमके। दो जनों ने शतरंज का खेल जमाया और दो जने औंधे लेटकर उसे देखने लगे; बाकी के सब लोग गपशप में उलझ गये। इतने में एक बड़ी मोटरकार उनके दरवाजे पर आकर रुकी। अपनी बेटी के साथ आशु बाबू ने प्रवेश किया और सबने सम्मान के साथ उनका स्वागत किया। सब गपशप और शतरंज को उस समय स्थगित कर दिया गया। अविनाश ने हाथ जोड़कर कहा, "मेरा परम सौभाग्य है कि आपके पैरों की धूल इस घर में पड़ी—हाँ, अचानक-असमय कैसे आना हुआ?" इतना कहकर मनोरमा के लिए उसने एक कुर्सी बढ़ा दी।

आरामकुर्सी पर अपने भारी बदन को टिकाते हुए आशु बाबू उच्च हास्य से बोले, "आशु वैद्य के लिए असमय? मेरी ऐसी बदनामी तो मेरे किसी ताऊ-चाचा भी नहीं कर सके अविनाश बाबू।"

मनोरमा हंसते मुँह से सिर झुकाकर बोली, "यह क्या कह रहे हो बाबा।"

"तो जाने दो छोटे चाचा की बात। लड़की को आपत्ति है, लेकिन इससे बढ़कर कोई अच्छा उदाहरण बिटिया के बाप के पास नहीं है।" आशु बाबू इतना कहकर वह फिर प्रसन्नता से मुँह फाड़कर हँस पड़े। हँसी रुकने पर बोले, "मगर क्या कहूँ साहब, गठिया से अपाहिज हूँ; नहीं तो जिन चरणों की धूल का आपने इतना गौरव बढ़ा दिया है, आशु वैद्य के उन्हीं पाँव की धूल बुहारने के लिए आपको एक नौकर रखना पड़ता अविनाश बाबू! लेकिन अब बैठने का समय नहीं, अभी जाना होगा।" इतनी जल्दी का कारण जानने के लिए सभी उनके मुँह की ओर देखने लगे।

आशु बाबू ने फिर कहा, "एक प्रार्थना है। स्वीकार कराने के लिए

बिटिया तक को घसीट लाया हूँ। कल छुट्टी का दिन भी है। शाम को घर पर गाने-बजाने का आयोजन है। सपरिवार पधारना सबको। उसके बाद भोजन…।"

वे फिर लड़की से बोले, "मणि, भीतर से आज्ञा ले आओ बेटी। देर करने से काम न चलेगा। एक बात और है बंधुओ! स्त्रियों के लिए न सही, पुरुषों के लिए दोनों प्रकार के खाने-पीने की व्यवस्था है—समझ गये न?" सभी समझ गये और एक स्वर से सभी ने कह दिया, "हममें से किसी को कोई आपत्ति नहीं है।"

आशु बाबू ने प्रसन्न होकर कहा, "यही होना चाहिए।" लड़की की ओर देखकर कहा, "मणि, खाने के विषय में स्त्रियों से भी राय ले आना है, भूलना नहीं। हर घर जाकर उन लोगों को निमंत्रित करके घर लौटने तक शायद हम लोगों को संध्या हो जायेगी। जरा जल्दी करो बेटी।"

मनोरमा भीतर जाना ही चाहती थी कि अविनाश बाबू कह उठे, "यह घर तो, बहुत दिन हुए, सूना हो चुका। मेरी साली है, परन्तु वे विधवा हैं, गाना सुनने अवश्य रहेंगी परन्तु खाना…।"

"कोई बात नहीं अविनाश बाबू, हमारी मणि जो है। मांस-मछली, प्याज-लहसुन तो यह छूती भी नहीं।" आशु बाबू कह उठे।

अविनाश ने आश्चर्य से पूछा, "ये मांस-मछली नहीं खाती?"

आशु बाबू ने कहा, "खाती सब-कुछ थी परन्तु दामाद साहब की इच्छा नहीं—वे कुछ संन्यासी ढंग के आदमी हैं।"

मनोरमा का मुख तुरन्त लाल हो गया, वह बीच में ही बोल उठी—"यह क्या कह रहे हो बाबा!"

पिता अवाक् रह गये। बातें फिर शुरू हुईं; परन्तु इसके बाद बातचीत जमी नहीं। दो-चार मिनट आशु बाबू ने यूँही बातें कीं पर मनोरमा एकदम शांत रही, और दोनों के चले जाने पर कुछ देर के लिए वहाँ मानो एक गहरा सन्नाटा-सा छा गया।

किसी ने कुछ भी स्पष्ट नहीं कहा; परन्तु सभी सोचने लगे कि अचानक यह दामाद साहब कहाँ से आ टपके? आशु बाबू की मनोरमा ही एकमात्र बेटी है। यह सभी जानते थे और वह अभी तक कुँवारी है। विवाहित या

सधवा का कोई चिह्न उसमें नहीं। इसी से संदेह का कारण कोई नहीं समझता था। फिर भी ये संन्यासी दामाद चाहे कोई भी हों, इससे विपुल विलास और ऐश्वर्यशाली व्यक्ति की एकमात्र शिक्षिता वेटी का मांस-मछली, प्याज-लहसुन खाना एकदम से वंद हो गया।

फिर शरमाने और रहस्य को दवाने का कारण समझ में नहीं आता। क्यों उस बात को कहकर पिता स्तब्ध रह गये और क्यों लड़की के मुख पर एक विचित्र प्रकार की लालिमा दौड़ गयी। यह विचित्र घटना सभी के मन में एक रहस्य बनकर रह गयी। इस नये परिवार के उत्सव में सम्मिलित होने की जो एक स्वच्छन्द विचारधारा बह रही थी उसमें एक प्रकार का अवरोध दिखलायी दिया।

दो

वंगाली समाज के शिष्टमण्डल को उस दिन भी निमंत्रित किया गया था। वंगाली प्रोफेसरों का समाज सपरिवार और समय पर उपस्थित हो गया। एक वहुत वड़ा कमरा, जिसमें एक सुन्दर गलीचा बिछा हुआ था, अतिथियों के लिए सजाया गया था। उस्ताद लोग भी अपने साजों को लिए, एक ओर वैठे उन्हें ठीक कर रहे थे। घर के स्वामी आगन्तुकों का वहुत आधुनिक तरीके से स्वागत कर रहे थे। साथ ही उस्तादों की ओर संकेत करके संगीत आयोजन का भी विवरण सुनाते जा रहे थे। "इतना गजव का संगीत होगा कि आप मुझे आशीर्वाद देते हुए जायेंगे।" आशु वावू ने कहा।

आनंद-भरे स्वर में अविनाश वावू बोले, "आप भी भला क्या कह रहे हैं आशु वावू! आप तो अचानक ही यह रत्न पा गये हैं, अमूल्य रत्न है, अमूल्य।"

"नवीन आविष्कार है साहव, बिल्कुल नवीन!—आप लोग भी जहाँ तक हमारा विचार है भूले नहीं होंगे अभी। शायद अव भूल भी गये हों।

चलिये, मैं आपको दिखाता हूँ।" कहते हुए परदा हटाकर वह सबको अंदर ले गये।

साँवला रंग होने के बावजूद भी वह व्यक्ति अपूर्व सौंदर्य का धनी था। लम्बा छरहरा बदन, अंगों का गठन मानो साँचे में ढालकर किया गया था। नाक, आँख, होंठ की सौंदर्य सीमाएँ मानो इसी मानव में आकर एकत्रित हो गयी थीं। आयु लगभग बत्तीस की होगी; परन्तु देखने में उतनी नहीं मालूम होती थी। एक सोफ पर बैठे मनोरमा से बात कर रहे थे। अब तनिक एक ओर को खिसककर मुस्कराते हुए बोले, "आइये महाशमगण !" मनोरमा ने मेहमानों को मधुर नमस्कार किया; परन्तु कुछ जड़ से दिखाई देने वाले आगन्तुकों ने नमस्ते का उत्तर नमस्ते के रूप में नहीं दिया।

"आगरे से कब लौटना हुआ शिवनाथ बाबू ! हमें सूचना तक नहीं दी।" आगे बढ़कर अविनाश बाबू ने ही मौन भंग करने का साहस किया।

"सूचना नहीं दी ! आश्चर्य की बात है। मुझे क्या पता था कि इस सूचना के लिए आप लोग इतने व्याकुल हो रहे थे।" हँसते हुए उन्होंने उत्तर दिया।

अविनाश बाबू ने रूखा उत्तर सुनकर भी हँसने का असफल प्रयास किया; परन्तु उनके साथियों ने अपने हृदय में एक ईर्ष्या का अनुभव किया। इन सभी के चेहरों से यह स्पष्ट हो गया कि उस इतने सुन्दर लगने वाले व्यक्ति के प्रति उनमें एक घृणा की पुट मिलती है और इससे न केवल मनोरमा और उसके पिता ही परन्तु अविनाश के मुख पर भी लज्जा की रेखा दौड़ गयी। यह विषय यहीं रुक गया। इतने में उस्तादों की तंत्रियाँ झंकृत हो उठीं और एक गुमाश्ते ने सब व्यवस्था हो जाने की तैयारी की सूचना दी।

पेशेवर उस्तादों के संगीत में वही पुराना प्रभाव था; परन्तु इस संगीत सभा में शिवनाथ बाबू का स्वर अतुलनीय था और ऐसा प्रतीत होता था कि सरस्वती देवी का वरदान लेकर वही व्यक्ति आडंबरों से दूर होकर शुद्ध ताल और लय के संगमस्वरूप है। संगीत के माधुर्य में सभी मंत्र-मुग्ध थे और बूढ़ा अमीरखाँ धीरे से खुले से कह उठा, "वाह-वाह ! ऐसा आज से पहले कभी नहीं सुना।"

मनोरमा ने बाल्यकाल से संगीत-विद्या का अभ्यास किया था; परन्तु उसे आज प्रथम बार इस बात का अनुभव हुआ कि संगीत के छंद-छंद में हृदय को कसकाने वाली एक अनोखी शक्ति विद्यमान होती है। उसके नयनों में आँसुओं के मोती झलकने लगे और उन्हें रोकने का भी एक प्रयत्न करके असफल होने पर वह स्वयं वहाँ से उठकर चली गयी।

"वास्तव में इस वर्ष तो शिवनाथ ने संगीत-कला में एक कमाल प्राप्त किया। पहले भी कई बार हम इसे सुन चुके हैं; परन्तु जो निपुणता आज...।"

"यह बात है।" हरेन्द्र ने कहा।

इतिहास के अध्यापक अक्षय बाबू की ख्याति मित्र-समाज में एक कठोर सच्चे व्यक्ति के रूप में है। गाने-बजाने अच्छे लगने को वे मन की निर्बलता मानते हैं। साधु-स्वभाव उन्होंने भगवान् से पाया है। इसीलिए न केवल उनके चरित्र संबंधी बल्कि औरों के चरित्र के संबंध में भी उनका मत ठीक माना जाता है।

अचानक शिवनाथ के वापस लौट आने के कारण शहर का वातावरण फिर से कलुषित न हो जाये, इस भय से उसकी गंभीर शांति को ठेस लगी। घर में औरतें आ गयी हैं, वे भी परदे की ओट से गाना सुनेंगी, मुँह देखेंगी, और वह उन्हें भी प्रिय लगेगा। वे बोले, "गाना तो सुना था मधु बाबू का! यह गाना आप लोगों को चाहे जितना भी अच्छा लगा हो, परन्तु मुझे तो प्राणहीन-सा ही लगा।"

सब चुप हो रहे।

वजह यह थी कि एक तो मधु बाबू का गाना किसी ने सुना ही नहीं और दूसरे गाने में प्राण रहने-न-रहने की धारणा अक्षय के समान और किसी को स्पष्ट न थी। आशु बाबू उत्तेजनावश तर्क करने को तैयार थे; पर अविनाश ने आँखों के संकेत से उन्हें रोक दिया।

संगीत की आलोचना होने लगी। कब, किसने, कहाँ, कैसा गाना सुना था, उसकी व्याख्या और वर्णन किया जाने लगा। बातों-ही-बातों में रात ढलने लगी। भीतर से सूचना आयी कि सब औरतें जीम चुकीं और उन्हें घर भेजा जा रहा है।

वृद्ध जज साहब रात हो जाने के कारण घर चल दिये। अजीर्ण रोग-ग्रस्त मुंसिफ साहब भी जल और पान मात्र मुँह में देकर उनके साथी बने। रहा केवल प्रोफेसर दल। उसके जीमने की बारी आयी। खुले बरामदे में सबके साथ आशु बाबू भी बैठ गये। मनोरमा औरतों से मुक्त होकर देख-रेख के लिए यहाँ आ पहुँची।

शिवनाथ की खाने में कोई रुचि नहीं; वह बिना खाये ही घर लौटने को प्रस्तुत था। मगर मनोरमा किसी भी प्रकार उसे छोड़ नहीं रही थी। आग्रह से सबके साथ बिठा दिया। आयोजन सम्भ्रांत लोगों जैसा ही था। इस बात का विस्तार के साथ वर्णन करने कि रेल में आते समय टूंडला में शिवनाथ के साथ कैसे आशु बाबू का परिचय हुआ और दो दिन की बातचीत से कैसे वह परिचय घनिष्ठ आत्मीयता में बदल गया।

आशु बाबू ने कहा, "और, सबसे बढ़कर चमत्कार है मेरे कानों का। इनके गले की अस्फुट माकेली-सी गुंजन ध्वनि से मैं निश्चित समझ गया कि कोई गुणी व्यक्ति हैं।" इतना कहकर उन्होंने बेटी को साक्षी के तौर पर बुलाकर कहा, "क्यों बेटी, कहा नहीं था तुमने, शिवनाथ बाबू बड़े आदमी हैं? कहा नहीं था मणि, इनसे जान-पहचान होना जीवन में एक सौभाग्य की बात है?"

उसका चेहरा भी एक अव्यक्त आनन्द से चमक उठा, बोली, "हाँ बाबा, आपने कहा था। आपने गाड़ी से उतरते ही मुझे बताया था—"

"मगर देखिये आशु बाबू—"

अक्षय वक्ता थे। सब स्तब्ध हो गये। अविनाश ने रोकने का प्रयत्न किया—"ओ हो, रहने दो अक्षय! रहने दो यह सब चर्चा—"

अक्षय ने आँखें मीचकर कई बार सिर हिलाया और कहा, "नहीं अविनाश बाबू, दबाने से काम नहीं चलेगा। शिवनाथ बाबू की सारी बातें खोलकर बता देना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। आप—"

"आप—करते क्या हो अक्षय, कर्तव्य का ज्ञान तो हम लोगों को भी है, साहब—और किसी दिन देखा जायेगा—" इतना कहकर अविनाश ने उसे एक धक्का देकर रोकने का प्रयत्न किया, पर सफलता न मिली। अक्षय का शरीर धक्के से हिल गया, पर कर्तव्य नहीं हिला। बोले, "आप लोग

जानते हैं कि व्यर्थ का संकोच मुझे नहीं है। अनीति को बढ़ावा मेरे सामने नहीं दिया जा सकता।"

हरेन्द्र बोल उठा, "अरे, सो क्या हम ही बढ़ावा देना चाहते हैं परन्तु उसके लिए क्या कोई और स्थान व समय नहीं?"

अक्षय ने कहा, "नहीं। वे यदि इस शहर में फिर से न आते, यदि उच्च परिवार से घनिष्ठता बढ़ाने का प्रयत्न न करते, खासकर कुमारी मनोरमा का यदि कोई सम्बन्ध न होता—"

आशु बाबू उद्वेग के कारण बौखला उठे और अज्ञात भय से मनोरमा का चेहरा भी पीला पड़ गया।

हरेन्द्र ने कहा, "यह बहुत अधिक है!"

अक्षय ने शक्ति के साथ प्रतिवाद किया, "नहीं, अभी कुछ नहीं।"

अविनाश बोल उठे, "ओ हो···कर क्या रहे हो तुम लोग?"

अक्षय ने किसी बात पर ध्यान ही नहीं दिया, बोले, "ये भी किसी दिन यहाँ प्रोफेसर थे। आशु बाबू को बतलाना चाहिए था कि कैसे वह नौकरी छूटी।"

हरेन्द्र ने तपाक से कहा, "अपनी इच्छा से छोड़ दी। पत्थर का व्यवसाय करने के लिए।"

अक्षय ने खंडन किया, "गलत है।"

शिवनाथ चुपचाप भोजन कर रहा था मानो उस विवाद से उसका कोई लेना-देना ही न हो। अब उसने मुँह उठाकर देखा और अत्यन्त स्वाभाविक भाव से कहा, "बात तो झूठी है। यदि प्रोफेसरी अपनी इच्छा से न छोड़ता तो शायद आप लोगों की इच्छा से छोड़नी पड़ती और हुआ भी वही।"

आशु बाबू ने आश्चर्य के साथ पूछा, "कैसे?"

शिवनाथ ने कहा, "शराब पीने के कारण।"

इस बात का अक्षय ने प्रतिवाद किया, "नहीं, शराब पीने के साथ-साथ उन्मादित होने के दोष से।"

शिवनाथ ने कहा, "जो शराब पीता है वही तो कभी-न-कभी मतवाला होता है। जो नहीं पीता, वह या तो झूठ बोलता है, या शराब नहीं पानी

पीता है।" वह हँसने लगा।

अक्षय क्रोध में कठोर होकर बोला, "ढीठ होकर तुम हँसना चाहो तो हँस सकते हो, मगर इसे हम कभी क्षमा नहीं कर सकते।"

शिवनाथ ने कहा, "मैं आपकी बदनामी नहीं करता कि आप मुझे क्षमा कर सकते हैं। इस सत्य को मैं स्वीकार करता हूं कि स्वेच्छा से नौकरी छुड़ाने के लिए आप लोगों ने बहुत परिश्रम किया था।"

अक्षय ने कहा, "तो आशा है कि और भी एक सत्य आप इसी प्रकार स्वीकार कर लेंगे। आपको शायद मालूम नहीं कि हम लोग आपकी बहुत-सी बातें जानते हैं।"

शिवनाथ ने गरदन हिलाकर कहा, "मुझे मालूम नहीं। फिर इतना अवश्य जानता हूँ कि दूसरों की बातें जानने में आपको विशेष रुचि है। क्या स्वीकार करना होगा, कहिये ?"

अक्षय ने कहा, "आपकी स्त्री जीवित है। उसे छोड़कर आपने दूसरा विवाह किया, यह सच है ?"

आशु बाबू को क्रोध आ गया, "आप यह सब क्या कह रहे हैं अक्षय बाबू ? ऐसा भी कहीं हुआ है या हो सकता है ?"

शिवनाथ बीच में बोले, "यही हुआ है आशु बाबू। उन्हें छोड़कर मैंने दूसरा विवाह किया।"

"कहते क्या हैं ? क्या हुआ था ?"

शिवनाथ ने कहा, "कोई विशेष बात नहीं। वह बीमार रहती है। आयु भी तीस की हो चली। औरतों के लिए इतना ही काफी है। लगातार बीमारी के कारण दाँत गिर गये, बिल्कुल बूढ़ी हो गयी है इसलिए मुझे दूसरा ब्याह करना पड़ा।"

आशु बाबू विह्वल दृष्टि से चेहरे की ओर देखते रह गये, "ऐं ! केवल इसीलिए ? उनका और कोई अपराध नहीं था ?"

शिवनाथ ने कहा, "नहीं। कोई मिथ्या आरोप लगाने से लाभ ही क्या है, आशु बाबू ?" उनके इस कठोर सत्य से अविनाश पागल हो उठा, "लाभ ही क्या है ! पाखंडी कहीं के ! तुम्हारी लाभ-हानि चूल्हे में जाये, एक बार झूठ ही बोल जाते कि उसने गम्भीर अपराध किया था, इसी से उसे छोड़

दिया है। एक झूठ से तुम्हारा पाप बढ़ जाता?"

शिवनाथ क्रुद्ध नहीं हुआ, केवल इतना ही बोला, "मगर ऐसी गलत बात मैं नहीं कह सकता।"

हरेन्द्र सहसा जल-भुन गया, बोला,"शिवनाथ बाबू, विवेक जैसी चीज क्या आपके अन्दर है?"

शिवनाथ शांत रहा, उसने शांत भाव से कहा, "ऐसा विवेक व्यर्थ है। झूठे विवेक की जंजीर पैरों में डालकर मैं नहीं चलना चाहता। दुःख भोगते चलना जीवन का उद्देश्य नहीं है।"

आशु बाबू इससे चोट खाकर बोले—"मगर आप अपनी पत्नी का दुःख तो जरा सोचिये। उनका रोगी रहना कष्टप्रद अवश्य है, परन्तु केवल इसी कारण से—बीमार रहना तो कोई दोष नहीं? बिना किसी अपराध—"

"बिना किसी अपराध के मैं ही भला दुःख क्यों सहता रहूँ? ऐसा विश्वास मेरा नहीं है कि एक का दुःख किसी के सिर पर लाद देने से न्याय होता है।"

आशु बाबू ने आगे तर्क नहीं की। वे केवल एक गहरी साँस लेकर चुप हो रहे।

हरेन्द्र ने पूछा, "यह विवाह हुआ कहाँ?"

"गाँव ही में।"

"सौ के होते हुए लड़की दे दी! शायद इसके माँ-बाप नहीं हैं?"

शिवनाथ ने कहा, "नहीं, हमारे यहाँ की महरी की विधवा लड़की है।"

"घर की नौकरानी की लड़की है, वाह-वाह! जात क्या है?"

"ठीक से पता नहीं। शायद जुलाहिन होगी।"

अक्षय बहुत देर से बोला नहीं था, अब पूछ उठा, "वह अशिक्षित भी है शायद?"

शिवनाथ ने कहा, "शिक्षा के लोभ से विवाह नहीं किया, विवाह किया है रूप के लिए और इसका उसमें अभाव नहीं है।"

इस उक्ति के बाद मनोरमा ने फिर एक बार उठने का प्रयत्न किया, परन्तु इस बार भी उसके पाँव पत्थर के समान भारी हो गये। किसी ने उसकी ओर नहीं देखा। देखते तो शायद भयभीत हो जाते।

हरेन्द्र ने कहा, "तो, यह शायद सिविल मैरिज हुई है ?"

शिवनाथ ने गरदन हिलाकर उत्तर दिया, "नहीं, विवाह हुआ शैव मत से।"

अविनाश ने कहा, "यानी धोखा देने का रास्ता दसों दिशाओं से खुला रखा, क्यों न शिवनाथ ?"

शिवनाथ ने हँसकर कहा, "क्रोध व्यर्थ है अविनाश बाबू ! नहीं तो, पिताजी स्वयं मेरा जो विवाह कर गये हैं, उसमें कोई धोखेबाजी नहीं थी, परन्तु फिर भी धोखा तो रह ही गया। उसे ढूंढ़ निकालने की आँखें होनी चाहिए।"

अविनाश चुप रहा, केवल उसका चेहरा क्रोध से लाल हो गया। आशु बाबू चुपचाप सिर झुकाये बैठे हुए सोचने लगे—यह क्या हुआ? दो-तीन मिनट सब मौन रहे और कलह की वायु से घर भर गया। इसी समय अविनाश बाबू अचानक बोल उठे, "जाने दो मित्र, ये सब बातें। हाँ तो शिवनाथ, अब वहाँ पत्थर का काम कर रहे हो न ?"

शिवनाथ ने कहा, "हाँ।"

"अपने मित्र के नाबालिग बच्चों का प्रबन्ध तो तुमको करना पड़ता होगा ? उनकी माँ है न ? दशा कैसी है ?उतनी अच्छी तो नहीं होगी शायद ?"

"नहीं, बहुत ही बुरी है।"

"बेचारे अचानक मर गये—हम लोगों ने सोचा था कुछ रुपया-पैसा छोड़ गये होंगे। परन्तु हाँ, तुम्हारे मित्र अवश्य थे। घनिष्ठ मित्र।"

शिवनाथ ने उत्तर दिया, "हाँ, हम दोनों सहपाठी थे।"

अविनाश ने कहा, "इसी से उस समय वे तुम्हारे लिए इतना कर सके थे। लेकिन खैर, जो भी कुछ हो शिवनाथ, अब बँटवारा करने का क्यों नहीं दावा करते ?"

"बँटवारा काहे का ? व्यवसाय तो अकेले का है।" शिवनाथ बोला।

अक्षय ने आश्चर्य से कहा, "पत्थर का कारोबार आपका हो गया शिवनाथ बाबू ?"

"मेरा तो है ही।" शिवनाथ दृढ़ था।

अक्षय ने कहा, "किसी प्रकार भी नहीं। हम सभी जानते हैं, योगेन्द्र

बाबू का है।"

शिवनाथ ने उत्तर दिया, "जानते हो तो कचहरी में जाकर गवाही क्यों नहीं दे देते ?"

अविनाश ने प्रश्न किया, "मामला क्या कचहरी तक पहुँच गया ?"

शिवनाथ ने कहा, "हाँ। योगेन्द्र के साले ने नालिश की थी। मुझे डिग्री मिल गयी।"

अविनाश साँस छोड़कर बोला, "अच्छा हुआ, बेचारी विधवा को कुछ देना नहीं पड़ा।"

शिवनाथ ने कहा, "नहीं, आप तो खूब बने हैं भई, और भी दो-एक ले जाओ न।"

आशु बाबू चौंककर बोले, "यह क्या, आप लोग तो खाना भी भूल गए है।"

भोजन करने की रुचि सबकी मिट चुकी थी।

मनोरमा धीरे से उठकर जा रही थी। शिवनाथ ने बुलाकर कहा, "वाह, हम लोगों का खाना समाप्त नहीं हुआ और आप चली जा रही हैं।"

मनोरमा ने इस बात का उत्तर नहीं दिया। एकबार मुड़कर देखा तक नहीं। घृणा के मारे उसके शरीर में काँटे उठ रहे थे।

तीन

दो दिन पश्चात् संध्या को बादल घिर-घिर आ रहे थे। दोपहर को कुछ वर्षा बन्द रही, मगर बादल छँटे नहीं। मनोरमा घूमने के लिए तैयार होकर अपने पिता के कमरे में पहुँची। आशु बाबू एक शाल ओढ़े आराम-कुर्सी पर बैठे एक किताब पढ़ रहे थे। बेटी ने आश्चर्य के साथ पूछा, "बाबा, अभी तक तैयार नहीं हुए ? आज तो हम लोगों ने इतवारी खाँ की कब्र देखने जाने का निश्चय किया था।"

"किया तो था बिटिया, परन्तु आज मेरी कमर का दर्द—"

"तो मोटर वापस करा दूं ? कल चलेंगे, ठीक है न बाबा ?"

आशु बाबू बोले, "लेकिन न घूमने से तेरा सिर भारी हो जाएगा। तू थोड़ा घूम-फिर आ, मैं तब तक यह पत्रिका पढ़ रहा हूँ, सुन्दर कहानी है।"

"अच्छा, मैं जाती हूँ, जल्दी ही आ जाऊँगी। आकर आपसे कहानी सुनूँगी।"

मनोरमा अकेले घूमने चल दी। एक घंटे में ही मनोरमा घर लौट आई और पिता के पास आकर बोली, "कैसी कहानी थी बाबा? समाप्त हो गई? किसने लिखी है?"

परन्तु बात मुँह से निकलने के बाद ही वह चौंक पड़ी, क्योंकि पिता के सामने शिवनाथ बैठा था।

"किधर घूम आईं?" शिवनाथ ने नमस्कार करते हुए पूछा।

मनोरमा ने केवल नमस्कार के बदले में सिर हिलाया और उसकी ओर पूरी तरह से पीठ करके पिता से कहा, "कहानी पूरी पढ़ चुके बाबा? कैसी लगी?"

"पूरी नहीं पढ़ सका।"

बेटी ने कहा, "तो मैं ले जाऊँ पत्रिका? पढ़कर अभी आपको वापस दे जाऊँगी।" इतना कहकर वह पत्रिका हाथ में लेकर चल दी। परन्तु अपने सोने के कमरे में आकर वह निस्पंद बैठी रही। कपड़े बदलना, हाथ-मुँह धोना आदि सब यूँही पड़ा रहा। पत्रिका को एक बार खोलकर भी नहीं देखा कि कौन-सी कहानी है, किसने लिखी अथवा कैसी लिखी है।

इस प्रकार बैठी-बैठी वह न जाने क्या-क्या सोचती रही। कुछ देर बाद नौकर को सामने से जाते देख उससे पूछा, "अरे, बाबा के कमरे से वह आदमी चला गया क्या?"

बैरा ने कहा, "जी हाँ।"

"कब गया वह?"

"बूँदाबाँदी होने से पहले ही चला गया।"

खिड़की का परदा हटाकर मनोरमा ने देखा तो वर्षा फिर शुरू हो गई है, पर अधिक नहीं। परन्तु पश्चिम के घनघोर बादल इस बात की सूचना दे रहे हैं कि रात को मूसलाधार पानी पड़ेगा। पत्रिका हाथ में लिए पिता की बैठक में जाकर देखा कि वे मौन बैठे हैं। पत्रिका उनकी आरामकुर्सी

के हथेले पर धीरे से रखकर बोली, "बाबा, तुम तो जानते हो, यह सब मुझे अच्छा नहीं लगता।" मनोरमा पास की चौकी पर बैठकर बोली।

आशु बाबू ने मुँह उठाकर कहा, "क्या सब बेटी ?"

मनोरमा ने कहा, "तुम ठीक समझते हो कि मैं क्या कह रही हूँ। गुणी का आदर करना मैं कभी कम नहीं जानती बाबा, लेकिन शिवनाथ बाबू जैसे एक दुष्ट चरित्रहीन शराबी को क्या समझकर आप प्रोत्साहन दे रहे हो ?"

एकबारगी आशु बाबू लज्जा और संकोच से पीले पड़ गए। कमरे के एक कोने में टेबिल पर बहुत-सी पुस्तकों का ढेर पड़ा था, उस ओर संकेत करके वे केवल इतना कह सके, "वे हैं न अभी—"

उधर मुँह फेरकर मनोरमा ने देखा तो शिवनाथ टेबिल के पास खड़ा हुआ कोई किताब ढूँढ़ रहा है। नौकर ने गलत सूचना दी थी। शिवनाथ ने वहाँ आकर कहा, "किताब मुझे मिली नहीं आशु बाबू। तो अब चला।"

आशु बाबू संकोच से बोले, "बाहर जो पानी बरस रहा है।"

शिवनाथ ने कहा, "बरसने दीजिए। अधिक नहीं है।"

जाते-जाते वह रुककर खड़ा हो गया और मनोरमा को सम्बोधन करके बोला, "मैंने अचानक सुन लिया है। यह मेरा दुर्भाग्य भी है और सौभाग्य भी। आप लज्जित न हों। ऐसी बातें सुननी पड़ती हैं। फिर भी मैं निश्चित रूप से जानता हूँ कि बातें मेरे सम्बन्ध में कही जाने पर भी मुझे सुनाकर नहीं की गईं। इतनी हृदयहीन आप नहीं।"

वह फिर बोला, "परन्तु मेरी एक और शिकायत है। उस दिन अक्षय बाबू इत्यादि प्रोफेसरों ने मेरे विरुद्ध कहा कि मैं किसी विशेष कारण से इस घर से घनिष्ठता बढ़ाने का प्रयत्न कर रहा हूँ। परन्तु यह गलत है। आप लोगों में प्रवेश करने का कोई रहस्य उस दिन भी मेरा नहीं और आज भी नहीं है।" फिर आशु बाबू को लक्ष्य करके कहा, "मेरा गाना आपको प्रिय है—मेरा घर अधिक दूर नहीं है, यदि कभी सुनने की इच्छा हो तो वहाँ आइये, मुझे प्रसन्नता होगी।"

शिवनाथ नमस्कार करके चला गया। पिता या मनोरमा कोई भी उत्तर न दे सके। बाहर वर्षा जोर से हो रही थी; यह बात भी वह कह

न सके कि शिवनाथ बाबू, जरा ठहरकर जाइये, बाहर तेज वर्षा हो रही है।

"तुम्हारी चाय क्या यहीं बना दूँ बाबा?" इसी समय चाय लेकर नौकर आ गया।

"नहीं, मेरी इच्छा नहीं, शिवनाथ बाबू ने चाय पीने को कहा था।" आशु बाबू बोले।

मनोरमा ने नौकर को चाय वापस ले जाने को कहा। मन की वाचालता के कारण आशु बाबू दर्द होते हुए भी टहलने लगे। सहसा वे खिड़की के पास खड़े हो गए और एक क्षण ध्यान से देखकर बोले, "उस पेड़ के नीचे शायद शिवनाथ ही तो है न? जा नहीं सका, पर साथ में कोई स्त्री भी है और वह भी बेचारी भीगी जा रही है।"

उन्होंने नौकर को बुलाकर पूछा, "जदू, देख तो गेट के पास पेड़ के नीचे खड़े कौन भीग रहे हैं? जो बाबू अभी-अभी यहाँ से गए हैं, वही हैं न—? परन्तु ठहर—"

बात रुक गई, मन में संदेह उत्पन्न हुआ—वह स्त्री शिवनाथ की स्त्री तो है नहीं?

"बाबा, शिवनाथ बाबू को जाकर बुला ही लावें न? वे चाय पीना चाहते थे। यदि मैं ऐसा जानती तो उसे जाने नहीं देती।" मनोरमा ने कहा।

बेटी की बात के उत्तर में आशु बाबू बोले, "सो तो ठीक है मणि, परन्तु मुझे यह भय है कि वह स्त्री जो साथ खड़ी है, शायद उसकी वही स्त्री हो।"

मनोरमा ने यह बात सुनकर नौकर से कहा, "जदू, जाकर उन दोनों को बुला आओ। शिवनाथ बाबू यदि पूछें कि किसने बुलाया है तो मेरा नाम बता देना।"

"मणि, यह काम शायद ठीक नहीं हुआ।" नौकर के जाने पर पिता बोले।

"क्यों बाबा?"

"शिवनाथ यों चाहे जैसा भी हो, परन्तु फिर भी उच्च शिक्षित है—उसकी और बात है पर उसके साथ इस औरत से परिचय करना ठीक नहीं

लगता? जाति का भेदभाव हम भले ही न मानें, पर भेद तो अवश्य है। नौकर-नौकरानियों के साथ तो समान वन्धुत्व नहीं किया जा सकता वेटी!" आशु वावू ने कहा।

"इसकी आवश्यकता नहीं है बाबा! संकट में मार्ग के राही को कुछ घंटों के लिए आश्रय दिया जाता है। हम केवल उतना ही करेंगे।" मनोरमा ने उत्तर दिया।

"बात केवल इतनी नहीं है। मैं यह नहीं समझ रहा हूँ कि उस स्त्री के आने पर तुम उसके साथ कैसा व्यवहार करोगी?" कुछ दुविधा में आशु बाबू बोले।

मनोरमा ने कहा, "क्या आपको मुझ पर विश्वास नहीं है वावा?"

आशु बाबू जरा सूखी हँसी हँसकर बोले, "है, परन्तु फिर भी वात कुछ समझ में नहीं आ रही। समान महिलाओं के साथ कैसा व्यवहार किया जाता है, यह वहुत कम लड़कियाँ जानती हैं। शिवनाथ पर मैं स्नेह करता हूँ, उसके गुणों के कारण—भाग्य की वात है कि आज व्यर्थ इतने लाँछन सह रहा है, फिर घर में बुलाकर मैं उसे और दुखी करना नहीं चाहता।"

"अच्छा बावूजी, वैसा ही होगा।" इसे अपने प्रति शिकायत मानकर मनोरमा बोली।

आशु वावू ने हँसकर कहा, "होना सरल नहीं वेटी! क्योंकि मेरे मन पर भी इसकी स्पष्ट छाया नहीं रही कि उसके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए। केवल यही इच्छा है कि शिवनाथ अब हमारे द्वारा और अधिक प्रताड़ित न हो।"

"अच्छा! लो, ये आ ही गए।" सकपकाती-सी मनोरमा बोली।

"खूब शिवनाथ बावू, भीगकर तो बिलकुल—" आशु बावू खड़े होकर वाहर आ गए।

शिवनाथ ने कहा, "हाँ, अचानक पानी जोर का आ गया और मुझसे भी अधिक ये भीगी है।" साथ की स्त्री की ओर संकेत किया।

उस स्त्री के सारे कपड़े भीगकर भारी हो गए थे, माथे के काले वालों से पानी की धारा आकर बह रही थी—पिता और पुत्री इस स्त्री का मुख देखकर विस्मय में दंग रह गए। आशु बाबू कवि नहीं हैं, परन्तु ऐसा लगा

कि ऐसे ही नारी रूप की प्राचीन काल के कवि 'शिशर-द्यौत पद्म' के साथ शायद तुलना कर गए हैं। जगत् में इतनी सच्ची तुलना शायद और न मिले। उस दिन अक्षय के प्रश्न के उत्तर में शिवनाथ ने कह दिया था कि उन्होंने शिक्षिता होने के कारण नहीं, रूप के कारण विवाह किया है, तब किसी ने नहीं सोचा था कि इसमें कितना सत्य है? अब मौन होकर आशु बाबू शिवनाथ की इस बात को बार-बार याद करने लगे। उन्हें जान पड़ा कि यह नीति-सम्मत भले ही न हो, पति-पत्नी-सम्बन्ध की पवित्रता भी इसके बीच आवश्यक नहीं, परन्तु नर-नारी के नश्वर शरीर का अटल सत्य यहाँ प्रस्फुटित हुआ है और परम विस्मय की बात यह है कि जिस देश में रूप चुन लेने का कोई निर्धारित मार्ग नहीं, जिस देश में अपनी आँखों को बन्द करके औरों की आँखों पर ही निर्भर रहना पड़ता है। ऐसे अँधकार में इन दोनों की एक-दूसरे को सूचना कैसे मिली? इस भाव को एक क्षण में दूर करके बोले, "शिवनाथ बाबू, भीगे कपड़े बदल लीजिए। जदू! बाबू को बाथरूम में ले जाओ।"

शिवनाथ चले गए। अब मनोरमा को कठिनाई आई। युवती की उम्र लगभग मनोरमा के बराबर होगी, और भीगे कपड़े बदल डालने की उसे भी आवश्यकता थी। परन्तु उसके वंश और जन्म का परिचय उस दिन शिवनाथ के मुँह से सुना है, उससे मनोरमा को कुछ समझ नहीं आया कि वह क्या कहकर सम्बोधित करे। रूप उसमें चाहे कितना ही क्यों न हो, शिक्षा-संस्कारहीन नीच जाति की इस दासी कन्या को 'आओ' कहकर बुलाने में उसे संकोच मालूम हुआ, और 'आइए' कहने में तो उसे और भी घृणा मालूम दी।

सहसा स्वयं उसी युवती ने मनोरमा की ओर देखकर कहा, "मेरा भी सब-कुछ भीग गया है, एक धोती देनी होगी।" मनोरमा का भार हल्का हो गया।

"देती हूँ।" कहकर मनोरमा ने महरी को बुलाया और कहा, "इन्हें बाथरूम में ले जाकर जो कुछ चाहिए सो सब दे दो।"

उस स्त्री ने मनोरमा को ऊपर से नीचे तक कई बार देखकर कहा, "मुझे एक साफ धोबी की धुली धोती देने के लिए कह दीजिए।"

मनोरमा ने कहा, "सो ही देगी।"

स्त्री ने महरी से पूछा, "बाथरूम में साबुन है न?"

महरी ने कहा, "है।"

"लेकिन मैं किसी का बरता हुआ साबुन नहीं बरतती।"

पहले तो महरी को आश्चर्य हुआ। फिर बोली, "वहाँ पर साबुनों का बक्स पड़ा है और वह जीजी का अपना बाथरूम है। उनके साबुन में क्या खराबी है?"

"नहीं, यह मुझसे नहीं होगा, मुझे घिन मालूम होती है। नहीं पता हर एक का साबुन लगाने से बीमारी हो जाती है।"

एक क्षण के लिए मनोरमा का मुँह क्रोध से लाल हो गया परन्तु तुरन्त ही निर्मल हँसी से उसकी दोनों आँखें चमकने लगीं। हँसकर पूछा, "यह बात तुमने किससे सीखी?"

"किससे सीखूँगी? मुझे स्वयं मालूम है।" स्त्री ने कहा।

मनोरमा ने कहा, "सच! हमारी महरी को कुछ अच्छी बातें सिखला देना। वह बिलकुल मूर्ख है।" कहते-कहते उसे फिर हँसी आ गई।

"चलो पण्डितानीजी, साबुन-आबुन लगाकर पहले तैयार हो लो फिर तुम्हारे पास बैठकर बहुत-सी अच्छी बातें सीख लूँगी और तुम्हें गुरु बना लूँगी। दीदी, कौन हैं ये?" महरी हँसकर बोली।

मनोरमा ने हँसी दबाने के लिए मुँह दूसरी ओर फेर लिया।

चार

आशु बाबू की बेटी मनोरमा उनकी साथी, मंत्री और मित्र सब-कुछ थी। इसी से प्रायः अवसरों पर ऐसा वाद-विवाद दोनों में होने लगता था जो बहुत-से बुजुर्गों को खटकेगा; पर इन्हें नहीं खटकता था। बेटी को आशु बाबू कितना प्यार करते हैं यह इससे स्पष्ट है कि स्त्री-वियोग के बाद फिर से विवाह करने की मन में कल्पना भी नहीं कर सके। मित्रों से दुःख के साथ कहते थे कि "साढ़े तीन मन का मेरा भारी शरीर और वह भी पंगु, फिर

क्यों अधिक इसके लिए एक लड़की का सर्वनाश किया जाए भाई ! जिस दुःख से मणि की माँ की मृत्यु हुई है, उसे मैं ही जानता हूँ। मेरे लिए वही बहुत है।"

यह बात सुनकर मनोरमा को कष्ट होता, वह कहती, "बाबा, ऐसी बातें न किया करो। ताजमहल देखकर कितने ही व्यक्ति न जाने किसे-किसे याद करते हैं, लेकिन मुझे तुम्हारी और माँ की याद आती है। मेरी माँ स्वर्ग में क्या कष्ट सहकर गई है ?"

आशु बाबू कहते, "तू जब दस-बारह साल की बच्ची थी। एक के गले में दूसरे की माला गिरने की कहानी है तो केवल मैं जानता हूँ बिटिया।" तुरन्त उनकी आँखें भर आतीं।

आगरे में यों तो सबके साथ सम्बन्ध हो गए, परन्तु सबसे बढ़कर मित्रता हुई है अविनाश बाबू से। अविनाश सहिष्णु और संयत प्रकृति का व्यक्ति है। उसकी स्वाभाविक शान्ति और प्रसन्नता सहज ही सबकी श्रद्धा आकर्षित कर लेती थी; परन्तु आशु बाबू के मुग्ध होने का कारण कुछ और ही है। उनके समान उसने भी दूसरी बार विवाह नहीं किया और जीवन में अपनी स्त्री के चित्रों का ही सहारा ग्रहण किया है। आशु बाबू उससे कहते, "अविनाश बाबू, लोग हमारी प्रशंसा करते हैं। सोचते हैं हम लोगों में कैसा कठोर संयम है, मानो हमने कोई बड़ा कार्य कर डाला है। पर, मैं सोचता हूँ कि यह प्रश्न उठता ही कैसे है ? दूसरी बार विवाह करने वाले कर सकते हैं इसलिए करते हैं। उन्हें मैं दोष नहीं देता और न ही छोटा ही समझता हूँ। मैं कर ही नहीं सकता। मणि की माँ के स्थान पर और किसी को स्त्री-रूप में ग्रहण करना मेरे लिए कठिन ही नहीं, असम्भव है। इसको वे क्या जानें ? सत्य है न अविनाश बाबू ? अपने मन से पूछो जरा, बात ठीक है या नहीं ?"

अविनाश हँसकर कहता, "परन्तु मैं धन एकत्र नहीं कर सका हूँ आशु बाबू। मास्टरी से गुजर करता हूँ, समय भी नहीं मिलता और आयु भी ढल चुकी है---ऐसे में लड़की कौन दे सकता है भला।"

आशु बाबू प्रसन्न होकर कहते, "सच है अविनाश बाबू, सच है। मैं भी यही कहता हूँ कि साढ़े तीन मन का शरीर, पंगु, कब हार्टफेल हो जाए

पता नहीं, कौन लड़की देगा ? परन्तु जानता हूँ लड़की देने वालों की कमी नहीं, लेने वाला ही मर गया है ! हःहःहःहः—अविनाश भी मर चुका है और आशु भी।"—कहकर दोनों इतने वेग से हँसते कि कमरा ही गूंज जाता।

शाम को आशु वावू घूमने निकलते और अविनाश के मकान पर आकर उतर जाते। कहते, "शाम की ठंडी हवा मेरे लिए ठीक नहीं वेटी। लौटते समय मुझे अपने साथ ले लेना।"

मनोरमा हँसकर कहती, "ठंड कहाँ बाबा ? आज तो गरमी है।"

वावूजी कहते, "वूढ़ों के स्वास्थ्य के लिए गरम हवा भी तो हानिकारक है। तुम घूम आओ, हम दोनों तव तक गप्प लगाएँगे।"

मनोरमा हँसकर कहती, "गप्पें तुम लोग दो-चार छोड़, दो-चार सौ करो, मुझे उसमें कोई आपत्ति नहीं, परन्तु तुम दोनों में से कोई अभी बूढ़ा नहीं, सो मैं कहे जाती हूँ।" वस, वह वहाँ से घूमने चली जाती।

आशु वावू से गठिया के कारण जिस दिन आया नहीं जाता, उस दिन अविनाश को जाना पड़ता। गाड़ी भेजकर, आदमी भेजकर चाय का निमंत्रण देकर—जैसे भी वनता आशु वावू का अनिवार्य अनुरोध उनके पास पहुँचता और वे उसे किसी भी प्रकार नहीं टालते थे। दोनों के इकट्ठे होने पर और वातों के साथ शिवनाथ का भी प्रायः जिक्र छिड़ जाता। इसका दुःख आशु वावू के मन से दूर नहीं होता था कि उस दिन उसे निमन्त्रण देकर बुलाया और सवने मिलकर उसे अपमानित करके विदा कर दिया।

शिवनाथ विद्वान् है, गुणी है, उसका सारा शरीर यौवन, स्वास्थ्य और सौन्दर्य से भरा हुआ है—यह सब क्या कुछ भी नहीं ? तो फिर किस वास्ते इतनी सम्पदा भगवान् ने उसे दोनों हाथों से उठाकर दे दी ? क्या इसीलिए एक मनुष्य को समाज से उठाकर दूर फेंक दिया जाय ? शरावी हो गया है, तो इससे क्या ?

आदमी की भूलें और अपराधों पर ध्यान की अपेक्षा उसे क्षमा करने की ओर उनके हृदय का झुकाव अधिक होता था और इसीलिए वे अविनाश के साथ प्रायः हर बात पर तर्क किया करते। प्रकट रूप से शिवनाथ को निमन्त्रण देने का अब उन्हें साहस नहीं होता, किन्तु मन उनका हमेशा उसकी संगत के लिए तड़पा करता। अविनाश को केवल एक बात का उनसे कोई उत्तर

देते नहीं बनता कि वह जो एक बीमार स्त्री को छोड़कर दूसरी स्त्री घर में ले आया है, सो क्यों लाया।

आशु बाबू लज्जित होकर कहते, "यही तो सोचता हूँ कि शिवनाथ जैसा आदमी यह काम कर कैसे सका ? लेकिन क्या जानें अविनाश बाबू, शायद भीतर कोई रहस्य हो सकता है—और—सभी बातें क्या सबके आगे कही जा सकती हैं या कहना उचित है ?"

अविनाश कहता, "मगर उसकी पत्नी निर्दोष है, यह तो उसने स्वयं ही स्वीकार कर लिया।"

आशु बाबू गरदन हिलाकर बोले, "सो तो किया है।"

अविनाश कहता, "और यह जो मरे हुए मित्र की विधवा को धोखा देना, सारे व्यवसाय को अपना बताकर उस पर अधिकार कर लेना—यह क्या है ?"

आशु बाबू मारे शर्म के गड़ जाते और अपराधी के समान कहते, "लेकिन अविनाश बाबू, शायद इसमें कुछ रहस्य हो, फिर कचहरी ने डिग्री देते समय क्या कुछ विचार नहीं किया होगा ?"

"अदालत की बात छोड़िये आशु बाबू ! आप स्वयं जमींदार हैं—बलवान के सामने दुर्बल जीत ही नहीं सकता।"

"नहीं, यह बात सच नहीं। परन्तु आपकी बात एकदम झूठ नहीं है। लेकिन सच यह है न !" आशु बाबू कहते।

"सच बात सब जानते हैं। बाबूजी, तुम स्वयं भी मन में जानते हो कि अविनाश बाबू व्यर्थ तर्क नहीं करते।" अचानक मनोरमा बीच में आकर कहती।

इसके पश्चात् आशु बाबू चुप हो जाते और कुछ न कह पाते।

शिवनाथ के विषय में मनोरमा की विमुखता सबसे अधिक थी। मुँह से वह अधिक नहीं कहती थी, पर पिता उसी से भयभीत रहते थे।

जिस दिन शाम को शिवनाथ और उसकी पत्नी ने पानी में भीगकर इस घर में आश्रय लिया था उसके बाद दो दिन तक आशु बाबू गठिया के कोप से एकदम खाट पकड़े रहे। न तो वे कहीं जा ही सके और न अविनाश ही उनके पास आ सके। परन्तु उनके आते ही आशु बाबू दर्द को भूलकर

आरामकुर्सी पर सीधे बैठकर बोले, "अविनाश बाबू ! शिवनाथ की पत्नी के साथ तो हमारा अचानक परिचय हो गया। लड़की बिलकुल लक्ष्मी है। ऐसा रूप कभी नहीं देखा। मालूम हुआ, जैसे उन दोनों को भगवान् ने किसी मुख्य उद्देश्य से ही बनाया।"

"कहते क्या हैं?"

"हाँ, हाँ। दोनों को बराबर खड़ा कर दो, तो बस देखते रह जाओगे। आप आँखें हटा नहीं सकते, इतना मैं दावे से कह सकता हूँ।"

"हो सकता है। लेकिन आप प्रशंसा करने में भी तो कंजूसी नहीं करते हैं।" अविनाश हँसते हुए बोले।

क्षण-भर आशु बाबू उनके मुँह की ओर देखते रहे। फिर बोले, "यह दोष मुझमें है। परन्तु इन दोनों के बारे में जितना भी कहा जाये, उतना ही कम है।"

अविनाश ने इस पर पूरा विश्वास तो नहीं किया, परन्तु पहले जैसी उसकी मुद्रा भी अब नहीं थी। बोले, "तब फिर उस दिन शिवनाथ ने अकारण अभिमान नहीं किया। और हाँ ! आपका परिचय किस प्रकार हुआ?"

आशु बाबू ने कहा, "संयोग ही था। शिवनाथ कुछ काम से मेरे पास आया। पत्नी साथ थी; पर उसे भीतर लाने का उसका साहस नहीं हुआ। बाहर एक पेड़ के नीचे उसे खड़ा कर आया; परन्तु दैव टेढ़ा हो तो आदमी क्या काम करे?" यह कहकर उन्होंने उस दिन की सारी घटना विस्तार के साथ कह सुनायी, "मणि खुश नहीं हो सकी। उसकी हम-उम्र ही थी, शायद कुछ बड़ी भी हो, अशिक्षिता, किसी दासी की पुत्री है। वह निस्संदेह हमारे शिष्ट-समाज की नहीं है।"

"यह कैसे जाना?" अविनाश ने आश्चर्य से पूछा।

आशु बाबू ने कहा, "उसने भीगी धोती के बदले साफ धुली धोती माँगी थी, और कहा था कि मैं किसी का प्रयोग में लाया हुआ साबुन नहीं लगा सकती—मुझे घिन मालूम होती है।"

अविनाश समझ नहीं सके कि इसमें सभ्य समाज के नियमों का उल्लंघन किस बात में हुआ।

आशु बाबू ने भी ठीक यही बात कही, "इसमें क्या बात असंगत हुई,

मैं नहीं समझ सका। मगर मणि कहती है, 'बाबूजी' कहने के ढंग में एक ऐसी बात थी जो बिना सुने नहीं जानी जा सकती। इसलिए सिवाय स्त्रियों के आँखों और कानों को कभी धोखा नहीं दिया जा सकता। हमारे यहाँ की महरी तक भी समझ गयी कि यह उसी की जाति की है, बिलकुल नीचे से यकायक एकदम ऊपर चढ़ा देने से जैसा होता है, इसे भी ठीक वैसा ही हुआ है।''

कुछ क्षण चुप रहकर अविनाश ने कहा, ''खेद की बात है। मगर आपके साथ परिचय हुआ किस प्रकार ? आपसे वह बोली थी क्या ?''

आशु बाबू ने कहा, ''अवश्य। भीगी धोती बदलकर सीधी मेरे सामने आकर बैठ गयी।—मेरी तबीयत कैसी है, क्या खाता हूँ, क्या इलाज चल रहा है, यह स्थान सुन्दर लग रहा है या नहीं—पूछने का क्या सहज स्वच्छन्द भाव था। बल्कि शिवनाथ कुछ संकुचित थे, परन्तु उसमें लज्जा का नाम तक नहीं था—न बातचीत में, न आचरण में।''

अविनाश ने पूछा, ''शायद मनोरमा तब न होगी ?''

''नहीं। उसे कुछ अश्रद्धा-सी हो गयी है। उन लोगों के चले जाने पर मैंने कहा, 'मणि, उन्हें विदा करने भी एक बार बाहर नहीं आयी ?'

मणि ने कहा, 'और जो कुछ कहो, कर सकती हूँ बाबा, लेकिन घर के नौकर-चाकर या दास-दासियों को बैठिये कहकर स्वागत नहीं कर सकती और, 'फिर आइयेगा' कहकर विदा भी नहीं दे सकती। अपने घर आने पर भी नहीं। इसके बाद और कहने को क्या रह जाता है।''

केवल मृदु स्वर से बोले, ''इतना बताना कठिन है आशु बाबू, पर मालूम होता है कि मनोरमा ने ठीक कहा था कि इन औरतों से घर की स्त्रियों की जान-पहचान न होना ही अच्छा है।''

आशु बाबू चुप रहे।

अविनाश कहने लगे, ''शिवनाथ के संकोच का कारण भी शायद यही है। उसे तो सभी बात मालूम है—उसे भय था कि कहीं कोई भद्दी, न कहने योग्य बात उसकी पत्नी के मुँह से न निकल जाय।''

''हाँ, हो सकता है।'' आशु बाबू ने हँसकर कहा।

''अवश्य यही बात है।''

इसका विरोध आशु बाबू ने नहीं किया, केवल कहा, "लड़की लेकिन लक्ष्मी की प्रतिमा थी।" कहकर वे आरामकुर्सी से पीठ लगाकर लेट रहे।

अविनाश बाबू बोले, "मेरी बात से आपको क्या कष्ट हुआ?"

आशु बाबू धीरे-धीरे बोले, "कष्ट नहीं, पर न जाने कैसी एक व्यथा-सी मालूम हुई। इसी से तो आपसे मिलने के लिए इस प्रकार तड़फड़ा रहा था। बातें भी कैसी मीठी थीं उसकी—केवल रूप ही नहीं।"

"मगर मैंने न तो उनका रूप ही देखा और न बातें सुनीं आशु बाबू!" अविनाश बाबू हँसकर बोले।

आशु बाबू ने कहा, "पर वैसा अवसर आने पर आप समझ जायेंगे कि उन्हें त्याग देने में कितना अन्याय हुआ? जाते समय उस लड़की ने मुझसे कहा, जब आप मेरे पति का गाना पसन्द करते हैं, तब जब जी चाहे उन्हें बुलवा लें। इस बात को आप भूल जायें कि मैं कौन हूँ। मैं तो आप लोगों के बीच आने का दम नहीं भरती।"

"यह तो अशिक्षितों जैसी बात नहीं आशु बाबू। उसके निज के सम्बन्ध में हम जो कुछ भी विचारें, पर पति को वह सभ्य समाज में सम्मानित देखना चाहती है।" विस्मय से अविनाश बाबू बोले।

"वास्तव में उसकी बातों से ज्ञात हुआ कि हम लोगों ने जो उस दिन उसके पति को अपमानित करके विदा किया था उस बात को शिवनाथ ने बता दिया। शिवनाथ अधिक छिपाने वाला आदमी नहीं।" आशु बाबू ने कहा।

"ठीक है, परन्तु एक चीज उसने अवश्य छिपायी है। यह लड़की चाहे जो हो, इससे उसने वास्तव में विवाह नहीं किया है।" अविनाश बाबू बोले।

"शिवनाथ ने तो बताया है वह तो उसकी पत्नी है और उसने भी ऐसा ही परिचय दिया कि वह उसका पति है।" आशु बाबू ने कहा।

अविनाश ने कहा, "परिचय दिया करें, परन्तु यह सच नहीं है। इसके भीतर जो गहरा रहस्य है, एक दिन अक्षय बाबू उसे अवश्य खोल देंगे।"

आशु बाबू ने कहा, "इसमें तो मुझे भ्रम नहीं। अक्षय बाबू शक्तिशाली पुरुष हैं। इनकी परस्पर की स्वीकारोक्ति में सत्य नहीं। सत्य केवल छद्म रहस्य को संसार के सामने खोल देने का है। आप तो अक्षय नहीं हैं।

अविनाश बाबू ! आपसे मैं ऐसी आशा भी नहीं करता।"

"परन्तु समाज में भी तो है। उसकी भलाई के लिए भी तो—" अविनाश बाबू ने लजाकर कहा।

सहसा मनोरमा ने वहाँ प्रवेश किया। अविनाश को नमस्कार करके उसने कहा, "बाबा, मैं घूमने जा रही हूँ, आप शायद आज बाहर नहीं निकल सकेंगे ?"

अविनाश उठकर बोले, "मुझे भी आज कुछ काम है। जरा बाजार के पास उतार दोगी मनोरमा ?"

"अवश्य, चलिये।"

अविनाश ने जाते-जाते यह कहा, "बहुत आवश्यक काम से कल दिल्ली जा रहा हूँ। शायद एक सप्ताह के बाद लौट पाऊँगा।"

पाँच

अविनाश लगभग दस दिन बाद दिल्ली से लौटे। घर आते ही जगत ने एक चिट्ठी दी जिसमें यह चार अक्षर लिखे थे—"शाम को अवश्य आइए, आशु।"

जगत की विधवा मौसी ने दरवाजे के परदे को हटाकर खिले हुए गुलाब जैसा मुँह निकालकर कहा, "आशु बाबू के घर वाले क्या आँखें बिछाये ही बैठे थे जो घर में आते-आते ही बुला लिया !"

अविनाश ने कहा, "शायद कोई विशेष काम हो।"

"खाक काम है ! वे लोग तो आपको निगल ही जाना चाहते हैं।"

अविनाश अपनी छोटी साली को लाड़ से कभी 'छोटी बहू' कहते हैं और कभी उनका नाम 'नीलिमा' लेकर पुकारते हैं। हँसकर बोले, "छोटी बहू, अमृतफल अनारदाने के साथ पेड़-तले पड़ा हो तो सबका मन ललचाता है।"

नीलिमा हँसकर बोली, "तब तो यह बात उन लोगों को बता देनी चाहिए कि वह इन्द्रायण फल है, अमृतफल नहीं।"

"अच्छा, बता देना; पर वे विश्वास नहीं करेंगे, लोभ अधिक बढ़ जायेगा, हाथ बढ़ाने में भी कमी न रखेंगे।" अविनाश बोला।

"उससे लाभ न होगा मुखर्जी महाशय, सब लोगों की पहुँच के बाहर अबकी बार मजबूत-सा बेड़ा बनवा रखूँगी।" इतना कहकर नीलिमा हँसी दबाकर परदे की ओट में चली गयी।

जब आशु बाबू के घर अविनाश पहुँचे, तो थोड़ा-सा दिन शेष था। अति आदर के साथ उनका स्वागत हुआ और बनावटी क्रोध से आशु बाबू ने कहा, "आप धार्मिक हैं ! परदेश में मित्र को अकेला छोड़कर दस दिन से अनुपस्थित रहे, इस बीच में तो इस घाट की दसों दिशाएँ आकर उपस्थित हो गयीं। कुछ ध्यान भी है !"

"एकदम दस दिशाएँ ? पहले पहली तो बताइये।"

"बताता हूँ। पहली दिशा तो यह है कि दोनों ने बड़ी तेजी से ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर आना-जाना प्रारम्भ कर दिया।"

"डराने वाली बात हुई। दूसरी का अब वर्णन कीजिये।"

"दूसरी यह कि आज किसी पर्व के उपलक्ष्य में भारतीय नारी-कुल यमुना के घाट पर इकट्ठा हुआ है और हरेन्द्र-अक्षय आदि पण्डित-समाज ने वहाँ अभी-अभी प्रस्थान किया है।"

"अच्छा ठीक है। तीसरी दिशा का समाचार सुनाइये।"

"दर्शन के इच्छुक आशुतोष अत्यन्त बेचैनी से अविनाश की प्रतीक्षा कर रहा है, प्रार्थना अस्वीकार न करें।"

अविनाश ने हँसते हुए कहा, "उन्होंने प्रार्थना स्वीकार कर ली। अब चौथी दिशा का वर्णन कीजिये।"

आशु बाबू ने कहा, "यह जरा गम्भीर है। चिरञ्जीव महोदय ने विलायत से भारत में पदार्पण किया है और वे काशी होते हुए परसों इसी आगरा में पधारे हैं। इच्छा है, पहली चाँदनी रात में सब एक साथ आज ताजमहल की छटा का निरीक्षण करें।"

"ये चिरंजीवी कौन हैं आशु बाबू ? क्या इन्हीं की बात उस रोज कहते-कहते अचानक रुक गये थे ?" अविनाश बाबू ने पूछा।

आशु बाबू ने कहा, "हाँ, परन्तु आज कहने में कोई बाधा नहीं।

मेरे भावी जमाई अजितकुमार हैं। इन दोनों का प्रेम संसार की एक अपूर्व वस्तु है। लड़का क्या है, रत्न है। हम ब्रह्मसमाजी नहीं, सनातनी हैं। चार साल पहले इन दोनों के ब्याह हो जाने की बात थी परन्तु नहीं हुआ। इन दोनों का जिस तरह परिचय हुआ वह भी एक विचित्र घटना है—भाग्य की बात कहें तो अत्युक्ति न होगी। अभी उसे रहने दीजिये।"

अविनाश पूर्ववत् शांत बैठे रहे।

आशु बाबू फिर बोले, "मणि तेल चढ़ चुकी थी कि इतने में रात की गाड़ी से काशी से छोटे काका आ पहुँचे। पिता की मृत्यु के बाद वे ही घर के बड़े थे, बाल-बच्चा कोई था नहीं, काकी को लेकर बहुत दिनों से काशी-वास कर रहे थे। ज्योतिष पर बड़ा अखंड विश्वास था। आकर बोले, 'यह ब्याह अभी हो ही नहीं सकता। उन्होंने स्वयं तथा और पण्डितों से गणना कराकर देखी है कि इस विवाह के होने से तीन साल तीन महीने के भीतर ही मणि विधवा हो जायेगी।'

घर में भारी हँगामा मच गया। मैं काका को खूब जानता था कि इसमें जरा भी इधर-उधर नहीं होने का। अजित स्वयं एक बड़े घर का लड़का है। उसके एक विधवा काकी के सिवाय और कोई न था, वे भी बहुत अप्रसन्न हुईं। अजित मारे दुःख और लज्जा के इंजीनियरिंग पढ़ने विलायत चला गया और सबने जान लिया कि अब यह रिश्ता टूट गया।"

अविनाश ने रुकी साँस छोड़कर पूछा, "फिर?"

आशु बाबू ने कहा, "हम सब हताश हो गये, पर मणि ने आशा नहीं छोड़ी। मुझसे आकर बोली, 'बाबा, ऐसी क्या बड़ी बात है कि जिसके लिए तुमने खाना-पीना-सोना छोड़ दिया है। तीन साल ऐसा क्या बड़ा समय है।'

मैंने कहा, 'बेटी, तेरी बात ठीक हो, पर इन सब बातों में तीन साल तो क्या, तीन दिन की रोक भी बुरी होती है।'

मणि ने हंसकर कहा, 'आपको डरने की जरूरत नहीं बाबा, मैं उन्हें पहचानती हूँ। अजित सात्विक प्रकृति का आदमी है, उसे भगवान् पर अटल विश्वास है।' वह जाते समय मणि को एक छोटी चिट्ठी लिखकर चला गया। इन चार सालों में फिर उसने कोई चिट्ठी ही नहीं लिखी। न सही, पर मन-ही-मन मणि सब जानती थी, और तब से उसने ब्रह्मचारिणी का जीवन ग्रहण

कर लिया। बाहर से कोई कुछ समझ ही नहीं सकता था। ठीक है न अविनाश बाबू ?''

''हाँ, वास्तव में नहीं समझ सकता। मैं आशीर्वाद देता हूँ कि ये लोग जीवन में सुखी हों।'' अविनाश ने श्रद्धा से कहा।

आशु बाबू ने बेटी की ओर से मानो सिर झुकाकर कृतज्ञता प्रकट की और कहा, ''ब्राह्मण का आशीर्वाद निष्फल नहीं होगा। अजित सबसे पहले चाचा के पास गया था। उन्होंने आज्ञा दे दी है। नहीं तो, यहाँ शायद वह आता ही नहीं।''

कुछ देर चुप रहकर आशु बाबू फिर बोले, ''अजित के विलायत जाने पर दो साल तक कोई समाचार नहीं आया, तब मैंने भीतर-ही-भीतर वर की खोज की, परन्तु मणि को मालूम हो गया और उसने कहा, 'बाबा, यह प्रयत्न मत करो। मेरा तुमने प्रकट रूप से विवाह भले न किया हो, पर मन से कर दिया था।' लड़की की आँखों में पानी भर आया। वह पुनः बोली, 'नहीं बाबा, मेरे भाग्य में विधाता ने जो लिखा है उसे मैं सह सकूं, यही बहुत है, मुझ और कोई आज्ञा मत देना।'

मैंने आँसू पोंछकर कहा, 'अपराध हुआ बेटी, मुझे क्षमा करो।' ''

उनका कण्ठ पूर्व स्मृति से रुद्ध हो गया। अविनाश स्वयं भी कुछ देर चुप रहे। उसके पश्चात् धीरे से बोले, ''आशु बाबू, संसार में हम लोग न जाने कितनी गलतियाँ करते हैं और न जाने कितनी धारणाएँ मन में स्थापित कर बैठते हैं।''

''कैसी ?'' आशु बाबू ने कहा।

''जैसे बहुत-से समझते हैं कि लड़कियाँ उच्च शिक्षा पाकर मेम बन जाती हैं। हिन्दू-संस्कृति के लिए उनके हृदय में स्थान नहीं रहता। कितना बड़ा भ्रम है।''

''भ्रम बहुतेरी जगह होता अवश्य है, परन्तु अविनाश बाबू, शिक्षा और अशिक्षा नहीं, वास्तविक वस्तु है प्राप्त करना। इसी पर सब बातें निर्भर हैं, नहीं तो एक का अपराध दूसरे पर थोपने से कठिनाई होती है।—लो, आ गये अजित। मणि कहाँ है ?''

तीस साल का एक सुन्दर बलिष्ठ युवक कमरे में आया। उसके कपड़ों

पर काले दाग लगे थे। उसने कहा, "मणि अब तक मेरी सहायता कर रही थी। उसके कपड़ों में दाग लग गये हैं, कपड़े बदलने गयी है। मोटर ठीक हो गयी है। शोफर को सामने लाकर खड़ी करने को कह दिया है।"

आशु बाबू ने कहा, "अजित, ये मेरे परम मित्र हैं। अविनाश मुख्योपाध्याय। यहाँ कालेज के प्रोफेसर हैं। प्रणाम करो।"

युवक ने पाँव छूकर प्रणाम किया।

फिर खड़े होकर आशु बाबू को लक्ष्य करके कहा, "मणि के आने में पाँच मिनट से अधिक देर न लगेगी। आप जरा शीघ्र ही तैयार हो लीजिये। देर होने पर सब-कुछ देखने को समय नहीं मिलेगा। लोग कहते हैं, ताजमहल देखते-देखते जी नहीं भरता।"

आशु बाबू ने कहा, "जी न भरने की वस्तु ही है बेटा, पर हम लोग तो तैयार बैठे हैं। तुम्हीं लोगों की देर है, कपड़े बदलने हैं ना।"

युवक ने हँसकर कहा, "सो रहने दीजिये, यह तो हमारा पेशा है। कपड़ों पर कालिख लगने से हमारा कोई मान नहीं घटता।"

बात सुनकर आशु और अविनाश युवक की सरलता पर मुग्ध हो गये।

मणि आ पहुँची। सहसा उसकी ओर देखकर अविनाश चौंक उठे। कई दिनों से उन्होंने उसे नहीं देखा था, और इस बीच में ही यह आनंद की घटना हुई। उसके पिता के मुँह से जो बात सुनी थी उससे उन्होंने समझा था कि मनोरमा के मुख पर आज वह ऐसी कोई बात देखेंगे जो विशेष होगी, परन्तु वहाँ थे सीधे-सादे वस्त्र, छिपा हुआ आनन्द कहीं से आत्मा पर झलकता नहीं दिखायी दिया, बल्कि कालास की एक छाया ही आँखों में विद्यमान थी। अविनाश को ऐसा जान पड़ा कि पितृ-स्नेहवश शायद आशु बाबू ने अपनी कन्या को गलत समझा है, या किसी दिन जो सत्य था वह आज झूठ है।

थोड़ी देर बाद मोटर में बैठकर सब चल दिये। यमुना के घाट-घाट पर पुण्य-प्रेरित नारियों और रूप-प्रेरित पुरुषों की भीड़ तब तक कुछ कम हो चुकी थी। जब वे संसार-प्रसिद्ध सौंदर्य की प्रतिमा ताजमहल के द्वार के सामने पहुँचे, तब दिन ढल चुका था।

यमुना-तट का सुन्दर दृश्य देख-भालकर अक्षय का दल पहले से ही

वहाँ पहुँच गया था। ताज उन लोगों ने इतनी वार देखा है कि देखते-देखते अरुचि हो गयी है, इसी से ऊपर न जाकर नीचे बाग में एक किनारे ही बैठ गये थे। इन लोगों का सबने स्वागत किया। आशु बाबू अपनी भारी-भरकम देह को घास पर रखते हुए बोले, "राम रे! अब जी में जी आया। अब जितना जी चाहे मुमताज वेगम की कब्र से आनंद प्राप्त करें।" आशु वैद्य यहीं से वेगम साहिवा को प्रकट करते हैं। उससे अधिक और कुछ वश का नहीं।

मनोरमा ने क्षुब्ध कंठ से कहा, "यह नहीं होगा बाबूजी! तुम्हें अकेला छोड़कर कोई भी हममें से वहाँ नहीं जायेगा।"

"तुम्हारे बूढ़े बाप को कोई चुरा नहीं ले जायेगा बेटी!" आशु बाबू हँसकर बोले।

अविनाश ने कहा, "इसका भय तो नहीं। क्रेन और लोहे की जंजीर लाये बिना वह उठा ही भला कैसे सकेगा?"

"मेरे बाबूजी आप लोगों की दृष्टि में यहाँ इतने दुर्वल हो गये हैं।" मनोरमा ने कहा।

"यदि यह हुआ है तो हम लोगों से अन्याय हुआ है।" अविनाश ने कहा।

सब कोई हँस दिये। मनोरमा ने कहा, "सो बिलकुल नहीं होगा बाबूजी, तुम्हें साथ-साथ चलना होगा। तुम्हारी आँखों से देखे बिना इस चीज का आधा सौंदर्य ढका ही रह जायेगा। कोई कितनी ही बातें क्यों न बतावे, तुमसे अधिक तत्त्व की बातें और कोई नहीं जानता।"

इतने में सहसा सबने ताज के पूर्व की ओर से घूमकर अचानक शिवनाथ और उसकी स्त्री को आते देखा। शिवनाथ बचकर जाना ही चाहता था। उसकी स्त्री दृष्टि आकर्षित करके प्रसन्नता से बोली, "आशु बाबू और उनकी लड़की भी आई है, देखो तो सही।"

आशु बाबू ने जोर की आवाज लगाकर उन्हें पुकारा, "आप लोग कब आये शिवनाथ बाबू? इधर आइये न।"

शिवनाथ पत्नी के साथ पास आ खड़ा हुआ। आशु बाबू ने उनका परिचय देकर कहा, "ये हैं शिवनाथ की पत्नी। नाम मैं नहीं जानता।"

"मेरा नाम है कमल। मुझे 'आप' न कहें आशु बाबू।"

"कहना उचित भी नहीं है कमल! ये लोग मेरे मित्र हैं, तुम्हारे पति के भी परिचित हैं। बैठो।"

अजित की ओर संकेत करके कमल ने कहा, "मगर इनका परिचय तो दिया ही नहीं आपने?"

आशु बाबू ने कहा—"अभी दूंगा। ये मेरे परम आत्मीय हैं। नाम अजितकुमार है। कुछ ही दिन हुए, विलायत से लौटकर हम लोगों से मिलने आये हैं। कमल, आज तुमने पहले-पहल ताजमहल देखा है?"

कमल ने कहा, "हाँ।"

आशु बाबू ने कहा, "तब तो तुम भाग्यशाली हो; पर अजित तुमसे भी भाग्यवान है, उसने अद्भुत चीज अभी तक देखी ही नहीं है। अब देखेगा। अच्छा कमल, देखकर कैसा लगा?"

कमल ने कहा, "आश्चर्य की चीज ही मालूम हुई।"

मनोरमा बोली नहीं। उससे परिचय है, इस बात का आभास भी उसके आचरण से प्रकट नहीं हुआ। उसने पिता से कहा, "शाम हुई आ रही है बाबा, अब उठो।"

"उठता हूँ बेटी।" आशु बाबू उठने का जरा भी प्रयत्न न करके बैठे ही रहे।

कमल जरा हँसी। फिर मनोरमा की ओर देखकर बोली, "इनकी तबीयत भी अच्छी नहीं है, और चढ़ना-उतरना भी आसान नहीं। हम लोग बैठे-बैठे बातें करें, आप लोग देख आइये।"

मनोरमा ने इस प्रस्ताव का उत्तर तक नहीं दिया, केवल पिता से ही कहा, "नहीं बाबा, ऐसा नहीं होने का। उठिए अब आप।"

परन्तु हुआ यह कि उठने का प्रयत्न किसी ने भी नहीं किया। इस अपरिचित रमणी के सामने वह निकट ही खड़ा हुआ संगमरमर का अव्यक्त आश्चर्य मानो एक क्षण में धुँधला-सा पड़ गया।

अविनाश की अन्यमनस्कता दूर हो गई। बोले, "इनके बिना चले काम न चलेगा। मनोरमा की धारणा है कि पिता की आँखों से देखे बिना ताज का आधा सौन्दर्य हृदयंगम नहीं किया जा सकता।"

कमल ने अपनी सरल आँखें उठाकर पूछा, "क्यों ?" फिर आशु बाबू से कहा, "आप शायद इस विषय के विशेषज्ञ हैं ?"

मनोरमा ने मन-ही-मन आश्चर्यचकित होकर सोचा कि इसकी बातें एक अशिक्षित दासी-कन्या जैसी तो मालूम नहीं होतीं !

आशु बाबू प्रसन्न होकर बोले, "मैं तो कुछ नहीं जानता। विशेषज्ञ तो हूँ ही नहीं और सौन्दर्य तत्त्व का सिर-पैर तक नहीं जानता। उस ओर से तो मैंने इसे देखा तक नहीं कमल। मैं देखता हूँ बादशाह शाहजहाँ को। मैं देखता हूँ उनके असीम दुःख को जो मानो इसके हर पत्थर के अंग-अंग में समाया हुआ है। मैं देखता हूँ उनके एकनिष्ठ पत्नी-प्रेम को जो इस स्वच्छ-सफेद स्मृति में चिरकाल के लिए अपनी प्रियतमा को संसार के सामने अमर कर गया है।"

कमल ने स्वाभाविक स्वर से कहा, "मगर उनकी तो और भी बहुत-सी बेगमें थीं। बादशाह को मुमताज पर जैसा प्रेम था, वैसा औरों पर भी था। हो सकता है कि उससे कुछ अधिक ही हो; एकनिष्ठ प्रेम तो उसे नहीं कहा जा सकता।"

इस वास्तविक वाक्य के गांभीर्य से सब चौंक उठे। आशु बाबू या और कोई उसका उत्तर न दे पाया।

कमल ने फिर कहा, "बादशाह कवि थे। वे अपनी शक्ति, सम्पदा और धैर्य से इतनी बड़ी विराट् सौन्दर्य की वस्तु बना गए हैं। मुमताज तो एक आकस्मिक उपलक्ष्य-मात्र थी। वह न होती तो भी ऐसा सुन्दर भवन वे किसी भी घटना को लेकर रचते। धर्म के नाम पर होता तो भी कोई हानि नहीं थी। और हजारों-लाखों आदमियों की हत्या करके दिग्विजय के उपलक्ष्य में भी हो सकता था। वह एकनिष्ठ प्रेम का दान नहीं है, यह तो बादशाह के निजी आनन्द-लोक का अक्षय-दान है। बस, यही हमारे लिए पर्याप्त है।"

आशु बाबू के हृदय पर चोट लगी। सिर हिलाकर बोले, "पर्याप्त नहीं कमल, यह सच है। तुम्हारी बात ही सच्चाई है। बादशाह के मन में एकनिष्ठ प्रेम यदि न था तो इस अनुपम यादगार का कोई स्थान नहीं। फिर वह चाहे जितनी बड़ी सौन्दर्य की सृष्टि क्यों न कर जाते, मनुष्य के हृदय में

वैसी श्रद्धा का आसन उनके लिए नहीं बन सकता था।"

कमल ने कहा, "यदि न बने तो वह मनुष्य की मूर्खता है। मैं नहीं कहती कि श्रद्धा का कोई मूल्य ही नहीं, पर जो मूल्य बरसों से लोग उसे देते आए हैं वह उसका मूल्य नहीं है। एक दिन जिससे प्रेम किया है फिर किसी दिन किसी भी कारण से उसमें परिवर्तन नहीं हो सकता? मन का यह अचल-अडिग जड़-धर्म न तो स्वार्थ है और न सुन्दर ही।"

यह सुनकर मनोरमा के आश्चर्य की सीमा न रही। मूर्ख दासी कहकर इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। इतने पुरुषों के सामने एक नारी के ही मुँह से निकली हुई इस प्रकार की खुली बातों ने उसे ठेस पहुँचाई। अब तक वह शांत थी, पर अब वह अपने को रोक न सकी। वह कठोर किन्तु दबी जबान से बोली, "मैं जानती हूँ ऐसी मनोवृत्ति और किसी की न सही, पर आपके लिए स्वाभाविक है। यह औरों की दृष्टि में न तो वह सुन्दर है और न अच्छा ही।"

आशु बाबू मन-ही-मन अत्यन्त क्षुब्ध होकर बोले, "छिः बेटी!"

कमल गुस्सा नहीं, वह हँसकर बोली, "प्राचीन संस्कार पर आघात लगने से आदमी सहसा सह नहीं सकता। आपने सच ही कहा है, हमारे निकट यह स्वाभाविक ही है, क्योंकि हमारे शरीर और मन में यौवन परि-पूर्ण है, जिस दिन जानूँगी कि आवश्यकता होने पर भी उसमें परिवर्तन की कोई शक्ति शेष नहीं रही, उस दिन समझ लूँगी कि उसकी समाप्ति हो चुकी है। वह मर चुका है।" कहकर ज्योंही उसने आँखें उठाईं त्योंही देखा कि अजित की आँखों से जैसे आग निकल रही है। पता नहीं वह दृष्टि मनोरमा ने देखी या नहीं, किन्तु वह बात के बीच में ही अचानक बोल उठी, "बाबा, अब दिन नहीं रहा। मुझसे जितना बनेगा, मैं अजित बाबू को कुछ थोड़ा दिखा लाती हूँ।"

अजित ने कहा, "चलो, हम लोग ही देख आवें।"

"अच्छी बात है, जाओ बेटी, हम लोग यहीं बैठे हैं लेकिन जरा शीघ्र ही लौट आना। न होगा तो कल फिर कुछ जल्दी आ जाएँगे।" आशु बाबू प्रसन्नता से बोले।

छः

सूर्य अस्त हो चुका था। अजित और मनोरमा 'ताज' देखकर लौट रहे थे। पर प्रकाश समाप्त नहीं हुआ था। सब गिरोह बाँधकर जमे थे, और तर्क जोर पकड़ गया था। अक्षय चुप बैठा उफन रहा था। अविनाश तेज निगाह से कमल की ओर देख रहे थे। समझ में आया कि वाद-विवाद दोनों में चालू है। कमल और शिवनाथ—इन दोनों ने भी मुँह उठाकर देखा, किन्तु आश्चर्य यह है कि एक की आँखों में जैसे शिखा-सी जल रही थी, दूसरे की दृष्टि वैसी ही क्लान्त और मलीन हो रही थी, मानो वह कुछ देख ही नहीं रहा है, न कुछ सुन ही रहा है। इस समूह में बैठा हुआ शिवनाथ जैसे न जाने कहाँ कितनी दूर चला गया है।

आशु बाबू ने कहा, "बैठो।" पर वे कहाँ बैठें और बैठें या नहीं, यह देखने का भी उन्हें अवकाश नहीं मिला।

अक्षय की विचारधारा तोड़ते हुए अविनाश ने कहा, "बादशाह शाहजहाँ का प्रसंग अभी रहने दो। उनके सम्बन्ध में विचार करने की आवश्यकता है और प्रश्न जटिल है। मगर प्रश्न जहाँ उस समय के संगमरमर के समान सफेद, पानी की तरह साफ, सूर्य के समान निर्मल और सीधा है—हमारे आशु बाबू का जीवन लीजिए, किसी दिशा में कोई कमी नहीं—लेकिन यह बात ये सोच ही न सके कि अपनी मृत पत्नी की जगह और किसी को लाकर बिठाया जा सकता है। बताइए, नर-नारी के प्रेम का यह कितना बड़ा आदर्श है! कितना ऊँचा!"

कमल कुछ कहना ही चाहती थी कि अचानक शिवनाथ ने कोमल शब्दों में कहा, "अब यह आलोचना बन्द करो।"

कमल ने पूछा, "क्यों?"

शिवनाथ ने केवल इतना कहा, "ऐसे ही कह रहा हूँ।"

कमल ने कहा, "अच्छा, ऐसे ही। तुम्हें घर चलने में देर हो रही है शायद? पर घर तो साथ में है।" और हँस दी।

आशु बाबू समझ गए, हरेन्द्र और अक्षय होंठों-ही-होंठों में मुस्कराए।

मनोरमा ने दूसरी ओर आँखें फेर लीं; किन्तु जिसको लक्ष्य करके यह बात कही गई थी, उस शिवनाथ के विस्मय-भरे सुन्दर चेहरे पर जरा भी परिवर्तन नहीं हुआ।

अविनाश ने कहा, "मेरे प्रश्न का उत्तर दो।"

कमल ने कहा, "पर पति की मनाही है, जो इनकी इच्छा के विरुद्ध चलना उचित नहीं।" यह कहकर वह हँसने लगी।

अविनाश से बिना हँसे न रहा गया। बोले, "इस विषय में अपराध नहीं। हम इतने आदमी मिलकर तुमसे अनुरोध कर रहे हैं, उत्तर दो !"

कमल ने कहा, "मैंने आशु बाबू को आज मिलाकर सिर्फ दो दिन देखा है पर इसी बीच में मन-ही-मन मैं उन्हें चाहने लगी हूँ।" फिर शिवनाथ की ओर संकेत करके कहा, "अब समझ में आया न, क्यों मुझे बोलने के लिए मना कर रहे थे।"

आशु बाबू बोले, "पर मेरी ओर से संकोच करना व्यर्थ है। बूढ़ा वैद्य बड़ा निरीह आदमी है कमल। दो दिन में तुमने उसे बहुत कुछ समझ लिया होगा, और दो दिन और देखोगी तो समझ आओगी कि उससे भय करना व्यर्थ है। तुम निर्भीक होकर कहो—ये सब बातें सुनने में आनन्द आता है।"

कमल ने कहा, "इसीलिए तो वे मना कर रहे थे, और इसीलिए अविनाश बाबू की बात का उत्तर देने में अब तक मैं चुप थी। वस्तुतः नर-नारी के प्रेम के व्यापार में न तो इसे बड़ी चीज समझती हूँ और न आदर्श ही मानती हूँ।"

अब अक्षय से चुप बैठा नहीं रहा गया। उसके प्रश्न के ढंग में व्यंग्य था, बोला, "सम्भव यही है कि आप लोग नहीं मानते; मगर क्या मानते हैं, कुछ बताएँगी क्या ?"

कमल बोली, "आशु बाबू कभी अपनी पत्नी से प्रेम करते थे। वह इस समय जीवित नहीं हैं। उन्हें अब न तो सुखी किया जा सकता है और न दुखी। वे हैं ही नहीं, प्रेम-पात्र का निशान तक मिट गया है। किसी दिन उन्हें प्रेम किया था, मन में यह केवल स्मृति रह गई है। मनुष्य की केवल स्मृति है। वर्तमान की अपेक्षा अतीत को शुभ सुखद जानकर जीवन बिताने में कौन-सा बड़ा आदर्श है, मेरी समझ में नहीं आता।"

आशु बाबू को कमल के मुँह से ऐसी बात सुनकर फिर आघात लगा, वे बोले, "हमारे देश की विधवाओं के हाथ में तो यही एक पूंजी रहती है। पति की स्मृति को लेकर ही तो विधवा जीवन की पवित्रता रखती है। इसे क्या तुम नहीं मानतीं ?"

"ना ! एक बड़ा नाम दे देने से ही तो कोई वस्तु विश्व में बड़ी नहीं होती, बल्कि यों कहिए कि इस देश में इसी प्रकार वैधव्य-जीवन बिताने की परंपरा है, इसे मैं मानती हूँ।" कमल ने कहा।

अविनाश बाबू ने कहा, "लोग यदि उन्हें ठगते ही आ रहे हैं तो भी क्या विधवा के आमरण संयत जीवन को क्या हम महान् पवित्र मानकर सम्मानित भी नहीं करेंगे ?"

कमल हँसकर बोली, "अविनाश बाबू, यह भी शब्द-मोह है। 'संयम' शब्द बहुत दिनों से समाज में मान पा रहा है। उसके उच्चारण मात्र से सम्मान के बोझ में आदमी दब जाता है। अवस्था-विशेष में यहाँ भी व्यर्थ की पोल ही है। इस शब्द से साधारण लोगों को भले ही डर लगे, पर मुझे नहीं लगता। केवल इसलिए कि बहुत-से लोग बहुत दिनों से कोई एक बात कहते आ रहे हैं, इसलिए वह अच्छी है। मैं उसे नहीं मानती। पति की याद को सीने से चिपटाकर विधवाओं को दिन काटने चाहिए, इसके समान स्वतःसिद्ध पवित्रता की धारणा को स्वीकार करने में मुझे बिना प्रमाण के तो आपत्ति है।"

अविनाश निरुत्तर होकर बोले, "यह तुम कहती हो ?"

अक्षय ने कहा, "दो और दो चार के भी प्रमाण की आपको आवश्यकता है ?"

कमल ने न तो उत्तर दिया और न क्रोधित ही हुई, केवल हँस दी। आशु बाबू कमल की बात से अत्यन्त पीड़ित हुए।

अक्षय फिर बोला, "आपकी ये सब गन्दी धारणाएँ हमारे सभ्य समाज में नहीं चल सकतीं।"

कमल ने हँसते हुए उत्तर दिया, "सभ्य समाज में चलती नहीं हैं, इसका मुझे पता है।"

इसके बाद लम्बा मौन। आशु बाबू धीरे से बोले, "अच्छा कमल,

पवित्रता-अपवित्रता के लिए नहीं, किन्तु स्वभाव से जो कुछ और कर नहीं सकते—जैसे मुझको ही ले लो, मणि की माँ के स्थान पर और किसी को ला बिठाने की तो मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था।"

कमल ने कहा, "आप बूढ़े जो हो गए हैं आशु बाबू।"

आशु बाबू ने कहा, "मानता हूँ, आज बूढ़ा हो गया हूँ, किन्तु उस दिन तो बूढ़ा नहीं था, पर तब भी तो यह बात नहीं सोच सकता था?"

कमल ने कहा, "उस दिन भी ऐसे ही बूढ़े थे। देह से नहीं, मन से। कई ऐसे आदमी होते हैं जिनका मन बूढ़ा हो जाता है। उस बूढ़े के शासन में उनका यौवन सदैव लज्जा से सिर नीचे किये रहता है। बूढ़ा मन प्रसन्नता से कहता है—अहा! यहाँ तो अच्छा है, कोई आवाज नहीं, चारों ओर शान्ति है, आनन्द है! ऊँचे स्वर से उसकी सिद्धि का बाजा बजता है, पर उसे इस बात का पता भी नहीं है कि यह उसके जीवन का आनन्द-गान नहीं बल्कि आनन्द-लोक के विसर्जन का बाजा है।"

एक स्त्री के मुँह से यौवन की इस निर्लज्ज परिभाषा से सभी जलने लगे, पर उत्तर किसी को नहीं आया।

आशु बाबू ने पूछा—"कमल! बूढ़ा मन किसे कहती हो? देखूँ मेरा तन वही है क्या?"

कमल ने कहा, "मन का बुढ़ापा मैं उसी को कहती हूँ आशु बाबू, जिसका हारा-थका व बूढ़ा मन भविष्य की सब आशाओं को तिलाँजलि देकर भूत-काल के अन्दर ही रहना चाहता है, मानो उसे कुछ करने की, कुछ पाने की इच्छा ही नहीं है—वर्तमान उसके लिए व्यर्थ है और भविष्य का अर्थ-हीन अतीत ही उसके लिए सब-कुछ है। वही उसका आनन्द, वही उसकी वेदना और वही है उसका मूलधन। उसी आधार पर जीवन बिता देना चाहता है। आशु बाबू, आप अपने साथ जरा तुलना करके तो देखिए।"

आशु बाबू बोले, "यथा समय, एक बार अवश्य विचार करके देखूँगा।"

अजितकुमार जो अब तक निष्पलक दृष्टि से कमल के मुँह की ओर देख रहा था, अचानक ही न जाने क्यों बोल उठा, "मेरा एक प्रश्न है, देखिए मिसेज—"

कमल ने उसकी ओर देखकर कहा, "मिसेज किसलिए? मुझे आप

कमल ही कहिए न।"

अजित मारे लज्जा के लाल हो उठा—"नहीं-नहीं, सो कैसे—ऐसा कैसे…?"

कमल ने कहा, "ऐसा-वैसा क्या? माँ-बाप ने मेरा यही नाम रखा था पुकारने के लिए। इससे मैं प्रसन्न होती हूँ।" अचानक मनोरमा के मुँह की ओर देखकर बोली, "आपका नाम मनोरमा है—मनोरमा कहकर बुलाने से आप अप्रसन्न होती हैं क्या?"

मनोरमा ने कहा, "हाँ, मैं अप्रसन्न होती हूँ।"

इस उत्तर से कमल घबराई नहीं। बोली, "नाम एक शब्द सम्बोधन है, जिससे समझा जाता है कि एक आदमी बहुतों में से किसी एक को बुला रहा है; परन्तु बहुतों को अभ्यास से यह खटकता है। वे इस शब्द को नाना रूप से सजाकर सुनाना चाहते हैं। राजा लोग अपने नाम के आगे न जाने कितने व्यर्थ के शब्द जोड़ते हैं, नहीं तो उनकी मर्यादा नष्ट होती है।" इतना कहकर वह हँस पड़ी और शिवनाथ की ओर इशारा करके बोली, "जैसे ये। कभी इनसे कमल कहते नहीं बनता, कहते हैं शिवानी। अजित बाबू, आप बल्कि मुझे मिसेज शिवनाथ न कहकर शिवानी कहिए। शब्द भी छोटा है और समझ भी लेंगे।"

अजित से कुछ बोला नहीं गया। प्रश्न उसके मुँह में ही अटककर रह गया।

संध्या समाप्त हो चुकी थी और उस ओर देखकर पिता की दृष्टि आकर्षित करते हुए मनोरमा ने कहा, "बाबा, ओस पड़नी शुरू हो गई है, उठिए न अब।"

"उठता हूँ बिटिया।" आशु बाबू ने कहा।

"शिवानी नाम बहुत अच्छा है। शिवनाथ गुणी पुरुष है, इसी से नाम भी सुन्दर है।" अविनाश बाबू ने प्रसन्नता से कहा।

आशु बाबू प्रसन्न-से बोले, "अरे, ये शिवनाथ नहीं, अविनाश है। ईश्वर ने इन दोनों का सब प्रकार से मेल कराने के लिए सारे नियम तोड़ दिये थे।" तभी अक्षय सीधा होकर बोला, "अच्छा, आपसे मैं क्या एक प्रश्न कर सकता हूं?"

डा॰ डिल्ली रमण रेड्डी
9059

"क्यों नहीं ?" कमल ने कहा।

"आपके पास लज्जा नामक कोई चीज नहीं हैं, इसी से पूछता हूँ, शिवानी नाम तो सुन्दर है, परन्तु शिवनाथ के साथ क्या आपका ब्याह हुआ है ?" अक्षय बोला।

आशु बाबू का मुँह फक्क पड़ गया। बोले, "यह क्या कह रहे हैं अक्षय बाबू ?"

"तुम पागल तो नहीं हो गए हो अक्षय ?" अविनाश बोला।

"जंगली !" हरेन्द्र ने कहा।

अक्षय ने कहा, "आप जानते हैं, मेरी आँखों में झूठा लिहाज नहीं।"

"झूठा-सच्चा न सही; पर हम लोगों के तो है।" हरेन्द्र बोला।

कमल हँसने लगी। उसने कहा, "इसमें क्रोध की क्या बात है हरेन्द्र बाबू ! मैं बताती हूँ अक्षय बाबू। ब्याह जैसी कोई बात अवश्य थी। जो लोग देखने आए थे, वे लोग हँसकर बोले, 'यह शादी ही नहीं—धोखा है।' इनसे पूछने पर इन्होंने कहा, 'शैव मत से ब्याह हुआ है।' मैंने कहा, 'यही ठीक है। शिव के साथ यदि शैव मत से ब्याह हुआ, इसमें चिन्ता की कौन-सी बात है' ?"

"शैव-विवाह ! यह अब हमारे समाज में नहीं होता, इसलिए यदि किसी दिन 'नहीं हुआ' कहकर यह उड़ा देना चाहें, तो प्रमाणित करने योग्य तुम्हारे पास कुछ नहीं रह जाता !" अविनाश बोला।

"क्यों जी, क्या तुम ऐसा किसी दिन करोगे ?" कमल ने शिवनाथ की ओर संकेत करके पूछा।

शिवनाथ बोला, "नहीं।" वह पहले के ही समान उदास और गम्भीर बैठा रहा।

तब कमल ने हँसी के बहाने माथे पर हाथ मारकर कहा, "हाय रे भाग्य !"

"ये जायेंगे, 'नहीं हुआ', कहकर अस्वीकार कराने और मैं जाऊँगी उसी को 'हुआ है', कहकर दूसरों के पास न्याय कराने ? उसके पहले गले में फाँसी डालने योग्य एक रस्सी भी न जुटेगी क्या ?"

अविनाश ने कहा, "जुट सकती है, मगर यह पाप है।"

कमल ने कहा, "पाप नहीं, पुण्य है। परन्तु ऐसा होगा नहीं। मैं आत्म-हत्या करने जाऊँगी, यह मेरे विधाता भी नहीं सोच सकते।"

आशु बाबू कह उठे, "यह तो मनुष्य की-सी बात है कमल।"

कमल ने शिकायत करने के ढंग से कहा, "देखिये तो अविनाश बाबू का अन्याय।" फिर शिवनाथ की ओर संकेत करके कहा, "ये करेंगे मुझे अस्वीकार और फिर मैं जाऊँगी गरदन पकड़कर इनसे स्वीकार कराने? सत्य तो डूब जायेगा, और जिस अनुष्ठान को मानती नहीं, उसी की रस्सी लेकर इन्हें बाँधना चाहूँगी मैं?" कहते-कहते कमल की दोनों आँखें चमक उठीं।

आशु बाबू ने धीरे से कहा, "सत्य बड़ा है शिवानी! इसे हम सभी मानते हैं; पर अनुष्ठान भी तो झूठ नहीं?"

कमल ने कहा, "झूठ मैंने नहीं कहा, प्राण भी सत्य है और देह भी, परन्तु जब प्राण निकल जाते हैं तब?"

मनोरमा ने पिता का हाथ खींचते हुए कहा, "बाबा, ओस पड़ने लगी। अब बिना उठे काम नहीं चलेगा।"

"अभी उठा, बिटिया।"

"शिवानी, अब और विलंब मत करो।" शिवनाथ यकायक ही खड़ा हो गया।

कमल भी उसी समय उठकर खड़ी हुई और सबको नमस्कार करके बोली, "आप लोगों से परिचय हुआ है, मानो वाद-विवाद करने के ही लिए।"

इतनी देर बाद शिवनाथ को जरा हँसी आयी। कहा, "केवल तर्क ही को शिवानी, सीखा कुछ भी नहीं?"

कमल ने आश्चर्य के स्वर में कहा, "ना। परन्तु सीखने को था क्या, मुझे तो कुछ ध्यान नहीं पड़ता।"

शिवनाथ ने कहा, "सीखने की बात कुछ भी नहीं थी, केवल हो सके तो आशु बाबू के बूढ़े मन के प्रति जरा श्रद्धा रखना सीखो।"

"यह तुम क्या कह रहे हो आज?" कमल ने आश्चर्य से कहा।

शिवनाथ ने उत्तर नहीं दिया, फिर से सबको नमस्कार करके कहा, "चलो।"

सब चल दिये।

आशु बाबू ने एक गहरी साँस लेकर कहा, "आश्चर्य है !"

सात

वह आश्चर्य था? मन की बात कहने के लिए एक ही शब्द था, वे दोनों विस्मयजनक नाटक के बीच में ही यवनिका डाल गये। परदे के दूसरी ओर विस्मय की न जाने कितनी बातें रहस्य बनकर रह गयीं। सभी के मन में उथल-पुथल मचने लगी और ऐसा मालूम हुआ मानो वे इसलिए यहाँ आये थे। हेमन्त ऋतु की चाँदनी में ताजमहल का सफेद संगमरमर माया-पुरी के समान चमक उठा, पर किसी का ध्यान ही नहीं।

"यदि अब नहीं उठोगे तो आपकी तबीयत अवश्य खराब हो जायेगी बाबा।" मनोरमा बोली।

"ओस पड़ रही है, उठिये।" अविनाश ने भी कहा।

सब उठकर खड़े हो गये। फाटक के बाहर आशु बाबू की बड़ी मोटर खड़ी थी; अक्षय-हरेन्द्र के ताँगे वाले का पता नहीं था। किसी प्रकार कष्ट से सबको मोटर में ही बैठना पड़ा। कुछ देर तक सब मौन रहे।

अन्त में अविनाश बोले, "शिवनाथ ने झूठ कहा था। कमल दासी की लड़की नहीं है।" कहकर वे मनोरमा की ओर देखने लगे।

मनोरमा के मन में भी यह प्रश्न था; पर वह चुप रही। अक्षय ने कहा, "झूठ बोलने का कारण क्या है? स्त्री का यह परिचय तो गौरव का नहीं है अविनाश बाबू?"

"यही तो सोच रहा हूँ।" अविनाश ने कहा।

अक्षय ने कहा, "आप लोग आश्चर्य में आ गये; पर मैं नहीं आया। यह सब शिवनाथ की प्रतिध्वनि है। मुझे धोखा देना सरल नहीं।"

"बाप रे! आपको धोखा देना बिलकुल असम्भव है?" हरेन्द्र मुस्करा-कर बोला।

अक्षय ने उस पर एक क्रुद्ध दृष्टि डालकर कहा, "मैं दावे के साथ कह

सकता हूँ कि उसमें उच्च घराने की संस्कृति नहीं है। औरतों के मुँह से ये सब बातें अनैतिक और अश्लील लगती हैं।"

"यह दूसरी बात है। कमल की सब बातें औरतों के मुँह से ठीक भले ही न लगें, पर उन्हें अश्लील नहीं कह सकते अक्षय बाबू!" अविनाश ने विरोध में कहा।

अक्षय ने कठोर होकर कहा, "वे दोनों ही एक से हैं अविनाश बाबू। देखा नहीं, व्याह इन लोगों के लिए खेल की वस्तु है। जब सबने कहा कि यह ब्याह नहीं धोखेबाजी है, इस पर उनका सम्पूर्ण उपेक्षा-भाव आप लोगों ने क्या नहीं देखा? यह क्या कभी कुलीन कन्या के लिए शोभा देता है?"

बात ठीक थी। इसी से सब मौन रहे।

आशु बाबू मौन भाव से धीरे-धीरे बोले, "विवाह नहीं बल्कि उसकी रीति पर कमल का विश्वास नहीं है। अनुष्ठान कुछ भी हो, जो हो गया सो ठीक है। पति से कहा, 'ये लोग कहते हैं, यह ब्याह धोखेबाजी है।' पति ने कहा, 'विवाह हुआ है हम लोगों का शैव मत से।' कमल प्रसन्न होकर बोली, 'शिव के साथ विवाह यदि शैव मत से हुआ हो तो वह अच्छा है।' बात मुझे ऐसी मीठी लगी अविनाश बाबू कि पूछिये नहीं।"

अविनाश का मन भी इसी स्वर में बँधा था। वे बोले, "और उसी शिवनाथ के मुँह की ओर देखकर हँसते-हंसते पूछा, 'क्यों जी, करोगे क्या तुम ऐसा? दोगे क्या मुझे धोखा?' उसके बाद तो कितनी ही बातें हो गयीं आशु बाबू, लेकिन उसकी गूंज अभी तक मेरे कानों में गूंज रही है।"

आशु बाबू ने उत्तर में हंसकर सिर हिला दिया।

"और उसका शिवानी नाम क्या कुछ कम मधुर है?"

अक्षय से सहा नहीं गया। वह बोला, "आप लोगों ने तो मुझे तंग कर दिया अविनाश बाबू! उसका जो कुछ है, सब मधुर है। यहाँ तक कि शिवनाथ के नाम के साथ एक 'नी' लगा देने से भी मधु झरने लगा।"

हरेन्द्र ने मुसकराकर कहा, "केवल 'नी' लगा देने से ही नहीं होता अक्षय बाबू! आपकी स्त्री को 'अक्षयनी' कहकर पुकारने से ही क्या मधु झरने लगेगा?"

उसकी बात सुनकर सभी हंस पड़, यहाँ तक कि मनोरमा के भी मुंह

पर हँसी छा गयी।

अक्षय क्रोध से पागल हो उठा। गरजकर बोला, "हरेन्द्र बाबू, बहुत आगे मत बढ़ो। किसी उच्चवंशीय महिला के साथ ऐसी स्त्रियों की तुलना करने को भी मैं अपमानजनक समझता हूँ।"

हरेन्द्र चुप रहा, तर्क करने का उसका स्वभाव न था। इतने में गाड़ी आशु बाबू के घर आकर खड़ी हो गयी। अविनाश तथा दूसरों को उतारकर हरेन्द्र, अक्षय आदि को पहुँचाने चली गयी।

आशु बाबू ने चाय पीते-पीते कहा, "अक्षय बाबू की प्रकृति बड़ी कठोर है। इससे बढ़कर कठोर बात उनकी जबान पर और क्या आती ?" सहसा लड़की की ओर देखकर बोले, "अच्छा मणि, कमल के विषय में तुम्हारी पहले की धारणा क्या आज भी नहीं बदली ?"

"कैसी धारणा बाबा ?"

"यही, जैसे—जैसे…।"

"मेरी धरणा से तुम लोगों को क्या बाबा ?"

पिता जानते थे कि इस स्त्री के विषय में मनोरमा की राय भिन्न है। यह बात उन्हें पीड़ा पहुँचाती है, पर इस बात को लेकर आलोचना करने बैठना तो ठीक नहीं है।

अचानक अविनाश बोले, "मगर शिवनाथ के अन्तिम शब्दों पर आपने ध्यान नहीं दिया। कमल का सब-कुछ यदि दूसरे की प्रतिध्वनि मात्र ही है तो शिवनाथ को कहने की आवश्यकता नहीं पड़ती कि वह आप पर श्रद्धा रखना सीखे। वास्तव में आप जैसे संसार में कम हैं। केवल इसीलिए मैं उसके अनेक अपराध क्षमा कर सकता हूँ आशु बाबू कि इतने साधारण परिचय में शिवनाथ ने इतने बड़े सत्य को जान लिया।"

आशु बाबू चंचल हो उठे और मनोरमा ने कृतज्ञता से दोनों आँखें भरकर वक्ता के मुँह पर देखा और कहा, "अविनाश बाबू, यहीं पर उनके साथ उनकी स्त्री का कुछ मतभेद है। आज मैं जान गयी कि उस दिन धोती और साबुन माँगने के बहाने वह मेरा केवल उपहास ही कर गयी थी। उस दिन का उसका अभिनय मैं समझ न सकी थी—पर उसका यह छल-छंद सब व्यर्थ है बाबा ! यदि तुम्हें वह आज सबसे बड़ा जानकर न पहचान सकी हो।"

आशु बाबू व्याकुल होकर बोले, "तू यह सब कह क्या रही है बेटी ?"

"अतिशयोक्ति तो इसमें नहीं है आशु बाबू। जाते समय शिवनाथ ने यही बात कहने का प्रयत्न किया था। आज वह बोला नहीं, पर उसकी इस एक ही बात से मुझे मालूम हो गया कि दोनों में आपस में यहीं पर मतभेद है।" अविनाश बोला।

आशु बाबू ने कहा, "ऐसा यदि हो तो शिवनाथ दोषी है, कमल नहीं।"

मनोरमा सहसा बोल उठी, "यह तो आप जानें बाबा, पता नहीं किन आँखों से उसे आपने देखा है; परन्तु आप जैसे मनुष्य को जो श्रद्धा नहीं कर सकती, उसे क्षमा नहीं किया जा सकता ?"

आशु बाबू ने कहा, "क्यों बेटी ? मुझ पर अश्रद्धा का भाव तो उसकी एक भी बात से प्रतीत नहीं हुआ ?"

"पर श्रद्धा भी तो प्रतीत नहीं हुई।"

आशु बाबू ने कहा, "श्रद्धा दिखाई देने की कोई चीज नहीं है मणि !मेरी जिस चीज को तुम लोग शक्ति समझते हो, उसकी दृष्टि में वह शक्ति न हो। यही बात उसने मुझसे कही है कि निर्बल व्यक्ति को स्नेह के सहारे सुख दिया जा सकता है—परन्तु मेरा जो मूल्य उसकी दृष्टि में नहीं है, व्यर्थ उसे देखकर उसने मुझे भी नीचे नहीं गिराया और न अपमान किया। इसमें व्यथित होने का कोई कारण नहीं है।"

मनोरमा चुप रही।

अविनाश बाबू ने पूछा, "तो फिर क्या आपकी दृष्टि में स्वार्थत्याग का कोई मूल्य नहीं ?"

आशु बाबू हँसकर बोले, "प्रश्न प्रोफेसरों जैसा नहीं हुआ। उसके लिए उसका मूल्य नहीं है।"

"तो फिर आत्म-संशय का भी कोई मूल्य नहीं ?"

"उसकी दृष्टि में नहीं है। संशय जहाँ अर्थहीन है वहाँ केवल आत्म-पीड़ा है और उसी को लेकर अपने को बड़ा मानना बुरा ही नहीं, संसार से छल करना है। कमल के मुँह से लगा कि मानो वह इसी बात को बार-बार कहना चाहती है।" इतना कहकर वे क्षण-भर चुप रहे, फिर बोले, "मालूम

नहीं उसे कहाँ से यह धारणा मिली, पर सहसा सुनने पर बड़ा आश्चर्य होता है।"

मनोरमा बोल उठी, "केवल विस्मय होता है ! सारे शरीर में तड़पन नहीं होने लगती ? जो जिसके मन में आयेगा, कहेगा, और आप उस पर हाँ कर देंगे ?"

आशु बाबू ने कहा, "हाँ तो नहीं कहा बेटी ! परन्तु मन में द्वेष लेकर विचार करने से एक नहीं, दूसरा पक्ष भी ठगाया जाता है। जो बातें हम कमल के मुँह में भर देना चाहते हैं, उसने वह नहीं कहीं। उसने जो कुछ कहा, उसका निचोड़ शायद यही है कि इन लम्बे संस्कारों में सत्य समझकर जिस तत्त्व को हमने खून के अन्दर प्राप्त किया है, वह प्रश्न का केवल एक ही पहलू है। पर उसका दूसरा पहलू भी है।"

"बाबूजी, इतना काल बीत गया, भारतवर्ष में क्या उस पहलू को देखने वाला अन्य कोई नहीं हुआ ?" मनोरमा बोली।

पिता हँसकर बोले, "तुम अच्छी तरह जानती हो कि हमारे देश के ही नहीं, दुनिया के किसी भी देश के पुरखा 'शेष प्रश्न' का उत्तर नहीं दे गये हैं; क्योंकि यदि दे गये होते तो सृष्टि ही रुक जाती। इसका चलना भी समाप्त हो जाता।"

उन्होंने देखा अजित उनकी ओर देख रहा है, बोले, "तुम शायद कुछ भी नहीं समझ पाये, यही है न ?"

आशु बाबू घटना का पूर्व भाग समझकर बोले,"अक्षय ने होम-कुण्ड की-सी पवित्र आग जला दी है कि लोग उनकी ओर धुएँ के कारण आँख नहीं खोल सकें और मजे की बात यह है कि शिवनाथ के विरुद्ध शिकायत है और दण्ड मिलता है कमल को। वे यहाँ एक प्रोफेसर थे, शराब पीने के कारण नौकरी गयी, बीमार स्त्री को त्यागकर घर ले आये कमल को। बोले, 'विवाह हुआ है शैव मत से।' अक्षय बाबू ने गुप्त रूप से जाना कि सब धोखा है। पूछा गया, 'क्या लड़की कुलीन घराने की है ?' उत्तर मिला, 'नहीं, एक दासी की कन्या है।' प्रश्न हुआ, 'लड़की शिक्षित है ?' उत्तर दिया, 'शिक्षा के लिए विवाह नहीं किया है, रूप के लिए किया है।' इस बात में कमल का अपराध मुझे ढूंढ़ने पर नहीं मिलता अजित। हम लोगों की घृणा जाकर

पड़ी उसी पर, और समाज का न्याय भी यही हुआ।''

मनोरमा ने कहा, ''तब क्या उन्हें आप समाज के अन्दर भी मिला देना चाहते हैं बाबा ?''

आशु बाबू ने कहा, ''मेरे चाहने से क्या आ जायेगी बेटी ! समाज में अक्षय बाबू भी हैं—उन्हीं का पक्ष सबल है।''

''आप अकेले होते तो बुला लेते ?'' लड़की ने पूछा।

''बुलाने से ही क्या सब आ जाते हैं बेटी !'' पिता ने उत्तर दिया।

''विस्मय तो यह है, आपके साथ ही उनका विरोध है, और आपका समर्थन ही सबसे अधिक मिला है।'' अजित बोला।

अविनाश ने कहा, ''कारण यह है अजित ! कमल को हम नहीं जानते; जानते हैं उनके विपक्षी मत और बुराई के पहलू को। यही कारण है कि हमें उससे भय लगता है और क्रोध भी आता है। आशु बाबू का शरीर पापरहित है, मन निष्कलुष है, सन्देह की छाया तक इस पर नहीं पड़ती, न भय का ही स्थान है। महादेव के लिए विष-अमृत दोनों समान हैं, चाहे देवताओं का दल आ जाय और चाहे दैत्य-दानव आकर घेर लें, ये निर्लिप्त-निर्विकार रहेंगे—केवल गठिया से बचे रहें तो ये प्रसन्न हैं मगर हम लोग तो—''

अचानक आशु बाबू ने उन्हें बीच में ही रोक दिया, ''आगे अब और कुछ न कहियेगा, आपके पैर पड़ता हूँ। एक युग का युग विलायत में बिताकर आया हूँ। वहाँ क्या किया है, क्या नहीं, सो मुझे भी याद नहीं—पर यह बात अक्षय के कानों तक पहुँच गयी तो फिर खैर नहीं।''

''क्या आप विलायत भी गये थे ?'' अविनाश ने आश्चर्य के साथ कहा।

आशु बाबू ने कहा, ''हाँ, यह कुकर्म भी मुझसे हो चुका है।''

मनोरमा ने कहा, ''बाबा की सारी शिक्षा यूरोप में हुई थी। बाबा बरिस्टर हैं। बाबा डॉक्टर हैं।''

''क्या कहती हो ?'' अविनाश ने कहा।

आशु बाबू कह उठे, ''भय करने की कोई बात नहीं प्रोफेसर, लिखा-पढ़ा सब भूल गया हूँ। काफी दिन से बनजारे के समान लड़की के साथ जहाँ-तहाँ घूम रहा हूँ, और अब चित्त-पटल धुल-पुँछकर निष्कलुष हो गया है, कहीं चिह्न शेष नहीं है; परन्तु यह बात अक्षय से न कहियेगा।''

"अक्षय से आपको बड़ा भय लगता है ?" अविनाश ने हँसकर कहा ।

आशु बाबू ने स्वीकार कर लिया ।

मनोरमा क्रोध में भी हँसकर बोली—"बाबा, यह बड़ा अन्याय है ।"

सुनकर सब हँस दिये ।

मनोरमा ने पूछा, "अच्छा बाबा, मनुष्य समाज में क्या अक्षय बाबू जैसे आदमी की आवश्यकता नहीं है ?"

आशु बाबू बोले, "आवश्यकता शब्द तो बेटी, बड़ा गड़बड़ का है । इसकी मीमांसा के बिना तुम्हारे प्रश्न का ठीक उत्तर नहीं दिया जा सकता । हमेशा से इस पर तर्क चलता रहा है, मीमांसा अब तक नहीं हुई ।"

मनोरमा बोली, "तुम सब बातों के उत्तर में ऐसे बचकर निकल जाते हो कि स्पष्ट कुछ नहीं कहते, यह आपका बड़ा अन्याय है बाबा ।"

आशु बाबू हँसते-हंसते बोले, "कहने की बुद्धि तेरे पिता में नहीं है मणि—यह तेरा भाग्य है । स्वयं मुझ पर क्रोध करने से क्या लाभ ?"

"सिर में दर्द हो रहा है, जरा थोड़ा बाहर घूम आऊँ ।" अजित उठकर बोला ।

"इसमें सिर का अपराध नहीं बेटा ! इतनी ओस में ? ऐसे अँधेरे में ?"

एक खुली दक्षिण खिड़की से चन्द्रमा की बहुत-सी किरणें नीचे बिखर रही थीं । अजित ने उसकी ओर संकेत करते हुए कहा, "ओस शायद थोड़ी-बहुत पड़ती होगी, पर अँधेरा नहीं है । जरा घूम आऊँ ।"

"पर पैदल मत घूमना ।"

"नहीं, गाड़ी में ही जाऊँगा ।"

"गाड़ी का ढकना लगा देना अजित, कहीं ओस न लग जाये ।"

अजित मान गया ।

आशु बाबू ने कहा, "तो फिर अविनाश बाबू को भी पहुँचाते आना, पर लौटने में देर न हो ।"

"अच्छा ।" कहकर अजित अविनाश बाबू को साथ लेकर बाहर घूमने चला गया । उसके चले जाने पर आशु बाबू ने मुस्कराते हुए कहा, "इस लड़के की मोटर में घूमने की सनक अभी नहीं गयी । ऐसी ठण्ड में चला है घूमने को ।"

आठ

पन्द्रह दिन पश्चात् आशु बाबू और मनोरमा को अविनाश बाबू के घर उतारकर अजित अकेला घूमने चला। वह ऐसा प्रायः किया करता है। कालेज से कुछ दूर अचानक एक नारी-कण्ठ से अपना नाम सुनकर अजित चौंक पड़ा। उसने गाड़ी रोकी, देखा, शिवनाथ की पत्नी है। सड़क के किनारे टूटा-फूटा पुराने युग का एक दुमंजिला मकान है, सामने वैसा ही सूखा-सा फूलों का बगीचा है और उसके एक किनारे पर खड़ी कमल हाथ उठाकर उसे बुला रही है।

''एक दिन और भी आप ऐसे ही अकेले जा रहे थे, मैंने पुकारा, पर आप सुन ही न पाये। पायें भी कैसे? बाप रे बाप! इतने जोर से चलाते हैं—आपको भय नहीं लगता?''

अजित गाड़ी से उतरकर बोला, ''आप अकेली कैसे? शिवनाथ बाबू कहाँ गये हैं?''

कमल ने कहा, ''वे आज घर पर नहीं हैं; पर आप भी अकेले कैसे निकले? उस दिन भी साथ में कोई नहीं था।''

अजित ने कहा, ''नहीं, इधर कई दिनों से आशु बाबू की तबीयत ठीक नहीं थी, इसी से आज उन लोगों को अविनाश बाबू के घर छोड़कर मैं घूमने निकला हूँ। शाम को मुझे घर में रहना अच्छा नहीं लगता।''

कमल ने कहा, ''मेरी भी यही दशा है, परन्तु अच्छा नहीं लगता, कहने से ही तो काम नहीं चलता—दरिद्रों को तो बहुत कुछ अच्छा लगाना पड़ता है।'' कहकर वह अजित के मुँह की ओर देखने लगी। फिर सहसा बोल उठी, ''मुझे साथ में ले चलिये, जरा घूम आऊँगी।''

अजित चक्कर में पड़ गया। 'ना' कहते नहीं बनता। जरा दुविधा से बोला, ''यहाँ आपका साथी-संगी भी शायद कोई नहीं है?''

कमल ने कहा, ''सुनो इसकी बात! साथी कहाँ रखा है? देख नहीं रहे हो हमारे मुहल्ले की दशा? इसे शहर के बाहर समझिये। पास ही कहीं चमड़े का कारखाना है—हमारे पड़ोसी सब मोची-ही-मोची हैं। कारखाने जाते हैं, आते हैं, शराब पीते हैं और सारी रात हल्ला मचाते हैं—यही मेरा

मुहल्ला है।"

"क्या इधर सभ्य लोग हैं ही नहीं ?" अजित ने पूछा।

"शायद नहीं हैं। हों भी तो क्या, मुझे वे अपने घर क्यों आने-जाने देंगे ? पहले कभी-कभी जब सूना-सा मालूम होता था तो आप लोगों के यहाँ चली जा सकती थी।" कहते-कहते वह गाड़ी के खुले दरवाजे से स्वयं ही भीतर आकर बैठ गयी और बोली, "आइये, आज मुझे बहुत दूर तक घुमाकर लाइये।"

कुछ लजाकर अजित बोला, "अधिक दूर जाने से रात बहुत हो जायेगी। शिवनाथ बाबू घर पर आपको न पायेंगे तो क्या कहेंगे ?"

"इसमें कहने की कोई बात नहीं।" कमल बोली।

"ड्राइवर के पास न बैठकर आप पीछे बैठिये।" अजित ने कहा।

कमल ने कहा, "ड्राइवर तो आप स्वयं हैं, पीछे बैठकर बातें कैसे करूँगी ? इतनी दूर मुँह बन्द करके कहीं जाया जा सकता है ? चलिये-चलिये, देर न कीजिये।"

अजित बैठकर गाड़ी चलाने लगा। रास्ता सुन्दर और निर्जन है, एक-आध आदमी दिखायी पड़ता है--बस। गाड़ी की तेज चाल क्रमशः तेज होने लगी।

कमल ने कहा, "आपको गाड़ी तेज चलानी अच्छी लगती है ?"

अजित ने कहा, "हाँ।"

"भय नहीं लगता ?"

"नहीं, मुझे आदत पड़ गयी है।"

"आदत ही सब-कुछ है।" कहकर कमल क्षण-भर मौन रही, फिर बोली, "मगर मुझे तो आदत नहीं, फिर भी मुझे अच्छा लग रहा है। शायद स्वभाव है ?"

अजित ने कहा, "हो सकता है।"

कमल ने कहा, "अवश्य। यद्यपि विपत्ति आ सकती है—जो चढ़ते हैं, उन पर भी और जो दब जाते हैं, उन पर भी—ठीक है ?"

अजित ने कहा, "नहीं दबेंगे ?"

कमल ने कहा, "दब भी जायें तो भी क्या हानि है अजित बाबू ? तेज

रफ्तार का भी एक आनन्द है—क्या गाड़ी की और क्या इस जीवन की। मगर जो कायर हैं वे नहीं चल सकते। वे सावधानी से धीरे-धीरे चलते हैं। सोचते हैं, पैदल चलने का कष्ट बच गया। वस, यही उनके लिए पर्याप्त है। ठीक है न अजित वाबू ?"

अजित की समझ में कुछ भी नहीं आया। उसने कहा, "इसका मतलव ?"

कमल उसके मुँह की ओर देखकर हँस दी। क्षण-भर वाद सिर हिलाकर बोली, "मतलब कुछ नहीं, वस यों ही।"

अँधेरा और भी गाढ़ा होता आ रहा था। अजित ने लौटना चाहा। कमल ने कहा, "अभी से ? चलिये, और थोड़ा चलें।"

अजित ने कहा, "वहुत दूर आ गये हैं, वापस पहुँचने में काफी रात हो जायेगी।"

कमल ने कहा, "हो जाये तो क्या हानि है ?"

"लेकिन शिवनाथ वावू अप्रसन्न होंगे।"

कमल ने कहा, "हो जाने दीजिये।"

अजित आश्चर्य से वोला, "मुझे आशु वावू को घर ले जाना है।"

कमल ने उत्तर दिया, "आगरा शहर में तो गाड़ियों की कमी नहीं, वे आसानी से जा सकते हैं। चलिये और भी जरा।" इस प्रकार कमल मानो उसे जवरदस्ती क्रमशः आगे की ओर ले जाने लगी।

सुनसान रास्ता। जनशून्य। रात अँधेरी होने लगी। चारों ओर सन्नाटा। अजित ने उद्विग्नता में गाड़ी रोक दी और वोला, "अव लौट चलिये।"

"चलिये।" कमल ने कहा।

वापसी पर कमल बोली, "सोच रही थी, मनुष्य झूठ से मेल करके जीवन की कितनी सम्पदा नष्ट कर देता है। मेरे साथ अकेले जाने में आपको कितना संकोच हो रहा था। मैं यदि उसी भय से पीछे हट जाती तो मुझे ऐसा आनन्द कहाँ मिलता।"

"पर अन्त में घर जाकर शुभ स्थान पर अशुभ भी हो सकता है।"

कमल ने कहा, "इस अँधकारमय सुनसान रास्ते में अकेली आपके पास वैठकर जाने कितनी दूर तक घूम आयी। मुझे कितना अच्छा लगा, कह

नहीं सकती।''

अजित ने सोचा, इस स्त्री के विषय में कल्पना और अशुभ जनश्रुति के अलावा शायद कोई भी कुछ भी कुछ नहीं जानता—जितना जानते हैं वह भी शायद बहुत कुछ झूठ हो—और झूठ-सच की छाया ऐसी अधिक पड़ गई है कि पहचानने का कोई रास्ता ही नहीं रहा।

अजित चुप रहा, इसी से कमल को मानो होश-सा आया। बोली, ''हाँ, क्या कह रहे थे? घर जाकर मंगल के बदले अमंगल हो सकता है? हो क्यों नहीं!''

''तब फिर?'' अजित ने कहा।

''तब भी उससे यह प्रमाणित नहीं होता कि जो खुशी आज मिली है, बह गयी।'' कमल ने कहा।

अजित हँसकर बोला, ''प्रमाणित नहीं होता, परन्तु यह प्रमाणित अवश्य होता है कि आप पूरी तार्किक हैं। आपको बातों में जीतना कठिन ही नहीं, असंभव है।''

''अर्थात् मैं कूट-तार्किक हूँ आपकी दृष्टि में?''

''सो बात नहीं, किन्तु यह तो आप मानती होंगी कि जिसका अन्तिम फल दुःख है, उनके शुरू में चाहे कितना ही आनन्द क्यों न हो, उसे सचमुच का आनन्द नहीं कह सकते?'' अजित बोला।

''मैं नहीं मानती। मैं मानती हूँ कि जब जितना पाऊँ उसी को सच्चा समझकर मानूँ। दुःख की पीड़ा मेरे बीते आनन्द के ओस-कणों को सुखा डाले। एक दिन का आनन्द दूसरे दिन के दुःख के सामने बौना न हो। इस जीतने में सुख-दुःख कोई भी सत्य नहीं, अजित बाबू। सत्य हैं उनके चंचल क्षण। बुद्धि और हृदय से उनको पाना ही तो वास्तविक पाना है। क्या यह ठीक नहीं है?'' कमल बोली।

अजित इस प्रश्न का उत्तर न दे सका। उसे लगा कि अन्धकार में दूसरे की दोनों आँखें मानो कौतुक के साथ उसकी तरफ देख रही हैं।

''क्यों, जवाब नहीं दिया जाता?''

''आपकी बातें समझ में नहीं आयीं।''

उसने एक दबी साँस ली और फिर धीरे-धीरे कहा, ''इसका अर्थ यह है

कि स्पष्ट समझने का अभी आपका समय नहीं आया। यदि कभी आये तो मुझे याद कर लीजियेगा। करेंगे?"

"अवश्य करूँगा।" अजित ने कहा।

गाड़ी टूटे-फूटे फूल बाग के सामने आकर रुक गयी। अजित ने घर की ओर देखकर कहा, "कहीं भी प्रकाश नहीं है। लगता है, सब सो गये हैं।"

"शायद।" कमल ने कहा।

अजित ने कहा, "देखिये, आपकी ज्यादती है न ! किसी को कह भी नहीं गयीं। शिवनाथ बाबू न जाने कितने चिंतित हुए होंगे।"

"हाँ, वे चिंता के बोझ से दबकर सो गये हैं।" कमल ने कहा।

"ऐसे अँधेरे में आप कैसे जायेंगी? गाड़ी में एक लालटेन है, उसे जलाकर साथ चलूं?" अजित ने पूछा।

"तब तो फिर कहना ही क्या है, अजित बाबू ! आइये-आइये, आपको जरा चाय पिला दूं।" कमल ने प्रसन्नता से कहा।

अजित ने अनुनय के स्वर में कहा, "आप और जो आज्ञा करें सिर-माथे पर; परन्तु इतनी रात में चाय पीने की आज्ञा न दीजिये। चलिये, आपको पहुँचा आता हूँ।"

बरामदे में एक दासी सो रही थी, वह आहट पाकर बैठ गयी। दो मंजिला मकान है। ऊपर छोटे-छोटे दो कमरे हैं। अत्यन्त छोटा जीना है, उसके नीचे हरीकेन लालटेन जल रही है। उसे हाथ में उठाकर कमल ने अजित को ऊपर बुलाया।

"नहीं-नहीं, अब जाता हूँ, रात अधिक हो गयी है।" अजित बोला।

"सो नहीं होगा, आइये।" कमल ने आग्रह से कहा—"आप सोच रहे हैं, आने से शिवनाथ बाबू के सामने लजाना पड़ेगा। मगर यह क्यों नहीं सोचते कि नहीं आने से मेरे लिए तो और भी शर्म की बात होगी। आइये, नीचे से ही इस प्रकार अपमान के साथ आपको जाने देने से रात को नींद भी न आयेगी।"

अजित ने ऊपर आकर देखा कि घर में चीजें बहुत कम हैं। साधारण आरामकुर्सी, एक छोटा-सा टेबल, एक स्टूल, कई ट्रंक, एक किनारे पुराना लोहे का पलंग और उस पर बिस्तर-तकियों का ढेर पड़ा हुआ है—ऐसे बेढंगे

रखे हैं, जैसे उन सबकी कोई आवश्यकता ही नहीं पड़ती। घर सूना है, शिवनाथ बाबू नहीं हैं।

अजित को विस्मय हुआ, किन्तु मन-ही-मन उसने सन्तोष की साँस ली, बोला—"वे तो अभी तक आये नहीं ?"

"ना।" कमल ने कहा।

"आज शायद उन लोगों के यहाँ उनका गाना-बजाना खूब जोर से चल रहा होगा। दो दिन से नहीं गये हैं। आज उन्हें पाकर आशु बाबू शायद पूरी कसर निकालकर ही रहेंगे।" अजित बोला।

कमल ने पूछा, "रोज जाते हैं, उधर दो दिन से गये क्यों नहीं ?"

अजित ने कहा, "इसकी सूचना तो मुझसे आपको अधिक होगी। संभवतः आपने छोड़ा नहीं होगा, इसी से नहीं जा पाये होंगे, नहीं तो उन्हें देखने से ऐसा तो मालूम नहीं होता कि अपनी इच्छा से नहीं गये।"

कमल अचानक हँस पड़ी। बोली, "वास्तव में किसी आदमी को पकड़-कर रखना बड़ा अन्याय है न ?"

"बिलकुल।" अजित ने कहा।

"अच्छा, आपको यदि कोई पकड़कर रखता, तो आप रहते ?"

"ना। मुझे पकड़कर रखने वाला भी तो कोई नहीं है !"

कमल हँसती हुई सिर हिलाकर बोली, "यही तो कठिनाई है। पकड़कर रखने वाला कौन कहाँ छिपा रहता है, यह जानने का उपाय ही नहीं। यही देखिये न, मैंने जो शाम से आपको पकड़कर रक्खा है, इसकी आपको खबर ही नहीं थी। खैर, रहने दीजिये। सभी बातों पर तर्क करने से लाभ क्या ? मगर बातों-ही-बातों में देर हुई जा रही है। जाऊँ, मैं उस कमरे में से आपके लिए चाय बना लाऊँ।"

"और मैं यहाँ अकेला बैठा रहूँ ? सो नहीं होगा।"

"इसकी आवश्यकता भी क्या है ?" इतना कहकर कमल उसे अपने साथ दूसरे कमरे में ले गयी और उसके बैठने के लिए आसन बिछा दिया—"बैठिये। इस संसार की बातें अनोखी हैं अजित बाबू। उस दिन इस आसन को खरीदते समय सोचा था कि इसे बिछाकर किसी से बैठने के लिए कहूँगी; लेकिन यह बात तो कही नहीं जा सकी अजित बाबू, फिर भी बैठने के लिए

बिछा ही दिया। भला कितने समय का यह अंतर है !"

अजित शर्म के मारे सुर्ख हो उठा। कहने में हिचकिचाया, मगर फिर भी बोला, "उन्हें बैठने को दिया क्यों नहीं ?"

कमल ने कहा, "यही तो आदमी की बड़ी भूल है। सोचता है, सब-कुछ उसी के अपने हाथ में है; लेकिन होता क्या है, इसका कुछ पता नहीं। आपकी चाय में क्या चीनी अधिक डालूं ?"

"डाल दीजिये। चीनी और दूध के लोभ से ही तो मैं चाय पीता हूँ, नहीं तो उससे मुझे कोई विशेष रुचि नहीं।" अजित बोला।

"मैं भी तो ऐसी ही हूँ। क्यों लोग यह पीते हैं, मेरी समझ में नहीं आता। मजा यह है कि इसी के प्रांत में मेरा जन्म है।" कमल बोली।

"आपका जन्म क्या आसाम में हुआ है ?"

"केवल आसाम में ही नहीं, चाय के बगीचे में।"

"तो भी चाय की आदत नहीं ?"

"बिलकुल नहीं। लोग दे देते हैं तो पी लेती हूँ।"

चाय का प्याला हाथ में लेकर अजित बोला, "यह शायद आपका रसोई-घर है ?"

"हाँ।" कमल ने कहा।

अजित ने पूछा, "खाना आप स्वयं बनाती होंगी ? मगर आज तो आपको बनाने का समय ही नहीं मिला ?"

"ना।" कमल ने कहा।

अजित बगलें झाँकने लगा।

कमल उसके मुँह की ओर देखकर हँसती हुई बोली, "अब पूछिये कि आप खायेंगी क्या ? उसके उत्तर में मैं कहूँगी, मैं रात को नहीं खाती। केवल एक समय ही खाती हूँ।"

"केवल एक ही समय ?" अजित आश्चर्य से बोला।

कमल ने कहा, "हाँ। मगर इसके बाद ही आपको सोचना चाहिए कि फिर शिवनाथ बाबू क्या खायेंगे ? इसके उत्तर में मैं कहूँगी कि वे तो आप ही लोगों के यहाँ खा-पी आते हैं। उन्हें क्या चिंता है ? आप कहेंगे, सो तो ठीक है, मगर नित्य तो ऐसा नहीं होता ? सुनकर मैं सोचूंगी, इस बात का

उत्तर दूसरों को देने से लाभ ही क्या ! पर इससे आपको सन्तुष्ट नहीं किया जा सकता। तब विवश होकर कहना पड़ेगा, अजित बाबू, घबराने की बात नहीं। वे यहाँ अब नहीं आते। शैव-विवाह की शिवानी का मोह शायद अब दूर हो चुका है।"

अजित गम्भीर विस्मय के साथ उसके मुँह पर देखकर पूछने लगा, "आप क्या क्रोध में कह रही हैं ?"

"ना, क्रोध में नहीं। क्रोध करने की मुझमें शक्ति भी नहीं। मैं समझती थी, पत्थर खरीदने जयपुर गये हैं। अब आपसे सूचना मिली कि वे आगरे में ही हैं। चलिये, उस कमरे में बैठें।"

उस कमरे में जाकर कमल ने कहा, "यही हम लोगों के सोने का कमरा है। तब भी इससे अधिक एक भी वस्तु यहाँ नहीं थी—आज भी नहीं है; लेकिन अब बहुत रात हो रही है अजित बाबू। अब तो देर करना ठीक नहीं।"

अजित उठकर खड़ा हो गया, बोला, "हाँ, तो फिर आज चलता हूँ।"

कमल साथ-साथ उठ खड़ी हुई।

"यदि आज्ञा हो तो कल आऊँ ?" अजित बोला।

"हाँ, आइयेगा।" कहती हुई वह नीचे तक गयी।

अजित गम्भीरता से बोला, "यदि बुरा न मानें तो पूछूँ—शिवनाथ बाबू कितने दिन से नहीं आये ?"

"बहुत दिन से।" कहकर वह हँस पड़ी। अजित ने लालटेन के उजाले में देखा कि पहले की हँसी से इसकी कहीं भी कोई समानता नहीं है।

नौ

अजित बहुत रात बीत जाने पर घर लौटा।

सड़क सुनसान थी। दुकानें बन्द हो चुकी थीं। कहीं आदमी का नाम तक न था। घड़ी चाबी न देने से आठ ही बजे से बन्द है। शायद एक बजा हो, या दो—ठीक समय का अनुमान नहीं कर सका। विचारा कि आशु बाबू के घर सब चिंतित होंगे। सोने की बात तो दूर रही, खाना-पीना तक

भी शायद वन्द हो। घर पहुँचकर वह क्या कहेगा, सोच न सका। सच वात कही नहीं जा सकती, झूठ कहा जा सकता है। मगर झूठ वोलने का अभ्यास नहीं। फाटक खुला था। दरबान ने सलाम करके कहा कि शोफर उनको खोजने गया है। गाड़ी से उतर अजित आशु वावू की वैठक में गये। घुसते ही देखा कि वे अभी तक नहीं सोये। अस्वस्थ शरीर लिए अकेले वैठे उसकी वाट देख रहे हैं। वोले, "वेटा ! आ गये ? मैं वार-वार यही सोच रहा था कि कोई एक्सीडेंट न हो गया हो। कितनी वार कह चका हूँ कि दूर के रास्ते पर अकेले ही नहीं निकलना चाहिए।" अजित लज्जित होकर जरा हँस दिया। कहा, "आप लोगों को चिंता में डालने के लिए मैं दुखी हूँ।"

"दुःख कल करना। घड़ी देखो, दो वजे हैं। थोड़ा खा-पीकर सो जाओ। कल सुनूँगा सारी वात। जदु, ओ जदुआ !—वह भी नालायक चला गया, शायद तुम्हें ढूँढ़ने ही।"

"इतने बड़े शहर में भला वह कहाँ मुझे ढूँढ़ता फिरेगा ?"

आशु वावू ने कहा, "हमारी चिन्ता हम ही जानते हैं। ग्यारह वजे शिवनाथ का गाना समाप्त हुआ तव से—मणि कहाँ गयी ? उसे भी तो तव से नहीं देखा।"

"कदाचित् सो गयी होगी।" अजित बोला।

"सोयेगी ? अभी तक उसने खाना भी नहीं खाया है।" कहते-कहते वोले, "अस्तबल में कोचवान है क्या ?"

"ना।" अजित बोला।

"जो सोचा था वही हुआ। मालूम होता है गाड़ी लेकर वह भी ढूँढ़ने गयी। देखो, कैसी परेशानी की है। मेरे मना करने के डर से कुछ कह तक नहीं गयी। कौन जाने कव लौटेगी ! मालूम होता है, आज की रात आँखों में ही कटेगी।"

अजित ने अस्तवल में जाकर देखा कि गाड़ी खड़ी है और घोड़े घास खा रहे हैं। उसकी एक चिन्ता मिटी।

अजित आशु वावू के पास जा रहा था। इतने में झाड़ी में से किसी की आवाज सुनाई दी। वात हो रही थी किसी एक गाने के स्वर के विषय में। वात कोई वुरी नहीं; परन्तु फिर भी उसके लिए पेड़-पौधों के झुरमुट में वैठने

की आवश्यकता नहीं; एक क्षण के लिए अजित के पैर निर्जीव हो गये। वह जैसे चुपचाप आया था वैसे ही चुपके से लौट आया। उन दोनों में से कोई भी न जान सका कि उनकी इस बातचीत का कोई साक्षी है।

"पता लगा ?" आशु बाबू ने व्यग्रता से पूछा।

"मणि बाहर नहीं गयी। गाड़ी-घोड़ा अस्तबल में हैं।"

"जान-में-जान आयी, रात बहुत हो चुकी है। शायद वह थक-थकाकर सो गयी होगी। आज लड़की ने खाना भी नहीं खाया। जाओ बेटा, थोड़ा-बहुत खाकर तुम भी सो जाओ।"

अजित ने कहा, "इतनी रात गये मैं अब नहीं खाऊँगा, आप सोइये।"

"सोता हूँ; पर तुम कुछ भी न खाओगे ? जरा कुछ खा-पीकर—"

"ना, कुछ नहीं। आप देर न करें। सोने जायें।" इतना कहकर उस रोगी आदमी को भीतर भेजकर अजित अपने कमरे में गया और वहाँ खुली हुई खिड़की के पास जाकर खड़ा हो गया।

आध घण्टे के बाद मणि आयी। पहले उसने पिता की बैठक के सामने जाकर देखा, वहाँ अँधेरा था। मनोरमा ने फिर इधर मुँह फेरा तो देखा कि अजित अपने कमरे की खुली खिड़की के पास मौन खड़ा है। उसके कमरे में भी बत्ती नहीं जली थी, लेकिन आँगन में ऊपर के बरामदे से हलका प्रकाश आकर उसकी खिड़की पर पड़ रहा था।

"कौन ?"

"अजित।"

"वाह ! कब आये ? बाबा शायद सोने चले गये। देखो, तुम्हारी कैसी आदत है ! घर-भर के लोग मारे चिन्ता के चिन्तित होते रहे—कुछ-न-कुछ हुआ होगा। इसी से बाबा बार-बार मना करते हैं अकेला जाने के लिए।"

इसका अजित ने कुछ भी उत्तर नहीं दिया।

मनोरमा ने कहा, "मगर उन्हें नींद बिलकुल न आयी होगी। अवश्य जाग रहे होंगे। उन्हें जरा सूचना तो दे आऊँ आपके आने की।"

"इसकी आवश्यकता नहीं, मैं उनसे मिल चुका हूँ।"

"तो फिर मुझे सूचना क्यों नहीं दी ?"

"उन्होंने समझा कि तुम सो गयी हो।"

"सो कैसे जाती ? अब तक तो मैंने खाना भी नहीं खाया।"

"तो खाके सो जाओ।"

"तुम नहीं खाओगे ?"

"ना।" कहकर अजित वहाँ से हट गया।

"वाह, यह भी अच्छा रहा !" इससे अधिक बात उसके मुँह से न निकली और वह मौन खड़ी रही। बहुत देर बाद वह धीरे-धीरे चली गयी।

सवेरे नौकर से आशु बाबू को मालूम हुआ कि कल रात को अजित और मनोरमा दोनों ने खाना नहीं खाया। चाय के समय उत्कंठा से पूछा, "कल अवश्य ही कोई भयानक एक्सीडेंट हो गया था न ?"

"ना।" अजित ने कहा।

"तो फिर अचानक पेट्रोल समाप्त हो गया होगा ?"

"ना, पेट्रोल बहुत था।"

' फिर देर कैसे हुई ?"

"यों ही।" अजित ने केवल यही कहा।

मनोरमा चाय नहीं पीती। उसने पिता को चाय देकर एक प्याला चाय और नाश्ते की तश्तरी अजित की ओर बढ़ा दी; पर न तो कोई बात पूछी और न मुँह उठाकर उसकी ओर देखा। दोनों के इस भाव-परिवर्तन को पिता ताड़ गए। नाश्ता करके अजित जब नहाने चला गया तो लड़की से एकान्त में बोले, "यह बात अच्छी नहीं बेबी, अजित के साथ हम दोनों का सम्बन्ध चाहे कितना भी घनिष्ठ क्यों न हो, फिर भी घर में अतिथि का उचित आदर होना ही चाहिए।"

मनोरमा बोली, "मैंने कब कहा कि नहीं होना चाहिए।"

"नहीं कहा, यह सच है; लेकिन हमारे व्यवहार में रूखापन या लापरवाही होना भी बुरा है।"

"मानती हूँ; पर आपने किससे सुना कि मेरे व्यवहार में रूखापन है ?" मनोरमा बोली।

आशु बाबू इस प्रश्न का उत्तर न दे सके। उन्होंने कुछ भी नहीं सुना, न कुछ जानते ही हैं। सब-कुछ अनुमान मात्र है। फिर भी मन उनका हलका न हुआ। थोड़ी देर बाद धीरे-धीरे बोले, "इतनी रात में अजित ने

फिर खाना नहीं चाहा और मैं भी सोने चला गया। तुम तो पहले ही सो गई थीं; हो सकता है, हम लोगों की ओर से कोई लापरवाही हुई हो। उनका मन आज वैसा प्रसन्न नहीं मालूम होता।''

''वे यदि सारी रात मार्ग में बिताना चाहें तो हम लोगों को भी क्या उनके लिए जागना होगा ? क्या यही अतिथि के प्रति हमारा कर्तव्य है, बाबा ?'' मनोरमा बोली।

आशु बाबू हँसकर बोले, ''आज बहुत दिन पहले की एक घटना याद आ गई मणि, जब तुम्हारी माँ जीवित थी। एक बार मैं मछली पकड़ने गुप्ति-पाड़ा जो गया सो लौट नहीं सका। केवल एक रात ही नहीं—तुम्हारी माँ ने पूरी-की-पूरी तीन रातें खिड़की में बैठे-बैठे बिता दीं। उसको कर्तव्य किसने सुझाया था, तब पूछ नहीं सका; परन्तु फिर कभी यदि मिलन हुआ तो अवश्य मालूम करूँगा।'' इतना कहकर उन्होंने क्षण-भर के लिए लड़की की दृष्टि से अपनी आँखों को छिपा लिया।

यह कहानी नहीं। बहुत बार लड़की के सामने कह चुके हैं; मगर फिर भी वह पुरानी नहीं होती। जब कभी याद आती है तभी वह नई बनकर दिखाई दे जाती है।

इतने में नौकरानी आई और मनोरमा उठकर बोली, ''बाबा, मैं जरा रसोई का प्रबन्ध कर आऊँ।'' यह कहकर वह चली गई।

कई बार आशु बाबू ने अजित के विषय में पूछा। एक बार पुस्तक पढ़ रहा है, फिर सूचना मिली, चिट्ठी-पत्री लिख रहा है। दोपहर के भोजन के समय मौन रहा और खाना समाप्त होते ही उठकर चला गया।

आशु बाबू को बहुत दुःख हुआ। बोले, ''क्या बात है मणि ?''

मनोरमा आज पिता की दृष्टि से बच रही थी, अब भी बिना किसी ओर देखे बोली, ''पता नहीं बाबा !''

वे क्षण-भर मन में कुछ सोच-विचारकर मानो अपने-आपसे ही कहने लगे, ''उसके लौटने तक मैं जाग रहा था। तुम्हारा सो जाना ठीक नहीं रहा —लेकिन इसमें ऐसा क्या अपराध है, मेरी समझ में नहीं आता। इससे बढ़कर आश्चर्य और क्या होगा कि इस छोटे से कारण को उसने इतना बड़ा मान लिया।''

मनोरमा मौन थी।

आशु बाबू कुछ देर मौन रहकर बोले, "तुमने उससे पूछा क्यों नहीं?"

मनोरमा ने उत्तर दिया, "पूछने की क्या बात है बाबा?"

"यह तो स्पष्ट है कि वह अप्रसन्न है। शायद उसने सोचा है कि तुमने उसकी उपेक्षा की है। इस प्रकार का व्यर्थ विचार तो उसके मन में नहीं रहने दिया जाना चाहिए।"

"यदि मेरे बारे में व्यर्थ धारणा उन्होंने बना ली हो तो यह उनका अपराध है। एक व्यक्ति के अपराध को सुधारने का उत्तरदायित्व क्या दूसरे पर है बाबा?" मनोरमा बोली।

पिता निरुत्तर रहे। लड़की को वे जिस ढंग से पाला-पोसा है उससे उसके आत्म-सम्मान पर चोट पहुँचे, ऐसी कोई आज्ञा वे नहीं दे सकते। अजित को भी वे जानते थे। वह केवल सब प्रकार से सुरक्षित ही नहीं है, बल्कि उसमें ऐसा एक चारित्रिक गुण उन्होंने पाया था कि आज के अकारण विराग से उसका कोई मिलान नहीं बैठता था। यह निर्णय करना कठिन हो गया कि वह अप्रसन्न हो गया और ऐसी असम्भव बात कैसे उसमें सम्भव हुई।

शाम के समय एक ताँगे को फाटक के अन्दर घुसते देख आशु बाबू ने पूछा तो मालूम हुआ कि वह अजित के लिए आया है।

अजित को उन्होंने बुलाकर जरा-सा हँसकर पूछा, "ताँगे का क्या होगा अजित?"

"जरा घूमने निकलूंगा।"

"मोटर क्या फिर बिगड़ गई?"

"ना! उसकी आप लोगों को आवश्यकता पड़ सकती है।"

"यदि पड़े भी तो उसके लिए बग्घी तो यहाँ है।" और फिर क्षण-भर चुप रहकर बोले, "बेटा अजित, मुझे सच-सच बता दो। मोटर के विषय में कोई बात हुई है क्या?"

अजित ने कहा, "मुझे तो नहीं मालूम, लेकिन आज तो आपके यहाँ गाने-बजाने का आयोजन है। उन लोगों को लाने के लिए, सबको घर पहुँचाने के लिए मोटर की आवश्यकता है। बग्घी की नहीं।"

सवेरे से नाना प्रकार की दुश्चिंताओं के कारण आशु बाबू इस बात को भूल-से गए थे कि कल सभा भंग के बाद आज के लिए भी उन सबको आमन्त्रित कर दिया गया था।

"आज वह सब-कुछ नहीं होगा, अजित।"

"क्यों? एक बार मणि को ही पूछ देखो।" कहकर उन्होंने बेटर को जोर से पुकारा, लड़की को बुलाने भेज दिया और फिर जरा हँसकर कहा, "तुम अप्रसन्न हो बेटा, गाना-बजाना सुनेगा कौन? मणि? अच्छा, वह सब और किसी दिन होगा। अभी जाओ तुम, मोटर लेकर घूम आओ, लेकिन अधिक देर नहीं लगा सकते, और कहे देता हूँ कि तुम्हारा अकेला जाना भी नहीं होगा। ड्राइवर आलसी हुआ जा रहा है। तुम जाओगे किराये पर ताँगा लेकर घूमने? छिः!"

मनोरमा कमरे में पैर रखते ही अजित को देखकर अकड़कर खड़ी हो गई। देखकर आशु बाबू बोले, "मैं पूछता हूँ, आज की बात तो है बेटी, या बिलकुल भूल-भालकर निश्चिंत बठी हो?"

"क्यों बाबा?"

"आज जो सबको निमन्त्रण दे रखा है? तुम लोगों का गाना-वाना समाप्त होने के बाद, उन लोगों को जो आज जिमाना है—सो भी कुछ ध्यान है?"

मनोरमा ने सिर हिलाकर कहा, "है क्यों नहीं, मोटर भेज दी है उन लोगों को लाने के लिए।"

"मोटर भेज दी है ले आने के लिए? मगर खाने-पीने का प्रबन्ध?"

मणि ने कहा, "सब ठीक है, कोई कमी न होगी।"

"अच्छा।" कहकर वे फिर कुर्सी पर पड़ रहे। उनके मुँह पर मानो किसी ने स्याही पोत दी।

मनोरमा चली गई। आशु बाबू कहने लगे, "अजित! लड़की की ओर से क्षमा माँगने में मुझे लज्जा आती है; पर उसकी माँ नहीं—वे होतीं तो मुझे यह बात नहीं कहनी पड़ती। वे ही तुम्हारे मुँह से निकलवा लेतीं कि उससे तुम क्यों अप्रसन्न हो। मगर वह तो हैं नहीं—क्या मुझसे यह बात कही नहीं जा सकती?"

उनका स्वर ऐसा करुण था कि जिसे सुनकर हृदय द्रवित हो उठे। फिर भी अजित मौन रहा। आशु बाबू ने पूछा, "उससे तुम्हारी कोई बातचीत नहीं हुई ?"

अजित ने कहा, "हुई थी।"

आशु बाबू व्याकुल हो उठे, "हुई थी ? कब हुई ? मणि अचानक कल जो सोई थी, सो क्या तुमसे उसने कहा था ?"

अजित धीरे से बोला, "उतनी रात तक जागते रहना सरल नहीं था, और न उचित। सो जातीं तो कोई भी बात न होती, मगर वे सोई नहीं थीं। आपके सोने के बाद ही उनसे भेंट हुई थी।"

"फिर ?"

"फिर और कोई बात नहीं कहूँगा।" कहकर वह चल दिया।

दरवाजे के बाहर से वह कहता चला गया, "शायद कल-परसों तक मैं यहाँ से जाऊँगा।"

आशु बाबू कुछ न समझे, केवल इतना ही समझ पाये कि कोई भयंकर दुर्घटना हो गयी है।

अजित को लेकर ताँगा बाहर चला गया और उसकी आवाज उन्होंने सुन ली। कुछ मिनट बाद मोटर आमन्त्रितों को लेकर आई। बैठक में बैठने पर नौकर ने जाकर संवाद दिया, "बाबू साहब की तबीयत ठीक नहीं है। वे सो गए हैं।"

उस दिन गाना नहीं जमा, खाने-पीने का उत्साह मलीन रहा।

दस

कमल सड़क वाले संकीर्ण बरामदे में खड़ी थी। अजित का ताँगा आकर घर के सामने खड़ा हो गया। आँखें चार होते ही हाथ उठाकर उसने नमस्कार किया। जोर से बोली, "उसे छोड़ दीजिए। खड़ा-खड़ा लौटने में हल्ला मचाएगा।"

जीने में फिर मिले।

अजित ने कहा, "विदा तो कर दिया; परन्तु लौटते समय दूसरा ताँगा मिल भी जायेगा यहाँ ?"

कमल ने कहा, "ना, ऐसा दूर भी कितना है, पैदल ही चले जाना।"

"पैदल जाऊँगा ?"

"क्यों, भय लगेगा ? न हो तो मैं आपको घर तक पहुँचा आऊँगी। आइए।"

वह उसे साथ लेकर रसोईघर में गई और बैठने के लिए कल वाला ही आसन बिछाकर बोली, "जरा देखिए, सारे दिन मैंने कितने सामान बनाए हैं। आप न आते तो मैं क्रोध से सब मोचियों को बुलाकर बाँट देती।"

अजित ने कहा, "आपका क्रोध तो कम नहीं है। मगर उससे इन व्यंजनों का अच्छा उपयोग होता।"

"इसका मतलब ?" कहकर कमल कुछ देर तक अजित के चेहरे की ओर देखती रही और फिर अन्त में स्वयं ही बोली, "अर्थात् आपको तो किसी चीज की कमी नहीं—शायद इसमें से ही बहुत कुछ फेंकना पड़ेगा; लेकिन उन लोगों को बड़ी भारी कमी है, तो इसे खाकर मानो नया जीवन प्राप्त कर लेते। अतः उन्हें खिलाना ही रसोई का सबसे उत्तम उपयोग है, यही न ?"

"इसके अलावा और क्या अर्थ हो सकते हैं ?"

कमल ने कहा, "यह हुआ साधु-सज्जनों की भलाई-बुराई का विचार —यह वास्तव में थोथा व्यर्थ व्यय है। सच्चे आनन्द का अमृत-पान तो अपव्यय में ही है ?"

अजित ने कहा, "मनुष्य का कर्तव्य क्या निरादर है ?"

कमल ने कहा, "हाँ, कर्तव्य में जो आनन्द मालूम होता है वह आनन्द नहीं, आनन्द का भ्रम है। वास्तव में वह दुःख का दूसरा नाम है। वह तो बन्धन है, नहीं तो यह जो शिवनाथ का आसन, जिस पर लाकर आपको बिठाया है, प्रेम के इस अपव्यय में मैं आनन्द कहाँ से पाती ? यह जो दिन-भर भूखे रहकर मैंने इतनी चीजें बनाई हैं—आप आकर खाएँगे इसीलिए ही तो ? अजित बाबू, आज मेरी सब बातें आप नहीं समझेंगे, समझने का प्रयत्न

करने से भी कुछ लाभ नहीं होगा, मगर इतनी वड़ी उलटी बात के अर्थ यदि कभी आपकी समझ में आ जाएँ तो उस दिन मेरी याद कीजिए, पर यह सब छोड़कर आप खाने बैठिए।" और उसने थाल भरकर बहुत तरह के व्यंजन उसके सामने रख दिए।

अजित ने कहा, "यह ठीक है कि आपके कुछ अन्तिम शब्दों का अर्थ मैं समझ नहीं सका लेकिन मालूम होता है कि वे बिलकुल ही अज्ञात हों सो बात नहीं। समझा देने से समझ भी सकता हूँ।"

कमल ने कहा, "कौन समझा देगा अजित बाबू? मुझे इसकी आवश्यकता नहीं।" और हँसते हुए उसने बाकी पात्र उसके आगे बढ़ा दिये।

अजित खाने का आनन्द लेता हुआ बोला, "आपको शायद मालूम नहीं कि कल मैं भूखा ही रहा।"

"जानती तो नहीं, पर मुझे भय था कि इतनी रात में जाकर शायद आप खायेंगे नहीं। मुझसे अपराध हुआ।"

"लेकिन आज ब्याज-समेत वसूल हो रहा है।" कुछ रुककर बोला, "पर मैं बिलकुल जानवर जैसा स्वार्थी हूँ। दिन-भर आपने कुछ खाया नहीं, उसका मैंने जरा भी विचार नहीं किया और भोजन भट्ट की तरह खाने लगा।"

कमल ने हँसकर उत्तर दिया, "यह मेरे अपने खाने से भी अधिक है। इसी से झटपट आपको बिठा दिया अजित बाबू।" फिर जरा ठहरकर कहा, "और वह सब मांस-मछली का मामला—मैं तो खाती नहीं।"

"फिर आप क्या खाएँगी?"

"यह हैं ना। मेरे लिए चावल-दाल-आलू उबले हुए रखे हैं। यही मेरा खाना है।" कमल ने कहा।

अजित का कुतूहल दूर नहीं हुआ। गरीबी की बात न हो, उसने दूसरी ही बात छेड़कर कहा, "आपको देखकर मुझे आरम्भ से ही ऐसा आश्चर्य हुआ कि कुछ नहीं कह सकता।"

कमल हँसकर बोली, "वह मेरा रूप है। पर उसने भी हार स्वीकार कर ली अक्षय बाबू के आगे। वह उन्हें हरा नहीं सका।"

अजित लज्जित होकर भी हँसकर बोला, "मालूम नहीं होता। वे

गोलकुण्डा के मणिक हैं; लेकिन मुझे तो सबसे बढ़कर आश्चर्य हुआ है आपकी बातों पर। धैर्य छूट जाता है—क्रोध आ जाता है। मालूम होता है, किसी भी सत्य को आप टिकने नहीं देना चाहतीं। हाथ बढ़ाकर मार्ग रोकना मानो आपका स्वभाव है।''

''पर मुझसे भी बड़ा एक आश्चर्य वहाँ था—जैसी महान् देह थी, वैसी ही अभिराम शान्ति, धैर्य का जैसे हिमालय। उत्पात की भाप तक वहाँ नहीं। जी होता है कि मैं उनकी बेटी होती—''

आशु बाबू के प्रति अजित अंतःकरण में देवता की भाँति भक्ति रखता है। फिर भी उसने कहा, ''परन्तु आप दोनों की विपरीत आकृति कैसे मिली?''

कमल ने कहा, ''पता नहीं। मैंने केवल अपनी इच्छा की ही बात कही है। मणि के समान मैं भी उनकी लड़की होकर पैदा होती।'' कुछ देर बाद बोली, ''मेरे पिताजी भी ऐसे ही धीर और शान्त व्यक्ति थे।''

कमल दासी की कन्या है, छोटी जात की लड़की है—सबके मुँह से अजित ने यही बात सुनी थी। अब स्वयं कमल के मुँह से उसके पिता के गुणों का उल्लेख सुनकर उसका रहस्य जानने की इच्छा हुई। मगर इस भय से कि पूछने-ताछने से कहीं उसको दुःख के स्थान पर असावधानी हो, स्नेह और करुणा से उथल-पुथल हो गया।

अजित खाना समाप्त करके भी नहीं उठा। बोला, ''पहले आप खा लें, उसके बाद।''

''कष्ट न पायें अजित बाबू। आप हाथ-मुँह धो आइए—मैं खा रही हूँ। आप अच्छे आदमी हैं।'' कहकर कमल हँसती हुई अपना भोजन उघाड़कर खाने लगी। चावल, दाल, उबले हुए आलू ही थे। सूखकर बदरंग हो गए थे। कल उसने सुना था कि दिन में केवल एक बार खाती है और आज जाना कि वह यही है जो सामने दीख रहा है। युक्ति और तर्क के छल से कमल मुँह से चाहे जो कुछ कहे, पर भोग के क्षेत्र में उसके इस कठोर आत्म-संयम से अजित की मुग्ध आँखें माधुर्य और श्रद्धा से पूर्ण हो गईं। छल, असम्मान और अनादर से जिन व्यक्तियों ने लांछित किया था उन सबके प्रति घृणा की सीमा न रही। वही बोला, ''अपने को बड़ा मान-

कर जो लोग आपका अपमान करें, आपको दूर रखना चाहते हैं, वे तो आपके पाँव छूने के योग्य नहीं। संसार में देवी का आसन यदि किसी के लिए हो तो वह आपके लिए है।"

कमल ने आश्चर्य के साथ मुँह उठाकर पूछा, "क्यों?"

"क्यों, सो मैं नहीं जानता।"

कमल का विस्मय दूर नहीं हुआ, मगर वह चुप थी।

अजित ने कहा, "यदि क्षमा करें तो एक बात पूछूँ?"

"क्या बात?"

"पापी शिवनाथ से अपमानित और दुखी होने पर क्या आपने यह व्रत लिया है?"

कमल ने कहा, "ना। अपने पहले पति के मरने के बाद से ही मैं यह खाया करती हूँ। उससे मुझे कोई कष्ट नहीं होता।"

अजित के मुँह पर जैसे किसी ने थप्पड़ मार दिया। उसने कुछ देर तक मौन रहकर अपने को सँभालते हुए धीरे-धीरे पूछा, "आपका एक बार पहले भी विवाह हुआ था?"

कमल ने कहा, "हाँ, एक आसामी क्रिश्चियन थे। उनके मरने के बाद ही मेरे पिता भी अचानक घोड़े से गिरकर मर गए। उस समय शिवनाथ के एक चाचा थे चाय-बगीचे में हैडक्लर्क। उनकी स्त्री नहीं थी। माँ को उन्होंने अपने यहाँ आश्रय दिया। मैं भी उनके घर आ गई। तरह-तरह के दुःख-कष्टों के बीच रहते-रहते एक समय खाने की ही मेरी आदत पड़ गई है; पर इससे शरीर और मन दोनों अच्छे रहते हैं।"

अजित ने एक गहरी साँस लेकर कहा, "मैंने सुना है आपकी जाति जलाहा है। क्या यह सच है?"

कमल ने कहा, "लोग तो यही बताते हैं। पर माँ कहती थीं कि उनके पिता आप लोगों की जाति के ही एक कविराज थे।" कहकर कमल जरा हँस दी।

"वह भी ठीक है।" अजित बोला।

कमल ने कहा, "माँ के पास रूप था, पर रुचि नहीं। ब्याह के विषय में कोई बदनामी हो जाने के कारण उनके पति उन्हें लेकर आसाम के चाय-

बगीचे में भाग गए थे। पर वहाँ वे जिये नहीं—कुछ ही महीनों में निरन्तर ज्वर से मर गए। इसके तीन साल बाद मेरा जन्म हुआ बगीचे के बड़े साहब के घर।"

कमल के वंश और जन्म का वर्णन सुनकर क्षण-भर पहले अजित का स्नेह और श्रद्धा से अभिभूत हृदय संकुचित हो गया। उसे सबसे अधिक यह बुरा लगा कि अपनी और माँ की इतनी बड़ी गुप्त बात कहने में इसे जरा भी लज्जा नहीं आई। अनायास कह गई—माँ के पास रूप था, पर रुचि नहीं, वह इसके निकट 'रुचि का विकास' मात्र है। अधिक कुछ नहीं।

"मेरे पिता थे साधु-सज्जन। चरित्र में, पाण्डित्य में, सच्चाई में—ऐसे आदमी बहुत कम हैं अजित बाबू। जीवन के उन्नीस साल मैंने उन्हीं के पास बिताए हैं।" कमल बोली।

अजित को सन्देह हुआ था कि शायद यह केवल हँसी है। पर यह कैसे? वह बोला, "यह सब क्या आप सच कह रही हैं?"

कमल ने जरा कुछ विस्मय के साथ उत्तर दिया, "मैं तो कभी झूठ नहीं बोलती अजित बाबू। इस जीवन में कभी किसी कारण झूठी चिन्ता, झूठा अभिमान, झूठी बात का सहारा मुझे न लेना पड़े--पिताजी यही शिक्षा बार-बार दे गए।" कहकर पिता की स्मृति मुख-मण्डल पर चमक उठी।

अजित विश्वास न करके बोला, "आप एक अंग्रेज के पास ही यदि इतनी बड़ी हुई हैं तो आपको अंग्रेजी भी आनी चाहिए?"

कमल ने उत्तर में जरा मुस्करा दिया। बोली, "मेरा खाना हो गया, चलिए उस कमरे में चलें।"

"ना, अब मैं जाऊँगा।"

"बैठेंगे नहीं? आज बड़ी जल्दी चले जाएँगे?"

"हाँ, आज और बैठने का समय नहीं है।"

इतनी देर बाद कमल ने मुँह उठाकर उसके मुँह की अत्यन्त कठोरता पर ध्यान दिया। शायद कारण भी अनुमान कर लिया। वह कुछ देर निर्निमेष दृष्टि से देखकर बोली, "अच्छा, जाइए।"

इसके बाद अजित क्या कहे, समझ में न आया। अन्त में बोला, "आप क्या आगरे में ही रहेंगी?"

"क्यों ?"

"मान लीजिए, शिवनाथ बाबू भविष्य में यदि नहीं आए। उन पर तो आपका कोई जोर नहीं है ?"

कमल ने कहा, "ना। आप लोगों के यहाँ तो वे नित्य जाते हैं। गुप्त रूप से जानकर क्या आप मुझे बता नहीं सकते ?"

"उससे क्या लाभ ?"

कमल ने कहा, "होगा क्या, घर का किराया इस महीने का दिया हुआ ही है—मैं कल-परसों तक और कहीं चली जा सकती हूँ।"

"कहाँ जाएँगी ?"

कमल ने इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया, चुप रही।

अजित ने पूछा, "आपके पास इस समय शायद रुपये नहीं हैं ?"

कमल ने इस प्रश्न का भी उत्तर नहीं दिया।

अजित कुछ देर तक मौन रहकर बोला, "आते समय कुछ रुपये लेता आया था, लीजिएगा ?"

"ना।"

"ना क्यों ? मुझे मालूम है कि आपके पास रुपये नहीं हैं और जो भी कुछ थे, सो आज मेरे लिए समाप्त हो गए हैं।"

कुछ उत्तर न पाकर बोला, "जरूरत पड़ने पर क्या मित्रों से कोई कुछ नहीं लेता ?"

"पर आप मित्र तो नहीं हैं ?" कमल ने कहा।

"न सही। पर अमित्रों से भी लोग ऋण ले लेते हैं। आप भी वही कीजिए।" अजित बोला।

कमल ने गरदन हिलाकर कहा, "आपसे मैं कह चुकी हूँ, मैं कभी झूठ नहीं बोलती।"

बात कोमल थी, पर तीर के समान तेज। अजित समझ गया कि इसमें हेर-फेर नहीं हो सकता। ध्यान से देखा तो मालूम हुआ कि पहले दिन उसके शरीर पर जो मामूली-सा जेवर था वह भी आज नहीं है। सम्भवतः घर का किराया चुकाने में और इधर कई दिनों का खर्च चलाने में वह समाप्त हो चुका था। वेदना के भार से अजित का मन रो उठा। उसने

पूछा, "आपने निश्चय कर लिया है यहाँ से जाने का ?"

कमल ने कहा, "इसके अतिरिक्त और कोई उपाय ही नहीं है।"

उपाय क्या है, यह उसे नहीं पता। इसीलिए उसे कष्ट होने लगा। अन्तिम प्रयत्न करके उससे कहा, "दुनिया में क्या कोई भी नहीं है जिससे इस समय आप कुछ सहायता ले सकें ?"

कमल ने जरा सोचकर कहा, "है, और वेटी के समान केवल उन्हीं के पास जाकर हाथ पसारकर माँग सकती हूँ। पर आपकी रात हुई जा रही है। साथ चलकर पहुँचा दूं क्या ?'

अजित बोला, "मैं अकेला ही जा सकता हूँ।"

"तो जाइए, नमस्कार।" कहकर अपने सोने के कमरे में चली गई।

दो-एक मिनट अजित वहाँ स्तब्ध होकर खड़ा रहा। फिर धीरे-धीरे नीचे उतर गया—चुप-चुप।

ग्यारह

आरामकुर्सी के दोनों हत्थों पर पैर फैलाकर आशु वावू ध्यानमग्न लेटे हुए कुछ पढ़ रहे थे। हाथ के कागज पर पीछे के दरवाजे की तरफ से एक छाया पड़ते ही वे समझ गए कि उनके नौकरों की निद्रा समाप्त हुई।

"कच्ची नींद में तो उठ बैठे जदु। सिर दुखेगा। कष्ट न हो तो रजाई से जरा इस अपाहिज के पैर ढक दो।"

आगंतुक ने रजाई को उठाकर उनके पैरों के नीचे तलवों तक भली-भाँति ढक दिए।

आशु बाबू ने कहा, "हो गया, हो गया, अधिक प्रयत्न की जरूरत नहीं। अव एक चुरुट देकर थोड़ा सो लो।"

आशु वावू ने हाथ वढ़ाकर चुरुट ले लिया और दियासलाई जलने के शब्द के साथ ऊपर मुँह उठाकर देखा तो दंग रहकर वोले, "यही तो सोच रहा था कि यह जदुआ का हाथ है। इस प्रकार पैर ढकना तो उसकी चौदह पीढ़ियाँ भी न जानती होंगी।"

"पर इधर जो हाथ जला जा रहा है।" कमल बोली।

आशु बाबू ने उसके हाथ से जलती हुई दियासलाई लेकर फेंक दी और उस हाथ को अपने हाथ में लेकर उसे जोर से सामने खींचकर बोले, "इतने दिन से तुम्हें देखा नहीं बेटी !"

उन्होंने पहले-पहल कमल को 'बेटी' कहकर पुकारा।

कमल कुर्सी से जरा दूर बैठना चाहती थी, पर उन्होंने कहा, "वहाँ नहीं बेटी, करीब आकर बैठो।" और उसे बिलकुल पास खींचकर बोले, "अचानक कैसे आई कमल ?"

कमल ने कहा, "आज आपको देखने को बहुत जी चाहने लगा, इसी से चली आई।"

उत्तर में केवल आशु बाबू ने कहा, "अच्छा किया।"

इससे अधिक वे न बोल सके। सभी लोगों के समान उन्हें भी मालूम था कि कमल का कोई संगी-साथी नहीं है, कोई उसको चाहता नहीं, किसी के घर जाने का उसे अधिकार नहीं—फिर भी यह बात मुँह से न निकली कि कमल, तुम्हारी जब इच्छा हो, प्रसन्नता से चली आया करो। मेरे पास तुम्हें कोई संकोच नहीं होना चाहिए। हाथ के कागज नीचे खिसक जाने पर कमल ने उन्हें उठा लिया और उनके हाथ में देते हुए कहा, "आप पढ़ रहे थे, मैंने असमय आकर बाधा डाली।"

आशु बाबू बोले, "मैं पढ़ चुका। जो कुछ शेष है उसे बिना पढ़े काम चल सकता है, और पढ़ने की इच्छा भी नहीं है।" कुछ ठहरकर फिर कहा, "फिर तुम्हारे चले जाने पर मुझे अकेला रहना पड़ेगा, उससे अच्छा तो यह है कि तुम बातें करो, मैं सुनूँ।"

कमल ने कहा, "मैं आपसे दिन-भर बातें कर सकूँ तो कहना ही क्या है। पर दूसरे जो नाराज होंगे ?"

उसके मुँह पर हँसी होने पर भी आशु बाबू को चोट लगी, बोले, "बात तुम्हारी झूठ नहीं है कमल ! पर जो लोग अप्रसन्न होंगे उनमें से यहाँ कोई नहीं है। यहाँ के नये मजिस्ट्रेट एक बंगाली हैं। उनकी पत्नी से मणि की मित्रता है, दोनों एक साथ कालेज में पढ़ी हैं। दो दिन पूर्व वे पति के साथ आगरा आयी हैं—मणि उन्हीं के यहाँ घूमने गयी है। शायद रात को लौटेगी।"

कमल ने हँसते हुए पूछा, "आपने कहा कि लोग अप्रसन्न होंगे—वह एक मनोरमा हुई। बाकी और कौन हैं ?"

आशु वावू ने कहा,"सारे ही हैं। यहाँ ऐसों की कमी नहीं। पहले मालूम होता था कि अजित की तुम्हारे प्रति अप्रसन्नता नहीं है, पर अब देखता हूँ कि उसका प्रेम ही सबसे बढ़कर है। वह तो अक्षय बावू से भी बढ़ गया। जब आया था तब उसे ऐसा नहीं देखा था, अचानक दो ही तीन दिन में मानो वह बिल्कुल बदल गया है। अब अविनाश को भी ऐसा ही देख रहा हूँ। इन सबों ने मिलकर मानो तुम्हारे विरुद्ध षड्यन्त्र-सा रच रखा है।"

कमल हँसकर बोली, "पर मुझ जैसी समाज और संसार से बहिष्कृत एक तुच्छ औरत के विरुद्ध षड्यन्त्र किसलिए ? मैं तो किसी के घर जाती भी नहीं।"

आशु बावू ने कहा, "वह तो ठीक है। शहर में किसी को पता नहीं कि तुम्हारा घर कहाँ है, पर इसलिए तुम तुच्छ नहीं हो कमल। यह भी सच है कि ये लोग न तुम्हें भूल ही सकते हैं और न क्षमा ही कर सकते हैं। तुम्हारी चर्चा किये बिना, तुम्हें कोंचे बगैर इन्हें न चैन मिलता है न शांति," कहते-कहते वे अचानक हाथ के कागजों को उठाकर बोले, "यह क्या है, जानती हो? अक्षय बावू की रचना है। अंग्रेजी में नहीं होती तो तुम्हें सुनाता। नाम-धाम नहीं है, पर शुरू से अन्त तक केवल तुम्हारी ही बातें हैं, तुम्हीं पर आक्रमण है। कल मजिस्ट्रेट साहब के घर पर सुनते हैं नारी कल्याण समिति का उद्घाटन होगा, यह उसी का मंगल अनुष्ठान है।" यह कहकर उन्होंने उसे दूर फेंक दिया और कहा, "यह केवल निबन्ध ही नहीं है, बीच-बीच में कहानी के तौर पर पात्र-पात्रियों के मुँह से इसमें नाना प्रकार की बातें भी कहलवाई गयी हैं। इसकी मूल नीति के साथ किसी का विरोध नहीं—विरोध हो भी नहीं सकता। पर इसमें वही बात नहीं है, व्यक्ति विशेष पर पग-पग पर चोट करते रहने में ही मानो इसका आनन्द है। पर अक्षय का आनन्द और मेरा आनन्द एक नहीं है कमल। इसे तो मैं अच्छा नहीं कह सकता।"

कमल ने कहा, "पर मैं तो इस लेख को सुनने नहीं जाऊँगी—फिर मुझ पर चोट से क्या लाभ हुआ ?"

आशु बाबू ने कहा, "कुछ भी सार्थकता नहीं, इससे शायद उन लोगों ने मुझे पढ़ने को दिया है। सोचा होगा, 'डूबते में से मुट्ठी-भर ही सही।' इस बूढ़े को दुःख देकर जितना दुःख मिटाया जा सके उतना ही अच्छा।" कहते हुए उन्होंने हाथ बढ़ाकर फिर एक बार कमल को अपनी ओर खींचा। उस स्पर्श से उसका अन्तःकरण न जाने कैसा हो उठा। वह कुछ ठहरकर बोली, "आपकी दुर्बलता को तो उन लोगों ने ताड़ लिया है, पर आपके भीतर के व्यक्तित्व को वे नहीं पहचान सके।"

"तुमने पहचाना है बेटी?"

"शायद उन लोगों से अधिक।"

"तभी ये सोचते हैं कि हमेशा प्रसन्न रहने वाले इस बूढ़े के समान कोई सुखी नहीं। रुपया है; जमीन-जायदाद—"

"यह तो झूठ नहीं।"

"झूठ नहीं। यह पर्याप्त है; पर यह आदमी के लिए क्या है कमल?"

"बहुत है आशु बाबू।" हँसकर कमल ने कहा।

आशु बाबू ने गरदन फेरकर उसकी ओर देखा, फिर कहा, "तुम कुछ विचार न करो तो तुमसे एक बात कहूँ?"

"कहिये?"

"मैं बुड्ढा आदमी हूँ और तुम मेरी मणि की उमर की हो। तुम्हारे मुँह से अपना नाम मेरे खुद के कानों में न जाने कैसा खटकता है। तुम्हें अस्वीकार न हो तो तुम मुझे 'चाचाजी' कहा करो।"

उत्तर न पाकर वे फिर कहने लगे, "कोई लँगड़ा चाचा कहकर चिढ़ाये कमल तो उसे विनय के साथ कहना मेरे लिए इतना ही बहुत है।"

कमल छत की ओर आँखें किये आँसू रोकने का प्रयत्न करने लगी। कुछ उत्तर न दे सकी। इन दोनों में कहीं से भी कोई मेल नहीं था। शिक्षा, संस्कार, रीति-नीति, धर्म और सामाजिक व्यवस्था सभी में काफी अन्तर है। जहाँ कोई सम्बन्ध नहीं, वहाँ केवल संबोधन के छल से बाँध रखने की चतुराई को देखकर कमल की आँखों में बहुत दिनों बाद आज आँसू भर आये।

"क्यों बिटिया, कह सकोगी?" आशु बाबू ने पूछा।

कमल ने उमड़ते हुए आँसुओं को सँभालकर कहा, "ना।"

"ना ? ना क्यों ?"

कमल ने दूसरी बात छेड़ दी। बोली, "अजीत बाबू कहाँ हैं ?"

"क्या मालूम, शायद घर पर ही होगा।" फिर कुछ देर चुप रहकर धीरे से बोले, "कई दिनों से मेरे पास वह आता-जाता ही नहीं, और शायद वह यहाँ से शीघ्र ही चला जायेगा।"

"कहाँ जायेंगे ?"

आशु बाबू ने हँसने का प्रयास करते हुए कहा, "बूढ़े आदमी को सब लोग क्या सब बातें बताते हैं, बिटिया ? आवश्यकता भी नहीं समझते।" फिर जरा ठहरकर बोले, "मणि के साथ उसका सम्बन्ध बहुत दिनों से निश्चित था। सहसा मालूम हो रहा है कि दोनों में किसी बात पर झगड़ा हो गया है। कोई किसी के साथ अच्छी प्रकार बात ही नहीं करता।"

कमल चुप हो रही। आशु बाबू गहरी साँस लेकर बोले—"जगदीश्वर की इच्छा। एक गाने-बजाने में रत है और दूसरा अपने पुराने अभ्यासों को ठीक करने में लगा है। इस समय यही तो चल रहा है।"

कमल से अब नहीं रहा गया। कुतूहल में पूछ बैठी, "पुराने अभ्यास क्या ?"

आशु बाबू ने कहा, "बहुत-से हैं। गेरुआ पहनकर संन्यासी हुआ, फिर मणि से प्रेम किया, देशोद्धार के काम में जेल गया, विलायत जाकर इंजीनियर हुआ। वहाँ से लौटकर आने के बाद गृहस्थ होने की इच्छा हुई—पर अब वह सब-कुछ बदल गया है। पहले मांस-मछली नहीं खाता था, उसके बाद खाने लगा। अब कल-परसों से फिर छोड़ बैठा है। जदु कहता है, बाबू घंटे-घंटे-भर कमरे में बैठे नाक मूँदकर योगाभ्यास किया करते हैं।"

"योगाभ्यास करते हैं ?"

"हाँ। नौकर कहता था, देश लौटते समय काशी उतरकर समुद्र-यात्रा का प्रायश्चित्त करेगा।"

कमल ने विस्मय से कहा, "समुद्र-यात्रा के लिए प्रायश्चित्त करेंगे ?"

आशु बाबू बोले, "वह कर सकता है कमल !"

कमल हँसी। कुछ कहना ही चाहती थी कि इतने में नौकर ने संवाद

दिया, अविनाश, अक्षय, हरेन्द्र, अजित बाबू आदि लोग आ रहे हैं।

सुनकर केवल कमल का ही नहीं, बल्कि आशु बाबू तक का मुँह पीला पड़ गया। क्षण-भर बाद आगंतुक कमरे में घुसे। हरेन्द्र ने हाथ उठाकर कमल को नमस्कार करके कहा, "अच्छी तो हैं? बहुत दिनों से आपको देखा नहीं।"

अविनाश ने हँसने जैसी आकृति से इधर-उधर गरदन हिलायी।

अक्षय सीधे मार्ग से आया और सीधे अभिप्राय से पत्थर के समान अवज्ञा और विरक्ति के साथ एक कुर्सी पर बैठ गया। उसने आशु बाबू से पूछा, "मेरा लेख पढ़ा?" यह पूछने के पश्चात् उसकी दृष्टि अचानक मिट्टी में लोटते हुए अपने लेख पर पड़ी। उसे वह उठाने जा रहा था कि हरेन्द्र ने उसे रोकते हुए कहा, "रहने दीजिये न अक्षय बाबू! झाड़ू लगाते समय नौकर स्वयं फेंक देगा।"

उनका हाथ अलग करके अक्षय ने कागज उठा लिए।

"हाँ, पढ़ लिया।" कहकर आशु बाबू उठ बैठे।

अविनाश बोला—"मैंने भी अक्षय का लेख आरम्भ से आखिर तक ध्यान से पढ़ा, अधिकांश बातें सच और मूल्यवान हैं। देश की सामाजिक व्यवस्था का सुधार अच्छी तरह जाने हुए और पक्के मार्ग पर ही करना चाहिए। मानते हैं कि यूरोप के समागम से बहुत-सी चीजें पायी हैं और अपनी बहुतेरी भूलों को हमने देखा है, परन्तु हमारा सुधार हमारे अपने मार्ग पर ही होगा। दूसरों के अनुकरण से हमारा कल्याण नहीं होगा। भारतीय नारी की जो विशिष्टता है, यदि लोभ और मोह के वश होकर हम उसे उससे पतित करें, तो हम असफल होंगे।—सत्य है न अक्षय बाबू?"

आशु बाबू ने कहा, "इस विषय में तो कोई संदेह नहीं, अविनाश बाबू। शायद भारत का कोई भी आदमी इसका विरोध नहीं करता।"

अक्षय बाबू ने कहा, "करने का कारण ही नहीं। इसके अतिरिक्त और भी एक विषय इस लेख में है, वह कल नारी कल्याण समिति में अपने भाषण में कहूँगा।"

आशु बाबू ने कमल की ओर मुँह करके कहा, "तुम्हारे लिए तो समिति की तरफ से निमन्त्रण आया नहीं और मैं गठिया से लाचार हूँ। अब है यह

तुम्हीं लोगों की भलाई-बुराई की वात। अच्छा कमल, तुम्हें तो इस वात पर आपत्ति नहीं होगी ?''

और किसी समय होता तो आज के दिन कमल चुप रहती, पर एक तो उसका मन ग्लानि से भरा हुआ था; दूसरे, इतने आदमियों की इस पौरुषहीन अभिमानपूर्ण प्रतिकूलता से उसके मन में एक आग जल उठी। अपने को यथासंभव संयत करके वह मुँह उठाकर हंसती हुई बोली, ''कौन-सी वात पर आशु बाबू ? अनुकरण पर या भारतीय विशिष्टता पर ?''

आशु वाबू ने कहा, ''मान लो दोनों ही पर ?''

कमल ने कहा, ''यदि केवल बाहर का ही अनुकरण हो तो वह धोखा है, अनुकरण है ही नहीं, क्योंकि तब वह आकृति से मेल खाते हुए भी प्रकृति से नहीं मिलता। मगर भीतर-बाहर से वह यदि एक-सी हो तो अनुकरण होने के कारण लज्जित होने की बात नहीं।''

आशु वावू बोले, ''है क्यों नहीं कमल, है। उस प्रकार सर्वांगणीय अनुकरण में हम अपनी विशेषता खो बैठते हैं। अपने को बिलकुल ही खो बैठना यदि दुःख और लज्जा नहीं, तो क्या है, बताओ ?''

कमल ने कहा, ''भले ही खो बैठे हों आशु वावू ! भारत के वैशिष्ट्य में भेद है, परन्तु किसी देश के किसी वैशिष्ट्य के लिए मनुष्य नहीं है, बल्कि मनुष्य के लिए वह वैशिष्ट्य है। उसके लिए कल्याणकर है या नहीं, बस इसके अतिरिक्त और सब बातें केवल अंध-मोह है।''

''केवल अंध-मोह कमल, उससे अधिक कुछ नहीं है ?'' दुखित होकर आशु बाबू ने कहा।

कमल ने कहा, ''ना, उससे अधिक कुछ भी नहीं है। केवल इसलिए कि जाति की एक विशेषता है। क्या उस देश के मनुष्यों को अपने कल्याण-अकल्याण का ध्यान किये बिना उसी मार्ग पर चलते रहना होगा ? मनुष्य से बढ़कर मनुष्य की विशेषता नहीं हो सकती। इस प्रकार हम विशेषता और मनुष्य दोनों को खो देते हैं। यही वास्तविक लज्जा है आशु बाबू।''

आशु वावू हत्बुद्धि होकर वोले, ''तब तो फिर सब एकाकार हो जायेगा ? भारतीय के रूप में फिर हमें कौन पहचानेगा ? इतिहास ऐसी घटनाओं का साक्षी है।''

आशु बाबू के व्यथित और कुण्ठित भाव देखकर कमल ने हंसते हुए कहा, "तब मानव ऋषियों के वंशधर के रूप में भले ही न पहचाना जाय, पर मनुष्य के रूप में अवश्य पहचाना जायेगा और जिसे आप ईश्वर कहते हैं उसे भी पहचानने में भूल न होगी।"

अक्षय ने कठोर होकर कहा, "ईश्वर केवल हम लोगों का ही है? आपका नहीं?"

"ना।" कमल बोली।

अक्षय ने कहा, "यह शिवनाथ की प्रतिध्वनि है, सिखायी हुई बात है।"

"ब्रूट!" हरेन्द्र कह उठा।

"देखिये, हरेन्द्र बाबू—"

"देख रहा हूँ। बीस्ट!"

आशु बाबू मानो स्वप्न से जाग उठे। बोले, "देखो कमल, दूसरों की बात मैं नहीं कहता, पर भारतीय सभ्यता केवल बात-ही-बात नहीं है। इसके नष्ट होने में कितनी बड़ी हानि है, यह समझना कठिन है। कितने धर्म, कितने आदर्श, कितने पुराण-इतिहास, काव्य, उपाख्यान, शिल्प—कितनी-कितनी अमूल्य सम्पदाएँ—सब इसी सभ्यता पर आधारित हैं। फिर तो यह सब समाप्त हो जायेंगे।"

कमल ने कहा, "इन्हें रखने के लिए इतनी व्यग्रता क्यों? जो नहीं जाने के, वो नहीं जायेंगे। मनुष्य की आवश्यकताओं के अनुसार फिर वे नवीन रूप, नवीन सौन्दर्य, नवीन मूल्य लेकर दिखायी देंगे। वही होगा उनका सच्चा परिचय। केवल इसलिए कि बहुत दिनों से कोई चीज है, उसे और भी बहुत दिन तक रहना होगा; यह सब व्यर्थ है?"

अक्षय ने कहा, "इसके समझने की शक्ति आपमें नहीं है।"

हरेन्द्र ने कहा, "आपके अशिष्ट व्यवहार पर मुझे आपति है।"

आशु बाबू ने कहा, "यह मैं नहीं कहता कमल कि तुम्हारी युक्तियों में सत्य नहीं, पर जिसकी तुम अवज्ञा से उपेक्षा कर रही हो उसके भीतर भी बहुत है। कई कारणों से हमारे सामाजिक विधि-विधानों पर तुम्हारी अश्रद्धा हो गयी है। मगर एक बात मत भूलो कमल कि बाहर के बहुत-से उत्पात हमें सहने पड़े हैं। फिर भी जो आज तक हम अपनी सम्पूर्ण विशेषताओं को

लिए जीवित हैं सो केवल इसीलिए कि हमारा आधार सत्य था। दूसरी ओर बहुत-सी जातियाँ बिलकुल ही नष्ट हो चुकी हैं।''

कमल ने कहा, ''तो इसमें भी दुःख किस बात का है? हमेशा उन्हें स्थान घरे बैठे रहने की भी आवश्यकता नहीं।''

''यह दूसरी बात है कमल।'' आशु बाबू बोले।

कमल कहने लगी, ''भले ही हो। पिताजी कहते थे कि आर्यों की एक शाखा यूरोप में जाकर रहने लगी थी; आज वह नहीं है। मगर उसके बदले जो हैं, वे और भी बड़े हैं। ऐसा ही यदि यहाँ होता, तो उनके समान ही हम भी आज पूर्वजों के लिए शोक करने न बैठते। आप कह रहे थे भूत के उपद्रवों की बात, पर उनसे भी बढ़कर उपद्रव भविष्य में हमारे भाग्य में हो सकते हैं। तब हम किसके बल पर जीवित रहेंगे, भला बताइये?''

आशु बाबू मौन रहे, परन्तु अक्षय कठोर स्वर में बोले, ''तब भी हम अपने उस आदर्श की नित्यता के बल पर जीवित रहेंगे जो हजारों युगों से हमारे मन में विद्यमान है। जो आदर्श हमारे दान में, हमारे पुण्य में, हमारी तपस्या में उपस्थित है, जो आदर्श हमारी नारी जाति के अक्षय सतीत्व में निहित है, हम उसी के बल पर जीवित रहेंगे।''

अजित उनकी ओर आँखें फाड़-फाड़कर देखता रहा।

क्षण-भर के लिए कमल भी चुप हो रही। उसे ध्यान आया कि निबन्ध लिखकर इसी व्यक्ति ने उस पर आक्रमण किया। उसे वह कल नारी जाति के कल्याण के लिए अनेक नारियों के समक्ष अहंकार के साथ पढ़ेगा। भीषण क्रोध से उसका मुँह लाल हो उठा, परन्तु फिर भी उसने अपने को सँभालकर स्वाभाविक स्वर में कहा, ''आपके साथ बात करने में अक्षय बाबू, मेरे आत्म-सम्मान को चोट लगती है।'' यह कहकर वह आशु बाबू की ओर मुँह फेरकर बोली, ''यही बात मैंने आपसे कहनी चाही थी कि कोई भी आदर्श केवल इसीलिए वह बहुत समय तक स्थायी रहा है, क्या मिटेगा नहीं। और उसके बदल जाने में भी कोई शर्म की बात नहीं। यहाँ तक कि जाति की विशिष्टता भी यदि जाये तो भी एक उदाहरण देती हूँ। अतिथि-सत्कार हमारा एक बड़ा आदर्श है। कितने काव्य, कितने कथानक इस पर रचे जा चुके हैं। अतिथि को प्रसन्न करने के लिए दाता कर्ण ने अपने पुत्र तक की हत्या की

थी। परन्तु यह कार्य आज के युग में कुत्सित ही नहीं बल्कि वीभत्स माना जायेगा। एक सती स्त्री ने पति को कंधे पर रखकर गणिकालय पहुँचा दिया था—सतीत्व का यह आदर्श किसी दिन अतुलनीय था—पर आज ऐसी घटना मनुष्य के हृदय में घृणा ही उत्पन्न करेगी। आपका जो त्याग, लोगों के मन में आज श्रद्धा और विस्मय का कारण हो रहा है, एक दिन ऐसा भी आ सकता है जब इसे कृपा की और असफल आत्मनिग्रह की ज्यादती मानकर लोग उसकी हँसी करेंगे।"

पल-भर के लिए आशु बाबू का चेहरा इस चोट से फक पड़ गया। वे बोले, "कमल, इसे निग्रह के रूप में ले रही हो। यह तो मेरा अनेक युगों का आनन्दधन है!"

कमल ने कहा, "केवल वर्ष गिनकर आदर्श का मूल्य नहीं आँका जा सकता। गलतियों से भरे समाज के हजारों वर्ष, सम्भव है, भविष्य के दस वर्ष के वेग में वह जायें। वे दस वर्ष ही उन हजारों वर्ष से बड़े हैं!"

अजित सीधा खड़ा होकर बोला, "आपकी बातों की उग्रता से इन लोगों को शायद आश्चर्य हुआ होगा; मगर मुझे जरा भी आश्चर्य नहीं हुआ। मैं जानता हूँ कि इस विजातीय मनोभाव का मूलस्रोत कहाँ है। किसलिए हमारे सब सुन्दर आदर्शों के प्रति आपको इतनी घृणा है। मगर चलिये, अब हमारे पास व्यर्थ देर करने का समय नहीं है।"

अजित के पीछे-पीछे सब-के-सब चुपचाप बाहर निकल गये।

किसी ने उससे अभिवादन तक नहीं किया, और न किसी ने उसकी ओर देखा। तर्क जब हार मानने लगे तब पलायन करके पुरुषों के दल ने विजय घोषणा करके अपना पौरुष बचाया।

उन लोगों के चले जाने पर आशु बाबू ने कहा, "कमल, मुझ पर ही आज तुमने सबसे अधिक आघात किया किन्तु मैंने ही आज तुम्हें सम्पूर्ण हृदय से प्यार किया है। मेरी मणि से मानो किसी अंश में भी तुम कम नहीं हो बेटी।"

कमल ने कहा, "आप वास्तव में महान् पुरुष हैं चाचाजी! आप तो इन लोगों के समान पाखण्डी नहीं हैं। पर मेरा भी समय निकला जा रहा है, मैं जाती हूँ।" इतना कहकर उसने उनके पैर छूकर प्रणाम किया।

कमल प्रणाम किसी को नहीं करती। इसके इस प्रणाम से आशु बाबू चंचल हो उठे। आशीर्वाद देकर बोले, "अब कब आओगी बेटी ?"

"अब मैं शायद न आ सकूंगी चाचाजी !" और इतना कहकर वह बाहर चली गयी।

बारह

नये मजिस्ट्रेट की पत्नी मालिनी देवी हैं। इन्हीं के प्रयासों से नारी कल्याण समिति की स्थापना हुई। आज यद्यपि आयोजन स्त्रियों के लिए ही था, पर पुरुष भी उसमें शामिल थे और आयोजन में पुरुष ही विशेष रूप से आमन्त्रित थे। इसका भार अविनाश पर था। प्रबुद्ध लेखक के रूप में अक्षय का नाम था और लेखों का उत्तरदायित्व भी उन्हीं पर था। शिवनाथ को छोड़कर सभी को निमन्त्रित किया गया था। अविनाश की छोटी साली नीलिमा घर-घर जाकर सभी बंगाली महिलाओं से आने के लिए अनुरोध कर आई थी। केवल आशु बाबू की जाने की इच्छा नहीं थी। परन्तु मालिनी स्वयं आकर उन्हें लिवा ले गयी। अक्षय मामूली दो-चार शब्दों के बाद सीधा कठोर होकर खड़ा हो गया और व्याख्यान पढ़ने लगा। उसका व्याख्यान जैसा अरुचिकर था वैसा लम्बा भी। प्राचीन काल की सीता-सावित्री आदि का उल्लेख करके उसने आधुनिक नारी की आदर्शहीनता पर कटाक्ष किये। आधुनिक शिक्षिता महिला के घर उन्हीं की शिक्षा के विरुद्ध कठोर बातें कहने में उसे लज्जा नहीं आयी। कारण, अक्षय को गर्व था कि कठोर सत्य कहने में वह नहीं डरता। व्याख्यान में कठोर वचनों की कमी नहीं थी। हर घृणित उदाहरण की प्रतीक थी अनिमन्त्रित स्त्री कमल। अन्त में गहरे दुःख के साथ कहा गया कि आगरे में ठीक इसी प्रकार की एक स्त्री है, जो शिष्ट समाज में बराबर प्रश्रय पा रही है। वह स्त्री अपने दांपत्य-जीवन को अवैध जानकर भी लज्जित नहीं होती। उसके लिए विवाह-अनुष्ठान अर्थहीन संस्कार है और पति-पत्नी का प्रेम केवल मानसिक दुर्बलता। नारी होकर भी वह नारी के गम्भीरतम आदर्श को स्वीकार नहीं करती।

इस संगोष्ठी में मनोरमा के सिवा और किसी ने उसे प्रत्यक्ष नहीं देखा। कमल के रूप की प्रसिद्धि और चरित्र की अप्रसिद्धि ने प्रत्येक स्त्री-पुरुष के मन में एक गुदगुदी पैदा कर दी। यहाँ तक कि स्वयं मालिनी के कानों में भी वह पहुँच चुकी थी और इस विषय को लेकर नारी-मण्डल में सर्वत्र कुतूहल की सीमा न रही। इस आलोचना के वीच हरेन्द्र सीधा उठकर वोला, "अक्षय वावू के इस निबन्ध का मैं पूर्णतः विरोध करता हूँ। प्रथम तो यह अप्रासंगिक है, क्योंकि किसी भी महिला पर उसकी अनुपस्थिति में आक्रमण करने की इच्छा पाशविक है। उसके चरित्र का व्यर्थ में उल्लेख करना अशिष्ट और नीचता है। नारी कल्याण समिति की ओर से इस निवन्ध-लेखक को धिक्कार देना चाहिए।"

इसके वाद एक हंगामा मचा। अक्षय उत्तेजना के वशीभूत ज्ञान-शून्य होकर जो मन में आया, कहने लगा और उसके उत्तर में अल्पभाषी हरेन्द्र वीच-वीच में 'वीस्ट' और 'ब्रूट' कहकर उत्तर देने लगा।

मालिनी जानती थी कि व्यक्ति-विशेष के चरित्र की भलाई-बुराई की आलोचना करना इस समिति का उद्देश्य नहीं है और इस प्रकार की आलोचना से नर-नारी में से किसी का भी कल्याण नहीं। मालिनी यह भी समझ गयी कि निबन्ध में आशु वावू पर भी विशेष कटाक्ष किया गया है और इससे उन्हें अत्यन्त दुःख हुआ है।

सभा खत्म होने पर आशु वावू के पास आकर क्षमायाचना करके वोली, "व्यर्थ ही आपकी शान्ति भंग करने के लिए मैं दुखित हूँ, आशु वावू।"

हँसने का प्रयत्न करते हुए आशु बावू ने कहा, "घर में भी तो अकेला ही रहता। यहाँ समय तो कट ही गया।"

मालिनी ने कहा, "वह इससे अच्छा था। आज वे नहीं हैं। मणि यहाँ से खा-पीकर जायेगी।"

"अच्छी बात है, मैं यहाँ वाद में गाड़ी भेज दूंगा; लेकिन और वहाँ सव स्त्रियाँ?"

"वे भी सब आज यहीं भोजन करेंगी।"

अविनाश और अजित के साथ आशु बावू मोटर में घर की ओर चल दिये, परन्तु मार्ग-भर आशु बावू विलकुल मौन रहे। उन्हें लगातार यही

खटकता रहा कि कमल को लक्ष्य कर स्त्रियों के वीच अक्षय ने उन पर चोट की।

गाड़ी घर पर पहुँची। नीचे के बरामदे में एक अपरिचित आदमी बैठा था। आशु बाबू को इस व्यक्ति ने अंग्रेजी में नमस्कार किया।

"क्या है?"

उसने एक पत्र हाथ में दे दिया। पत्र कमल का था।

"क्या लिखा है कमल ने?" अजित ने पत्र को देखकर आशु बाबू से पूछा।

"आशय पत्र लाने वाले से मालूम होगा।"

"वह नहीं चाहती थीं कि यह और किसी के हाथ पड़े। आप उनके अपने आदमी हैं। मेरे उन पर कुछ रुपये चाहिए।" आगन्तुक ने कहा।

आशु बाबू सहसा अप्रसन्न होकर बोले, "मैं उसका अपना आदमी नहीं हूँ। वह मेरी कोई नहीं होती। उसकी ओर से मैं क्यों रुपये दूँ?"

पत्रवाहक भला आदमी था। लज्जित होकर बोला, "रुपये आपको नहीं देने होंगे, वे ही देंगी। आप केवल जामिन हो जायें—"

वह आदमी अत्यन्त आश्चर्य में बोला, "उनके पति की बात तो मैंने सुनी ही नहीं थी।"

"पता लगाने से सुन लेंगे। गुडनाइट। आओ अजित, अब देर न करो।" कहकर वे उसे लेकर ऊपर चले गये। अजित को आशु बाबू अपनी बैठक में ले जाकर बोले, "बैठो। देखा मजा?"

इस बात का अर्थ अजित समझ गया। उनकी स्वाभाविक सहृदयता शान्तिप्रियता के साथ एक क्षण पहले की अकारण रूक्षता ने अक्षय के सिवाय सभी को आघात पहुँचाया। एक दिन अनजाने में कमल के प्रति अजित का अन्तःकरण श्रद्धा और आश्चर्य से भर गया था, परन्तु जिस दिन कमल ने अपने विगत जीवन का कच्चा चिट्ठा खोलकर रखा, उस दिन से अजित के घृणा की सीमा न रही। इसी कारण आज नारी कल्याण समिति में आदर्शवादी अक्षय ने जो नारीत्व के आदर्श के वहाने इस स्त्री पर कटाक्ष किया उससे अजित को कोई दुःख नहीं हुआ।

कमल को वह बुरा कहता है। उसके सामाजिक आचरण की निन्दा में

अजित को अन्याय नहीं लगा। वह अपने अन्दर इस रमणी के विरुद्ध कठोर घृणा का भाव ही पा रहा है। परन्तु दुर्दशा में पड़ी कर्जदार स्त्री की बुरे दिनों में माँगी गयी मामूली-सी कुछ रुपयों की भीख को लात मार देने में मानो उसे पुरुष मात्र के अपमान का अनुभव हुआ। उस रात की सारी बातचीत उसे याद आ गयी। उसे बड़े यत्न से खिलाते समय कमल ने जो उसे चाय-बगीचे की आपबीती सारी घटनायें सुनायी थीं। उसकी माँ का किस्सा, अंग्रेज मैनेजर के घर पैदा होने का वर्णन—सब बातें उसके दिमाग में घूमने लगीं। वे जितनी अद्‌भुत थीं, उतनी ही अरुचिकर। परन्तु वह सब कहने की उसे आवश्यकता क्या थी? और छिपा लेती तो हानि ही क्या होती? परन्तु दुनिया की इस सुबुद्धि के जमा-खर्च के हिसाब की शायद कमल ने चिन्ता नहीं की।

सबसे बढ़कर आश्चर्यजनक उसका कठोर धैर्य है। उसी के मुँह से उसे मालूम हुआ कि शिवनाथ इसी शहर में छिपा हुआ है। सुनकर वह चुप रही। उस दिन ताजमहल में जो बातें उसने हँसते मुँह से निकाली थीं उनका पूर्णरूप से उसने पालन किया है।

आशु बाबू बोले, "देखा अजित! मैं विश्वासपूर्वक कहता हूँ कि यह शिवनाथ ने ही चाल की है।"

"शायद नहीं। बिना जाने कुछ कहा नहीं जा सकता।"

"मेरा विश्वास है कि यह चाल शिवनाथ की है। मुझे वह बड़ा आदमी जानता है न?"

"यह तो सभी जानते हैं। कमल स्वयं भी यही जानती है।"

"यह तो और भी बुरा है। पति से बात छिपाना बुरी बात है।"

"पति से छिपाकर दूसरे से रुपये उधार लेना पत्नी के लिए कितनी बुरी बात है? इसे बढ़ावा नहीं दिया जा सकता।"

"परन्तु रुपये तो नहीं माँगे, वह तो केवल जामिन बनाना चाहती है।"

आशु बाबू ने कहा, "दोनों बातें एक ही हैं।" क्षण-भर मौन रहकर बोले, "फिर मुझे अपना आदमी बताकर उसको धोखा किसलिए दिया?"

अजित ने कहा, "शायद वह आपको सचमुच ही अपना आदमी समझती हो। उसका किसी को धोखा देने का स्वभाव तो वैसे नहीं है।"

"यदि वह मुझे अपना ही समझती थी और दो-चार सौ रुपये की आवश्यकता ही थी, तो वह आकर ले जाती। एक बाहर के आदमी को सबके सामने भेजने की क्या आवश्यकता थी? कुछ भी कहो, वह लड़की बुद्धिमान नहीं है।"

अजित उठना चाहता था कि आशु बाबू कह उठे, "तुमने उस व्यक्ति को देखा अजित! उसका मुँह कितना भद्दा था। साहूकार था न। कमल के पास जाकर न जाने क्या-क्या अंट-शंट बकेगा।"

अजित ने हँसकर कहा, "सच-सच कह देना भी ठीक है।" यह कहकर ज्यों ही वह जाने को तैयार हुआ कि आशु बाबू सचमुच विचलित होकर बोले, "एक काम करो अजित! जदु को बुलाकर उस दराज को खोलो; देखो तो क्या है? पाँच-सात सौ इस समय जो कुछ हो भेज दो। जदु ड्राइवर घर जानता है।" कहकर उन्होंने जोर-जोर से नौकर को पुकारा।

अजित ने कहा, "जो होना था सो हो चुका—अब रात में यह रहने दीजिये, सवेरे विचार करके देखिएगा।"

"तुम समझते नहीं अजित, किसी विशेष आवश्यकता के बिना रात ही को वह इस प्रकार आदमी न भेजती।"

अन्त में अजित बोला, "ड्राइवर तो है नहीं, मनोरमा को लेकर न जाने कब लौटे। इस बीच कमल को मालूम हो ही जायेगा। फिर उसके पास रुपया भेजना उचित न होगा। शायद आपसे अब वे सहायता नहीं लेंगी।"

"पर यह तो तुम्हारा अनुमान ही है अजित!"

"हाँ, अनुमान ही है।"

"पर परदेश में रुपये की आवश्यकता उसके लिए इससे भी अधिक हो सकती है।"

"हो सकती है, पर आवश्यकता आत्म-सम्मान से बड़ी नहीं।"

"पर यह भी तो तुम्हारा विचार ही है।"

अजित बोला, "यह अनुमान नहीं, मेरा विश्वास है।" इतना कहकर वह कमरे से बाहर चला गया।

आशु बाबू ने उसे रोका नहीं। केवल दुःख से आँखें फैलाकर उसकी ओर देखते रहे। वे स्वयं भी जानते हैं कि कमल के विषय में ऐसा विश्वास

न असम्भव ही है और न असंगत। हृदय में गहरे कष्ट का अनुभव करके वे चुप ही रहे।

□

अखबार से दृष्टि बिना हटाये ही अविनाश बोले, "पर यह अच्छी बात नहीं हरेन्द्र ! कल की बात याद है ? आशु बाबू जैसे आदमी को भी सावधान होना पड़ता है।"

हरेन्द्र ने कुछ उत्तर नहीं दिया और इस भय से कि कहीं कल की रुपयों वाली बात न उठ खड़ी हो और नीलिमा को भी न मालूम हो जाये, इस प्रसंग को तुरन्त से दबाकर बोला, "इससे एक काम क्यों न करें भाभी, उन्हें मेरे घर पर आने का निमन्त्रण दे आइये। आप बन जाइये उस घर की मालकिन। मेरे सूने घर में एक दिन तो लक्ष्मी के चरण पड़ जायें। मेरे लड़के भी थोड़ी-बहुत बुरी-भली चीजें खाकर खुशी मना लेंगे।"

नीलिमा ने कहा, "ठीक है, यही होगा—मैं भविष्य की उलझनों से भी बच जाऊँगी।"

अविनाश बोले, "फिर तो खूब जमेगी। कोई कसर ही न रह जायेगी। शिवनाथ को छोड़कर सिर्फ उन्हीं को तुम्हारे घर बुलाना कैसी विचित्र बात है। इससे तो यही अच्छा है कि औरतें आपस में ही जान-पहचान करें।"

तय हुआ कि कॉलेज की छुट्टी होने के बाद हरेन्द्र नीलिमा को साथ लेकर कमल को निमन्त्रण दे आयें, वे अवश्य आएँगी। "कल घर लौटते समय अचानक उनसे भेंट हो गई। साथ में कुली के सर पर एक भारी सन्दूक था।

मैंने पूछा, 'कहाँ जा रही हैं ?'

उन्होंने कहा, 'जरा काम से जा रही हूँ।' मैंने फिर कहा, 'भाभी ने आपको कल शाम के लिए निमन्त्रण भेजा है। आपको जाना ही होगा।'

कमल ने कहा कि "मैं पहुँच जाऊँगी, अविनाश बाबू का घर तो मैंने देखा है।"

नीलिमा पिघलकर बोली, "लड़की तो वैसे बहुत भली मालूम होती है। बिलकुल अभिमान नहीं है।"

अविनाश बाबू कपड़े बदलते हुए कान लगा के सब सुन रहे थे। वहीं से पूछने लगे, "और कुली का वह भारी सन्दूक ? उसकी कहानी तो बतायी

ही नहीं ?"

"पूछा नहीं।"

"शायद बेचने या गिरवी रखने जा रही होगी।"

हरेन्द्र ने कहा, "हो सकता है। आपके पास गिरवी रखने आवे तो आप उसकी कहानी पूछ लीजियेगा।" इतना कहकर वह चल दिया।

नीलिमा ने तैयारी में कोई कमी उठा नहीं रखी थी। मनोरमा शुरू से ही कमल के बहुत विरुद्ध थी। यह जानकर कि वह किसी भी हालत में नहीं आयेगी, आशु बाबू के घर में किसी से भी नहीं कहा गया था। मालिनी को सूचना भेजी गयी थी, पर अचानक अस्वस्थ हो जाने के कारण वे भी नहीं आ सकीं।

ठीक समय पर कमल आ गयी। अकेली ही आ पहुँची। घर-मालकिन ने उसे अति मान के साथ बिठाया। अविनाश ने कमल को बहुत दिनों से देखा नहीं था, आज उसके चेहरे और कपड़ों को देखकर आश्चर्य में पड़ गये। बोले, "रात को अकेली ही पैदल चली आ रही हो कमल ?"

"कारण बिलकुल सरल है अविनाश बाबू, समझने में कोई कठिनाई नहीं।" कमल ने उत्तर दिया।

अविनाश बाबू लज्जित होकर धीरे से बोले, "ना-ना, क्या कह रही हो कमल ?--छोटी बहू, ये हैं कमल। इन्हीं का दूसरा नाम शिवानी भी है। इन्हीं को देखने के लिए तुम इतनी इच्छुक हो रही थीं।"

हरेन्द्र कमल को नमस्कार करके बोला, "समय पर मैं पहुँच नहीं पाया भाभीजी, क्षमा करना, मुझे देर हो गयी।"

कमल भोजन की सामग्रियों को देखकर बोली, "मेरे लिए चीजें तो आपने खूब बनायी हैं; लेकिन मैं तो यह सब खाती नहीं। आप लोग जिसे हविष्यान्न कहते हैं, मैं केवल वही खाती हूँ।"

नीलिमा स्तब्ध होकर बोली, "यह क्या ? आप हविष्य खायेंगी ? किस बाधा के कारण ?"

कमल ने कहा, "बाधा भी है; लेकिन यह सब खाती नहीं हूँ, इसलिए मेरी आवश्यकताएँ भी कम हैं। आप कुछ सोच न करें।"

"पर बिना विचार किये काम नहीं चलता।" नीलिमा क्षुब्ध होकर

बोली, "न खाने से मेरी चीजें नष्ट होंगी।"

कमल हँसकर बोली, "जो होना था सो तो हो चुका, उसे लौटाया नहीं जा सकता। फिर उसे खाकर मैं स्वयं नष्ट क्यों होऊँ।"

"केवल आज ही खा लीजिये, एक दिन के लिए क्या नियम भंग नहीं कर सकतीं ?"

"ना।" कमल बोली।

उसके हँसते हुए मुँह के एक शब्द को सुनकर कोई अनुमान नहीं कर सकता कि इसमें कितनी कठोर दृढ़ता थी। केवल हरेन्द्र ने समझा कि इसमें किसी प्रकार का हेर-फेर नहीं है। वह बोला, "रहने दो भाभी, अब मत कहो। चीज आपकी नष्ट नहीं होगी। मेरे लड़के आकर सब साफ कर जायेंगे। इनसे आग्रह मत करो, बल्कि जो कुछ खायें उसका प्रबन्ध करो।"

"तो किये देती हूँ; पर मुझे अब सन्तोष मत दो हरेन्द्र दा। यह घास-फूस नहीं है जो तुम अपने भेड़-बकरों को चरा दोगे। इसे मैं रास्ते में फेंक दूंगी, पर उन्हें न खिलाऊंगी।"

हरेन्द्र हँसते हुए बोला, "क्यों; उन पर आपकी इतनी अप्रसन्नता होने का क्या कारण है ?"

नीलिमा ने कहा, "उन्हीं के कारण तो तुम्हारी यह दुर्गति है। बाप रुपया छोड़ गये हैं, स्वयं भी पैदा कम नहीं करते—बहू आती तो अब तक लड़के-बालाओं से घर भर जाता। स्वयं जैसे हो, दल भी वैसा ही तैयार हो रहा है। कहे देती हूँ, उन्हें मैं कभी न खिलाऊँगी। चाहे मेरा कितना ही नुकसान हो जाने दो।"

कमल कुछ समझ न सकी।

हरेन्द्र बोला, "वे बिना माँ-बाप और कॉलेज के मेरे अनाथ छात्र हैं। मेरे पास रहकर स्कूल में पढ़ते हैं। उन्हीं पर इनका सारा-का-सारा क्रोध जा पड़ा है।"

"यह बात है ? मैंने तो आज तक कभी नहीं सुना ?" कमल आश्चर्य से बोली।

हरेन्द्र ने कहा, "सुनने योग्य इसमें कुछ नहीं, लेकिन वे सब चरित्रवान अच्छे लड़के हैं। उन पर मेरा स्नेह है।"

"और उनकी प्रतिज्ञा है कि बड़े होकर वे देश-सेवा करेंगे, अर्थात् गुरु से ब्रह्मचारी वनकर विश्व-विजय करेंगे। एक दिन उन्हें देखियेगा।" नीलिमा वोली।

"मगर आप ले जायें तो मैं कल ही चल सकती हूँ।" कमल बोली।

"कल नहीं, और किसी दिन। हमारे आश्रम के राजेन्द्र और सतीश काशी गये हैं। उन लोगों के आ जाने पर आपको ले जाऊँगा, उन्हें देखकर आप अप्रसन्न होंगी।" हरेन्द्र ने कहा।

इस पर अविनाश आँखें फाड़कर बोले, "बदमाशों का अड्डा है। आश्रम क्या है।"

"यह तुम्हारी वात ठीक नहीं है। लालाजी तुमसे आश्रम के लिए चन्दा माँगने नहीं आते। फिर ढोंगी क्यों? अपने पैसे से पराये लड़कों को आदमी वनाना पाखण्ड है? बल्कि ऐसा आक्षेप करने वाले ही पाखण्डी कहला सकते है।" क्रोध से नीलिमा ने कहा।

"पर भाभी, अभी-अभी तो आप उन्हें भेड़-बकरों का झुण्ड बता रही थीं?" हरेन्द्र हँसकर बोला।

"मैं कह रही थी क्रोध में; लेकिन इन्होंने ऐसा क्या सोचकर कहा? ढोंग किसे कहते हैं, पहले स्वयं समझ लें तब दूसरे से कहें।" नीलिमा वोली।

"आपके तो सभी लड़के स्कूल-कॉलेज में पढ़ते होंगे?" कमल वोली।

"हाँ, वाहर से तो ऐसा ही है।" हरेन्द्र ने उत्तर दिया।

अविनाश बोले, "और भीतर क्या सब प्राणायाम और आसन करते हैं या योग सीखते हैं?"

सब हँस दिये।

नीलिमा ने कमल से कहा, "मुखर्जी महाशय का मस्तिष्क हर समय ऐसा ही नहीं रहता। कभी-कभी बहुत ठण्डा भी रहता है, नहीं तो बहुत पहले ही मुझे वहाँ से भागकर प्राण बचाने पड़ते।" कहकर वह हँसने लगी।

इतने में महाराज ने आकर सूचना दी कि कमल का भोजन तैयार है। इसलिए सबको खाना खाने के लिए उठना पड़ा।

□

दो घण्टे के बाद भोजनादि से निवृत्त होकर सब बाहर के कमरे में बैठे तो कमल ने पूछा, "आपके लड़के कॉलेज की पुस्तकें पढ़ने के अतिरिक्त और क्या कुछ करते हैं ?"

हरेन्द्र ने कहा, "कुछ करते अवश्य हैं, परन्तु जिस दिन आप वहाँ पधारेंगी उस दिन सब स्पष्ट कर दूँगा, आज नहीं।"

इस स्त्री का इतना सम्मान देखकर अविनाश का समस्त शरीर द्वेष से जलने लगा, मगर वे चुप ही रहे।

नीलिमा ने कहा, "आज ही कहने में क्या अड़चन है, हरेन्द्र दा! कहिये कि प्राचीन-आदर्श पर सबको ब्रह्मचारी बनने की शिक्षा दे रहे हैं ?"

हरेन्द्र ने विनय के साथ कहा, "गलत है, यह मैं नहीं कह रहा भाभी जी !" और फिर कमल को देखकर बोला, "आपको भी शायद मेरे काम से कोई सहानुभूति न होगी ?"

कमल ने कहा, "आपका काम क्या है, ठीक से मालूम किये बिना कुछ कहा नहीं जा सकता। मगर वह युक्ति नहीं है कि प्राचीन परम्परा में ढाल देना ही मनुष्य बना देना है।"

हरेन्द्र ने कहा, "भारतवर्ष का तो यही आदर्श है।"

कमल बोली, "यह किसने निश्चय किया कि भारत का आदर्श ही सनातन आदर्श है।"

अब क्रोध को दबाकर अविनाश बोले, "हो सकता है कि चरम आदर्श न हो, लेकिन कमल, यह हमारा पूर्व-पुरुषों का आदर्श जो है। हरेन्द्र के आश्रम की बात मैं नहीं जानता, लेकिन उसने यही लक्ष्य यदि ग्रहण किया है तो मैं उसे आशीर्वाद देता हूँ।"

कमल कुछ मौन रहकर बोली, "मालूम नहीं, क्यों आदमी यह भूल करता है। अपने अलावा और किसी भारतवासी को आँखों से देखता ही नहीं। भारत में और भी बहुत-सी जातियाँ रहती हैं, वे इस आदर्श को भला क्यों मानें ?"

अविनाश क्रोधित होकर बोले, "चूल्हे में जायें वे। मैं यदि अपना ही आदर्श स्पष्टता से देख सकूँ तो उसी को समझ सकता हूँ।"

कमल ने धीरे से कहा, "यह आपकी क्रोध की बात है अविनाश बाबू, वैसे मैं आपको इतना बड़ा अन्धभक्त नहीं समझती।" फिर जरा ठहरकर कहने लगी, "परन्तु शायद सब पुरुष इसी प्रकार विचार किया करते हों। उस दिन अजित बाबू के सामने भी अचानक यही प्रश्न था। भारत की सनातन विशिष्टता के नष्ट होने के उल्लेख से उनका मुख वेदना से सफेद पड़ गया था।" इतना कहकर वह चुप हो गयी। अविनाश कुछ उत्तर देने को थे, पर कमल उधर विना देखे ही कहने लगी, "लेकिन मैं सोचती हूँ कि इसमें भय किस बात का है? किसी एक देश-विदेश में पैदा होने के कारण से ही इसका आचार-व्यवहार धोती से क्यों चिपकाये रहना पड़ेगा? उसकी अपनी विशेषता चली गयी तो इसमें हानि ही क्या है? इतनी ममता क्यों? विश्व के समस्त मानव यदि एक ही विचार, एक ही भाव, एक ही विधि-विधान की ध्वजा थामकर खड़े हो जायें तो इसमें क्या हानि है? केवल यही फिर भारतीय तरीके से न पहचाने जायेंगे! न सही, पर फिर यह तो अटल सत्य होगा कि संसार की मानव-जाति में से हम एक हैं। मानव का गौरव भी तो इससे कुछ कम नहीं होता।"

सहसा कोई उत्तर न पाकर अविनाश बोले, "कमल, जो तुम कह रही हो, स्वयं ही उसका अर्थ नहीं समझतीं। इससे मनुष्य का सर्वनाश हो जायेगा।"

कमल ने उत्तर दिया, "मनुष्य का नहीं होगा अविनाश बाबू, जो लोग अभिमान में अन्धे हो रहे हैं, उनके अभिमान का ही सर्वनाश होगा।"

अविनाश ने कहा, "ये शिवनाथ की बातें हैं।"

कमल ने कहा, "यह मुझे नहीं मालूम कि वे यही बातें कहते हैं।"

अब अविनाश अपने को न सम्भाल सके। व्यंग्य से बोले, "मालूम तो है। सब बातें कह रक्खी हैं और जानती नहीं कि किसकी हैं?"

उनके इस भद्दे अशिष्ट व्यवहार का कमल की ओर से नीलिमा ने उत्तर दिया, "बातें चाहे जितनी भी हों; पर प्रश्न का उत्तर न दे सकने पर लजाने की कोई बात नहीं। साथ ही अशिष्टता पर शरम आनी चाहिए! एक गाड़ी बुलवाने भेजो किसी को हरेन्द्र, इन्हें घर तक पहुँचाना भी तो है।"

अविनाश गम्भीर होकर बोले, "अच्छा, तुम लोग बैठे गप्पें करो, मैं

सोने जा रहा हूँ।" और वे उठकर चल दिये।

नौकर गाड़ी ले आया।

हरेन्द्र ने कमल से कहा, "मेरे आश्रम में एक दिन अवश्य आना। जब लिवाने आऊँ तो आप 'न' नहीं करेंगी।"

कमल हँसते हुए बोली, "ब्रह्मचारियों के आश्रम में मुझे क्यों घसीट रहे हैं हरेन्द्र बाबू!"

"नहीं, ऐसा नहीं होगा। ब्रह्मचारी होने पर भी हम लोग ऐसे डरावने नहीं हैं। बिलकुल सीधे-सादे हैं। गेरुआ नहीं पहनते, जटा-वल्कल आदि भी कुछ नहीं। सर्वसाधारण के बीच में हम उन्हीं के साथ मिले हुए हैं।"

"मगर यह तो अच्छा नहीं। असाधारण होकर साधारण में आत्मगोपन का प्रयत्न करना भी एक प्रकार का आयुक्त आचरण है। शायद अविनाश बाबू ने इसी को पाखण्ड कहा हो।"

हरेन्द्र ने कहा, "आपके साथ तर्क में जीतना असम्भव है—हारना ही होगा, परन्तु वास्तव में क्या आप हमारी संस्था को अच्छा नहीं समझतीं? सफल होऊँ या असफल, उसका आदर्श महान् है।"

कमल ने कहा, "वह तो मैं नहीं कह सकती हरेन्द्र बाबू! अन्य सभी संयमों की तरह यौन-संयम भी सत्य है। समारोह की धूमधाम के साथ उस जीवन का मुख्य सत्य बना देने से वह भी एक तरह का असंयम हो जाता है। उसका दण्ड भी है। आत्म-निग्रह के अति अहंकार से आध्यात्मिकता कम होने लगती है।—तो ठीक है, मैं आपके आश्रम में एक दिन आऊँगी।"

हरेन्द्र ने कहा, "आना ही होगा, न आने से मैं छोड़ूँगा नहीं। लेकिन एक बात कहे देता हूँ, हमारे यहाँ आडम्बर नहीं है, जरा प्रदर्शन नहीं करते।" कहते-कहते अचानक नीलिमा की ओर संकेत करके बोला, "यह मेरा आदर्श हैं। इन्हीं के सामने हम लोग स्वाभाविकता के मार्ग हैं। बाहर से मालूम होगा कि मानो विलासिता में ये मग्न हैं; मगर मैं जानता हूँ इनका कठिन आचरण, इनका कठोर आत्म-संयम—"

कमल चुप रही।

हरेन्द्र भक्ति और श्रद्धा से फिर कहने लगा, "भारत के अतीत युग के प्रति आपकी आसक्ति नहीं है। भारत का आदर्श आपको आकर्षित नहीं

करता; परन्तु बताइए कि नारीत्व की इतनी बड़ी महिमा—इतना बड़ा आदर्श और कहाँ है? इस घर का तमाम बोझ इन्हीं पर है। इस पर भी, इनका कोई स्वार्थ नहीं, कोई बन्धन नहीं। बताइए, किस देश की विधवा इस प्रकार के काम में अपने को लगा सकती है?"

कमल को हँसी आ गई। उसने कहा, "इसमें भलाई की कौन-सी बात है हरेन्द्र बाबू! हो सकता है कि पराये घर की निःस्वार्थ गृहिणी और पराए बच्चों की निःस्वार्थ जननी होने का संसार में और कहीं उदाहरण न मिले। यह अद्भुत होने के कारण श्रेष्ठ भी हो इसे किस प्रकार कह सकते हैं?"

हरेन्द्र दंग रह गया और नीलिमा मारे विस्मय के कमल का मुख देखती रह गई।

कमल ने उसी को सम्बोधित करके कहा, "शब्दों की शोभा से, विशेषणों के आकर्षण में लोग इसे चाहे जितनी बड़ाई क्यों न कर दें, हर गृहिणीपन के इस झूठे अभिजेय में सम्मान नहीं। इस बड़प्पन का त्याग ही कहीं अच्छा है।"

"यही तो एक शान्तिपूर्ण गृहिणी को नष्ट करके चले जाने का उपदेश है कमल! इसकी तो आपसे मैं कोई आशा नहीं रखता था।"

कमल ने कहा, "मगर गृहस्थी तो इनकी अपनी नहीं है। होती तो ऐसा उपदेश न देतीं। इसी प्रकार कर्म-भोग के मद में पुरुष हमें मतवाली बनाये रखते हैं। उनकी प्रशंसा की तेज शराब पीकर हमारी आँखों पर नशा छा जाता है। सोचती हूँ, शायद नारी-जीवन की चरम सार्थकता है। हमारे यहाँ चाय के बगीचे के हरीश बाबू की बात याद आ गई। उनकी जब सोलह साल की छोटी बहन विधवा हो गई तो घर लाकर अपने बाल-बच्चे दिखाकर रोते हुए बोले, 'लक्ष्मी, अब ये ही तेरे बाल-बच्चे हैं। चिंता की बात नहीं—इन्हें पाल-पोसकर आदमी बनाओ। इस घर की सर्वेसर्वा बनकर आज से तू सार्थक हो, यही मेरा आशीर्वाद है।' हरीश बाबू बड़े भले आदमी हैं, बगीचे-भर में सब लोग वाह-वाह कर उठे। सभी ने कहा, लक्ष्मी का भविष्य अच्छा है। अच्छा तो है ही। केवल स्त्रियाँ ही समझ सकती हैं कि इतना बड़ा दुर्भाग्य—इतनी बड़ी धोखेबाजी और कुछ हो ही नहीं सकती। परन्तु जब यह विडम्बना पकड़ी जाती है, और तब प्रतिवाद

का समय ही निकल जाता है।''

हरेन्द्र ने कहा, ''फिर ?''

कमल ने कहा, ''फिर मुझे मालूम नहीं हरेन्द्र बाबू। लक्ष्मी की सार्थकता का अन्त मैं नहीं देख पाई—उनके पहले ही वहाँ से मुझे चला आना पड़ा था। परन्तु बस, अब गाड़ी आ गई। चलिए, रास्ते में बातें होंगी। नमस्कार !'' कहकर खड़ी हो गई।

नीलिमा नमस्कार करके मौन खड़ी रही। उसकी आँखों के तारों से मानो अग्नि की चिनगारियाँ निकल रही थीं।

चौदह

कमल के सामने हरेन्द्र के मुँह से 'आश्रम' शब्द अप्रत्याशित निकल गया था। वास्तव में अपने घर को बाहर वालों के सामने इतने गौरव के पद पर हरेन्द्र नहीं रखना चाहता था। बिलकुल साधारण बात थी और प्रारम्भ में उसका श्रीगणेश भी मामूली तरीके पर हुआ था। परन्तु यह चीजें एक बार गति पकड़ लें तो फिर उस गति में विराम नहीं आता। जंगली पौधे के समान मिट्टी का तमाम रस खींचकर जड़ से लेकर पत्तों तक पहुँचने में फिर देर नहीं लगती। यही हुआ भी।

हरेन्द्र अकेला है। पिता वकालत से धन जोड़ गए। उनके बाद घर में रह गईं केवल हरेन्द्र की विधवा माँ। वे भी हरेन्द्र की पढ़ाई समाप्त होते ही संसार छोड़ गईं, इसलिए घर में ऐसा कोई न रहा जो ब्याह करने के लिए तंग करता। पढ़ाई के पश्चात् कोई काम न होने के कारण हरेन्द्र ने देशवासियों की सेवा में मन लगाया। साधु-संगति में पड़कर बैंक में पड़ी रकम का ब्याज निकालकर एक दुर्भिक्ष में सहायता की, बाढ़-पीड़ितों की सहायता की। लूले-लँगड़े, काने, बहरे, गूंगे-भूखों को ला-लाकर उनकी सेवा करने लगा। इस प्रकार जैसे-जैसे उसका नाम प्रसिद्ध होने लगा वैसे-वैसे भले आदमियों का दल आ-आकर उससे कहने लगा, 'रुपया दो, परोपकार करें।' सूद के रुपये समाप्त हो गए। पूंजी में हाथ लगाये बिना अब कोई

चारा न रहा। अचानक एक दिन अविनाश के साथ उसका परिचय हो गया। उस दिन उसे प्रथम बार पता चला कि संसार में एक आदमी ऐसा है जिसे वह अपना कह सकता है। तब एक अध्यापक का स्थान खाली था। अविनाश के कालेज में प्रयास करके वे उस काम पर उसकी नियुक्ति कराकर अपने साथ आगरे ले गए। उसका आगरे आने का यही इतिहास है। आगरे में मुस्लिम काल के बहुत बड़े-बड़े मकान कम किराये पर मिल जाते हैं, और उन्हीं में से एक हरेन्द्र ने ले लिया। यही उसका आश्रम है।

आगरा में आरम्भिक कई दिन उसे अविनाश के घर बिताने पड़े। तभी नीलिमा के साथ उसका परिचय हो गया था। नीलिमा पहले ही दिन हरेन्द्र से खुलकर बोली, "तुम्हें कब क्या चाहिए हरेन्द्र दा, मुझसे कहने में संकोच न करना। मैं घर की गृहिणी नहीं हूँ, परन्तु उसका भार मुझी पर है। आपके भाई कहते थे, छोटी बहू, बाबू की खातिरदारी में कमी रह गई तो वेतन कट जाएगा। अतः इस गरीबनी की हानि न करा देना, अपनी आवश्यकता की याद दिलाते रहना।"

ऐसा संकोच में आ गया हरेन्द्र कि इन मीठी बातों को हँसते हुए कहने वाली के मुँह की ओर देख भी नहीं सका। एक तरफ जैसे वह वेशभूषा व वर्ताव से विधवा नहीं मालूम हो सकती है। इस घर में उनका कोई वास्तविक आश्रय नहीं। वे भी इस घर में पराये हैं—वैसे ही यह पता नहीं पड़ता कि उनका यही सब-कुछ है जो बाहर से दीख रहा है।

उनकी आयु कदाचित् तीस के लगभग है। आयु के योग्य गम्भीरता भी उसमें नहीं। मजा यह भी है कि तनिक-सा ध्यान देने से ही यह बात स्पष्ट समझी जा सकती है कि एक ऐसा विचार उन्हें रात-दिन घेरे रहता है जिसके भीतर प्रवेश करने का कोई मार्ग नहीं। न तो घर के नौकर-चाकर या दास-दासी ही वहाँ घुस सकते हैं और न स्वामी ही।

दो सप्ताह बीत गए। एक दिन यह सुनकर कि हरेन्द्र ने अलग एक मकान किराये पर ले लिया है, नीलिमा ने अप्रसन्न होकर कहा, "इतनी जल्दी क्यों जा रहे हो हरेन्द्र दा, यहाँ ऐसा कौन आपको पकड़ रखना चाहता था?"

"एक दिन तो जाना ही पड़ता भाभीजी!" हरेन्द्र बोला।

नीलिमा ने उत्तर दिया, "वह तो है, परन्तु देश-सेवा का नशा अभी तक आपकी आँखों से नहीं गया, और कुछ दिन भाभी के नेतृत्व में रह लेते तो अच्छा था।"

हरेन्द्र ने कहा, "सो अवश्य रहूँगा ही भाभीजी ! यहीं पास ही तो हूँ, केवल दस मिनट का रास्ता है। यहाँ से आपकी दृष्टि बचा के कहाँ जाऊँगा ?"

अविनाश भीतर से बोले, "जाओगे जहन्नुम में। कितना मना किया कि और कहीं मत जा, यहीं रह; परन्तु वह कैसे हो ? मान बड़ा है या भाई साहब की बात ? जा नये अड्डे में और चढ़ा दरिद्र-नारायण की सेवा में जो कुछ पास है। छोटी मालकिन ! उससे कहना-सुनना व्यर्थ है। वह ठहरा संन्यासी--"

नये मकान में हरेन्द्र ने नौकर, रसोइया रखकर अत्यन्त शांत मास्टरों के समान कॉलेज के काम में मन लगाया। बहुत बड़ा मकान, उसमें बहुत-से कमरे हैं। दो-एक के सिवा शेष यों ही खाली पड़े रहे। महीने-भर बाद ही ये सूने कमरे उसे बुरे लगने लगे। किराया देना ही पड़ता है और काम कुछ आते नहीं। अतः चिट्ठी गई राजेन्द्र के पास। वह था उसकी दुर्भिक्ष-निवारिणी समिति का मन्त्री। देशोद्धार के लिए विशेष आग्रह के कारण दो साल की सजा काटकर पाँच-छः महीने हुए छूटा था। हरेन्द्र की चिट्ठी और रेल का किराया पाकर वह तुरन्त चला आया। राजेन्द्र का परम मित्र था सतीश। किसी प्रकार हवालात से बचकर मेदनीपुर जिले के किसी एक गाँव में ब्रह्मचर्याश्रम खोलना चाहता था, राजेन्द्र का पत्र पाते ही वह भी एक सप्ताह में सीधा आगरे चला आया और अकेला ही नहीं आया, कृपा करके गाँव के एक भक्त को भी साथ लेता आया। सतीश कहता है कि हम ही लोग एक दिन विश्व के शिक्षक और मनुष्य के गुरु थे। वर्तमान में भारतवासियों के लिए एकमात्र उद्धार के करने योग्य काम है गाँव-गाँव और नगर-नगर में असंख्य ब्रह्मचर्याश्रम स्थापित करना। देशोद्धार भी यदि कभी सम्भव हुआ, तो इसी मार्ग से होगा।

उसकी बातें सुनकर हरेन्द्र मुग्ध हो उठा।

सतीश का नाम उसने सुन रखा था; परन्तु परिचय न था इसलिए

इस सौभाग्य के लिए उसने मन-ही-मन राजेन्द्र को धन्यवाद दिया। आश्रम की सारी बातें गुप्त रखी जाने लगीं।

राजेन्द्र और सतीश गाँवों में जाकर लड़के बुलाकर ले आते। जो आयु में छोटे थे वे स्कूल में भरती हो जाते, और जो स्कूल की शिक्षा पूरी करके उत्तीर्ण हो जाते वे हरेन्द्र के प्रयत्न से किसी-न-किसी कालेज में प्रवेश करा दिये जाते। इस प्रकार थोड़े ही समय में मकान विविध उम्र के लड़कों से भर गया। बाहर के लोग इसके विषय में कुछ जानते भी न थे। और न कोई जानने का प्रयत्न ही करता था। उड़ती हुई सूचना से सिर्फ इतना ही सुन लेते थे कि हरेन्द्र के घर में रहकर कुछ गरीब बंगाली लड़के पढ़ते-लिखते हैं। इससे अधिक न कुछ अविनाश को पता था और न नीलिमा को।

सतीश के कठोर शासन में घर शाकाहारी खाना बनता था। प्रातः-काल उठकर सबको स्तोत्र-पाठ, ध्यान, प्राणायाम आदि करने पड़ते थे। उसके पश्चात् पढ़ना-लिखना और नित्य कर्म। मगर अधिकारियों का इससे भी मन नहीं भरा, और अनुशासन में क्रमशः कठोरता आ गई। रसोइया भगा दिया गया। नौकर को निकाल दिया गया, और उनका काम बारी-बारी से लड़कों पर आ पड़ा। किसी दिन एक ही तरकारी होती तो किसी दिन वह भी नहीं। लड़कों का पढ़ना-लिखना जाता रहा—स्कूल में उन पर फटकार पड़ने लगी; किन्तु कठोर नियमों में शिथिलता नहीं आई। सिर्फ एक विषय में अनियम था और वह बाहर से कहीं निमन्त्रण आने पर, लड़के नंगे पाँव रहते और बाल रूखे रखते। इस विषय में सतीश की अत्यन्त सतर्क आँखें हरदम पहरा देती रहती थीं। इसी प्रकार आश्रम के दिन बीत रहे थे। सतीश का तो कहना ही क्या, हरेन्द्र के मन में भी आत्म-गौरव की सीमा न थी। बाहर के किसी आदमी के सामने वे विशेष कोई बात प्रकट नहीं करते थे; परन्तु अपने अन्दर हरेन्द्र यह विचारता था कि इनमें से एक भी लड़के का जीवन वे बना सके तो समझेंगे कि उनका जीवन सार्थक हो गया।

हरेन्द्र और सतीश दोनों इस बात का अनुभव कर रहे थे कि कुछ दिनों से राजेन्द्र का आचरण पहले जैसा नहीं रहा है। यही उनके दुःख का कारण था। आश्रम के किसी काम में अब वह उतना मन नहीं लगाता।

सवेरे के भजन में भी वह प्राय: अनुपस्थित रहता है और पूछने पर कहता है कि तबीयत ठीक नहीं, परन्तु सत्य था कि तबीयत खराब होने का लक्षण नहीं था। क्या उसकी शिकायत है, क्यों वह ऐसा हुआ जा रहा है—पूछने पर भी उत्तर नहीं मिलता।

किसी दिन सुबह ही उठकर कहीं चला जाता है, दिन-भर आता ही नहीं और रात को जब घर लौटता है तब उसका चेहरा ऐसा होता है कि हरेन्द्र तक को कारण पूछने का साहस नहीं होता। ये सब बातें आश्रम के नियमों के सर्वथा विरुद्ध हैं। राजेन्द्र जानता था कि हरेन्द्र के सिवा शाम के बाद और किसी को भी रात रहने का अधिकार नहीं है—फिर भी उसे कोई परवाह नहीं। आश्रम का सेक्रेटरी था सतीश। इन सब अत्याचारों के विरुद्ध वह हरेन्द्र से ठीक शिकायत के रूप में तो कुछ कह नहीं सकता; किन्तु बीच-बीच में आभास और संकेत के भाव प्रकट कर देता है कि उस आश्रम में रखना अब उचित नहीं है।

एक दिन सारी रात राजेन्द्र घर नहीं आया। सवेरे जब वह घर लौटा तब उसी की बात को लेकर खूब जोर की आलोचना होने लगी।

हरेन्द्र ने आश्चर्य के साथ उससे पूछा, "बात क्या है राजेन्द्र, कल रात-भर कहाँ थे?"

उसने जरा हँसने का प्रयत्न करते हुए कहा, "एक पेड़ के नीचे पड़ा था।"

"पेड़ के नीचे क्यों?"

"बहुत रात हो जाने के कारण आप लोगों को जगाकर परेशान करना उचित नहीं समझा।" राजेन्द्र बोला।

"अच्छा। इतनी रात कैसे हो गई?"

"यों ही घूमते-घूमते।" और यह कहकर वह अपने कमरे में चला गया।

सतीश से हरेन्द्र ने पूछा, "बात क्या है, बताओ?"

"आपकी बात टालकर भी चला गया। भला मैं क्या जान सकता हूँ।" सतीश बोला।

"अधिक दबाव क्या ठीक होगा?"

"आप एक बात तो जानते होंगे कि पुलिस ने उसे दो साल जेल में रखा

था !" सतीश बोला।

हरेन्द्र ने कहा, "जानता हूँ, लेकिन वह तो सन्देह के आधार पर रखा था। उस समय उसका कोई अपराध नहीं था।"

सतीश ने कहा, "मैं उसका मित्र होने के कारण जेल जाते-जाते बच गया था। पुलिस की दृष्टि में वह आज भी अपराधी है।"

हरेन्द्र ने कहा, "असंभव कुछ नहीं।"

सतीश ने जरा विष-भरी हँसी हँसकर कहा, "मैं सोचता हूँ, उसके कारण कहीं हमारे आश्रम पर पुलिस आँख न रखने लगे।"

हरेन्द्र कुछ चिंतित हुआ। सतीश फिर बोला, "आप नहीं जानते कि राजेन्द्र आस्तिक भी नहीं है।"

हरेन्द्र बोला, "यह तुमने कैसे जाना ?"

सतीश ने कहा, "मुझे मालूम है। आश्रम के कामकाज पर उसकी श्रद्धा नहीं। इससे उसकी यदि कहीं नौकरी लगा दी जाये तो अच्छा है।"

हरेन्द्र ने कहा, "नौकरी पेड़ का फल तो है नहीं सतीश कि जब चाहूँ तब तोड़कर हाथ में दे दूँ। प्रयत्न करना होगा।"

सतीश ने कहा, "वही कीजिये। आप आश्रम के प्रेसिडेंट हैं इसीलिए पूरी जानकारी आपको कराना मेरा कर्त्तव्य है। आपका वह प्रिय है और मेरा मित्र है। इसी से उसके विरुद्ध कुछ कहना उचित नहीं, परन्तु आपको सावधान कर देना मेरा कर्त्तव्य है।"

"परन्तु मैं जानता हूँ कि उसका चरित्र निर्मल है"—हरेन्द्र बोला, "हाँ; इससे तो उसको उसका बड़े-से-बड़ा शत्रु भी दोषी नहीं ठहरा सकता। राजेन्द्र आजीवन कुँवारा है, लेकिन वह ब्रह्मचारी भी नहीं है। असल कारण यह है कि इस बात के सोचने का भी उसके पास वक्त नहीं कि स्त्री नाम की कोई चीज संसार में है। उसके चरित्र की शिकायत मैं नहीं करता, वह अस्वाभाविक रूप से निर्मल है, परन्तु—"

हरेन्द्र ने पूछा, "परन्तु क्या ?"

सतीश ने कहा, "कलकत्ते के बासे में हम दोनों एक साथ रहा करते थे। तब वह कैंबेल मैडिकल कालेज का छात्र था और घर पर बी० एस-सी० पढ़ता था। सभी जानते थे कि वह फर्स्ट डिवीजन में पास होगा लेकिन

परीक्षा के पहले अचानक न जाने कहाँ चला गया।"

हरेन्द्र ने चकित होकर पूछा, "वह डाक्टरी पढ़ता था क्या? मगर मुझ से तो कहता था कि वह शिवपुर इंजीनियरिंग कालेज में भरती हुआ था, पर वहाँ की पढ़ाई बड़ी कठिन होने से उसे भाग आना पड़ा।"

सतीश ने कहा, "लेकिन तलाश करें तो मालूम होगा कि कालेज में थर्ड ईयर में वही प्रथम आया था और बिना कारण चले आने के कारण वहाँ के सभी शिक्षक अत्यन्त दुःखी हुए थे। उसकी बुआ धनी घर में ब्याही हैं, वे ही पढ़ने का व्यय दे रही थीं। इस प्रकार की हरकतों से अप्रसन्न होकर उन्होंने व्यय देना बन्द कर दिया। उसके बाद ही शायद आपसे उसका परिचय हुआ है। लगभग दो साल घूम-फिरकर जब घर पहुँचा तब उसकी बुआ ने उसी की राय से उसे डाक्टरी स्कूल में भरती करा दिया। क्लास में प्रत्येक विषय में फर्स्ट ही रहा था, फिर भी तीन साल बाद सहसा एक दिन सब छोड़-छाड़कर पृथक् हो गया। यही उसमें एक ऐब है। मैं उससे पार नहीं पा सकता। वहाँ से छोड़कर हमारे यहाँ आकर खूँटा गाड़ा है। मुझसे बोला, 'लड़के पढ़ाकर बी० एस-सी० पास करूँगा और कहीं किसी गाँव में जाकर मास्टरी करके जीवन बिताऊँगा।'

मैंने कहा, 'अच्छी बात है, यही करो।' उसके बाद पन्द्रह-बीस दिन पढ़ने में ऐसा परिश्रम किया कि न नहाने का ठिकाना, न खाने का। आँखों की नींद तक गायब हो गयी।"

हरेन्द्र बोला, "फिर?"

सतीश कहने लगा, "उसके बाद जो कुछ उसने किया वह भी विचित्र है। किताबें उसने छुईं तक नहीं। जाने कहाँ रहता। जब लौटकर आता उसका मुख देखने से भय लगता।"

"फिर?"

"फिर एक दिन पुलिस आ गयी और ऐसा तूफान मचाया कि बिना आँखों देखे उसका अनुमान नहीं लगाया जा सकता। सभी ने सोचा कि अब बचना कठिन है, पुलिस वाले आज उसको पकड़कर फाँसी पर लटका देंगे।"

"फिर क्या हुआ?"

"लगभग तीसरे पहर पुलिस राजेश और उसका मित्र होने के कारण मुझे पकड़कर ले गयी। मुझे चार दिन बाद छोड़ दिया, पर राजेश का फिर कोई पता नहीं लगा। छोड़ते समय साहब ने कृपा करके मुझे सावधान करके कहा, 'आनली वन स्टेप' अर्थात् मुझसे जेल का अन्तर केवल एक कदम था। मैं गंगास्नान करके, माँ काली के दर्शन करके, घर लौट आया। सबने कहा, 'सतीश, तुम बड़े भाग्यवान हो।' आफिस पहुँचा, साहब ने दो महीने का वेतन हाथ में देकर कहा, 'जाओ।' सुना कि इस बीच में मेरे भी घर की तलाशी हो चुकी है।"

हरेन्द्र कुछ देर बाद फिर धीरे से बोला, "तो क्या तुम्हें निश्चित मालूम हो रहा है कि राजेश—"

सतीश ने विनती करके कहा, "मित्र होने के नाते मैं इस विषय में कुछ नहीं कह सकता।"

हरेन्द्र बोला, "मैं भी तो उसे भाई के समान मानता हूँ।"

सतीश ने कहा, "विचारकर देखने की बात यह है कि पुलिस ने मुझे निरपराध पकड़ अवश्य लिया था, पर छोड़ भी तो दिया।"

"निरपराध पकड़ने का भी नियम तो नहीं है। जो लोग वह कर सकते हैं वे यह क्यों नहीं कर सकेंगे?"

हरेन्द्र कालेज चला गया मन में घोर अशांति लिए। चिंता केवल राजेन्द्र के भविष्य की ही नहीं थी बल्कि इससे भी अधिक चिन्ता थी आश्रम के बिना कारण नष्ट हो जाने की। हरेन्द्र ने निश्चय किया कि पुलिस की दृष्टि से आश्रम को बचाना चाहिए। फिर जब वह यहाँ के नियमों को भंग कर रहा है, तब कहीं नौकरी दिलाकर या किसी और बहाने से राजेन्द्र को यहाँ से दूर कर देना उचित है।

आगरा-आश्रम जैसी संस्थाएँ भारत में सर्वत्र संगठित करने की कल्पना हरेन्द्र के मन में थी और इसी काम से सतीश बनारस जा रहा था।

राजेन्द्र भी आकर बोला, "हरेन्द्र भैया, सतीश के साथ मैं भी कुछ दिनों के लिए बनारस घूम आऊँ?"

"वह तो काम से जा रहा है।" हरेन्द्र बोला।

"और मुझे काम नहीं है, इसलिए जाना चाहता हूँ। जाने का किराया

मेरे पास है।" राजेन्द्र बोला।

"और लौटकर आने का?" हरेन्द्र ने कहा।

राजेन्द्र चुप रहा।

हरेन्द्र ने कहा, "राजेन्द्र, कुछ दिन से एक बात कहना चाहता हूँ।"

राजेन्द्र ने हँसकर कहा, "कहने की आवश्यकता नहीं हरेन्द्र भैया, मैं जानता हूँ।" वह चला गया।

रात की गाड़ी से जाने के पूर्व हरेन्द्र ने पास आकर अचानक उसके हाथ में एक कागज की पुड़िया देकर कहा, "तुम वापस न आओगे तो मैं बहुत दुःखी होऊँगा राजेन्द्र।" इतना कहकर वह अपने कमरे में चला गया।

दस-बारह दिन के बाद वे लोग लौट आये। हरेन्द्र को एकांत में बुलाकर सतीश ने प्रसन्नता से कहा, "उस दिन आपका उतना ही कहा काम कर गया। काशी में आश्रम स्थापित करने के लिए राजेन्द्र ने अति ही कठोर परिश्रम किया है।"

"परिश्रम करता है तो वह इसी प्रकार करता है।" हरेन्द्र बोला।

"हाँ, उसका चौथाई भी यदि इस आश्रम के लिए करे तो क्या कहना है!" सतीश बोला।

हरेन्द्र ने आशा से कहा, "करेगा बन्धु, अवश्य करेगा। मुझे विश्वास है कि अब उसके काम की सीमा न रहेगी।"

सतीश नरेन्द्र के इस विचार से सहमत था।

नरेन्द्र ने कहा, "तुम्हारे वापस आने की प्रतीक्षा में एक काम स्थगित करना पड़ा है और वह है विशिष्ट पद्धति का जन-साधारण में प्रचार करना।"

"परन्तु इससे क्या काम में विघ्न न पड़ेगा?"

हरेन्द्र ने कहा, "ना। रविवार को कुछ लोग आमन्त्रित किये हैं। आश्रम की शिक्षा, साधना, संयम और पवित्रता के परिचय से हमें उन्हें मुग्ध करना है और यह सब भार तुम पर ही है।"

"कौन-कौन आयेंगे?" सतीश ने पूछा।

हरेन्द्र ने कहा, "अजित बाबू, अविनाश भैया, भाभीजी। शिवनाथ बाबू किसी काम से जयपुर गये हैं; पर उनकी स्त्री कमला आयेंगी, और यदि

तबीयत ठीक हुई तो शायद आशु बाबू को भी पकड़ ला सकूँ। इस बात का ध्यान रहे कि उस दिन इन लोगों से हम सच्ची श्रद्धा प्राप्त कर सकें।''

''आशीर्वाद दीजिये कि हम इसमें सफल हों''—सतीश बोला।

रविवार। निश्चित समय पर अभ्यागत लोग आ पहुँचे। आये नहीं केवल आशु बाबू।

हरेन्द्र सबको सम्मानपूर्वक भीतर ले आया। लड़के उस समय आश्रम के नित्यकार्य में लगे हुए थे। कोई बत्ती जला रहा था, कोई झाड़ू लगा रहा था, कोई चूल्हा सुलगा रहा था, कोई पानी भर रहा था और कोई रसोई का प्रबन्ध कर रहा था।

हरेन्द्र ने अविनाश के प्रति लक्ष्य करके हँसते हुए कहा, ''भाई साहब, आप जिन्हें अभागे आवारों का दल कहा करते हैं, ये हैं हमारे आश्रम के लड़के, हमारे यहाँ नौकर-रसोइया नहीं हैं, ये सब काम अपने हाथ से करते हैं। भाभीजी, चलिये जरा भोजनशाला में। आज हमारे यहाँ पर्व का दिन है, एक बार वहाँ का आयोजन देख आइये।''

नीलिमा के पीछे-पीछे सब रसोईघर के सामने जा खड़े हुए।

एक दस-बारह साल का लड़का चूल्हा सुलगा रहा था और उसी आयु का दूसरा लड़का हंडिया में आलू बना रहा था। दोनों ने उठकर नमस्कार किया।

नीलिमा ने स्नेह से संबोधन करते हुए पूछा, ''आप लोगों के यहाँ क्या-क्या बनेगा बेटा?''

''आज रविवार के दिन हमारे यहाँ दमदार आलू बनते हैं।'' लड़के ने प्रसन्नतापूर्वक उत्तर दिया।

''और क्या-क्या बनता है बेटा?''

''और कुछ नहीं।''

नीलिमा ने व्याकुल होकर पूछा, ''केवल दमदार आलू? बस? दाल या और कुछ नहीं—''

''दाल हमारे यहाँ कल बनी थी।'' लड़का बोला।

सतीश ने समझाते हुए कहा, ''हमारे आश्रम में एक चीज से अधिक बनाने का नियम नहीं है।''

हरेन्द्र हँसकर बोला, "सहूलियत भी नहीं भाभीजी।"

नीलिमा ने पूछा, "कदाचित् नौकर इत्यादि भी नहीं होंगे ?"

हरेन्द्र ने कहा, "ना। उन्हें रखा जायेगा तो दमदार आलू नहीं बन सकेंगे। लड़के उसे पसंद नहीं करेंगे।"

नीलिमा ने और कुछ नहीं पूछा। उन लड़कों को देखकर उसकी आँखें भर आयीं। बोली, "हरेन्द्र दा, अब और कहीं चलो।"

हरेन्द्र प्रसन्न होकर बोला, "मैं जानता था कि आप यह सह नहीं सकेंगी।"

उसने कमल की ओर देखकर कहा, "लेकिन आप तो स्वयं इसकी अभ्यस्त हैं। केवल आप ही समझेंगी इस समय की सार्थकता को। इसी से उस दिन यहाँ आने को विनय के साथ आपको निमन्त्रण दिया था।"

कमल हँसकर बोली, "हरेन्द्र बाबू ! इन सब बच्चों को इतने आडम्बर के साथ निष्फल दरिद्रता का पाठ सिखाना क्या आदमी बनाना है ? ये ही हैं यहाँ के ब्रह्मचारी। इन्हें आदमी बनाना हो तो साधारण और स्वाभाविक ढंग से बनाइये। इनके सिर पर झूठे दुःख का भार लादकर असमय में ही इनकी कमर मत तोड़िए।"

कमल के कठोर तर्क से हरेन्द्र तिलमिला उठा।

अविनाश ने कहा, "कमल का तुम्हारा बुलाना ठीक नहीं हुआ हरेन्द्र।"

"मुझे बुलाना किसी के लिए भी ठीक नहीं।" कमल बोली। नीलिमा ने कहा, "मगर मैं उन किसी में नहीं हूँ कमल ! मेरे घर में तुम्हारा अपमान न होगा। चलो, हम लोग ऊपर चलें। देखें, हरेन्द्र दा के आश्रम में और क्या-क्या चमत्कार हैं।" उसने मधुर हँसी से कमल की लज्जा दूर की।

दूसरी मंजिल। एक लंबा-चौड़ा आश्रम का मुख्य कमरा। नक्काशीदार। बैठने के लिए एक बेंच और चार-पाँच कुर्सियाँ हैं, पर प्रायः उन पर बैठता कोई नहीं। फर्श पर एक बड़ी दरी बिछी है। आज मुख्य दिन होने के कारण उस पर सफेद चादर बिछा दी गयी है और उस पर पड़ोसी के यहाँ से बड़े-बड़े तकिये मँगाकर रख दिये हैं। नीचे के अँधकारमय और आनन्दहीन वातावरण से इस कमरे में आकर सब प्रसन्न अवश्य हुए।

एक तकिये का सहारा लेकर संतोष की साँस लेते हुए अविनाश ने कहा, "अब जान-में-जान आयी।"

"हमारे आश्रम का यह कमरा कैसा है अविनाश दा ?" हरेन्द्र ने पूछा।

अविनाश ने कहा, "यही तो भय है हरेन्द्र ! कमल के समक्ष किसी वस्तु को अच्छा कहने का साहस नहीं होता। कमल ! इसे तो तुम भी स्वीकार करोगी कि मेरे पास और कुछ नहीं, पर मेरी आयु पर्याप्त है। उसी के आधार पर एक बात कहता हूँ, मैं स्वीकार करता हूँ कि सच बात प्रायः कड़वी होती है, पर इसका मतलब यह नहीं कि प्रिय बात मात्र सत्य नहीं होती कमल ! तुम्हें बहुत-सी बातें शिवनाथ ने सिखायी हैं, केवल यही एक बात सिखाना शेष रख छोड़ा है।"

कमल का चेहरा लाल हो उठा। नीलिमा ने इसका उत्तर दिया—"शिवनाथ की इतनी भूल है मुखर्जी साहब ! हम उन पर जुरमाना करके उसका बदला लेंगे। अब प्रार्थना है कि आप अपनी उस पूंजी में से और भी दो प्रिय वाक्य बाहर निकालें जिससे हम लोग सुनकर धन्य हों।"

अविनाश हृदय से जल-भुन गये। कुछ दिनों से एक प्रकार के असन्तोष की हवा न जाने कहाँ से आकर दोनों के बीच बह रही थी। वह आँधी की तरह भीषण नहीं थी, परन्तु कभी-कभी घास-तिनके, धूल-रेत उड़ाकर दोनों की आँखों में झोंक देती थी।

उन्होंने हरेन्द्र को कहा, "अप्रसन्न तो नहीं हो सकता हरेन्द्र ! तुम्हारी भाभी ने बिलकुल मिथ्या नहीं कहा कि मुझे पहचानने में अब उनके लिए कुछ शेष नहीं है– उन्हें मालूम है कि जो कुछ पूंजी है पुराने जमाने की है, और रसहीन है।"

हरेन्द्र ने पूछा, "इसके क्या माने अविनाश दा ?"

अविनाश ने कहा, "तुम संन्यासी ठहरे, अर्थ ठीक नहीं समझोगे। मगर छोटी मालकिन अचानक कमल की भक्त हो उठी हैं, उससे आशा की जाती है कि यदि वे उनके अनुभव का लाभ लेंगी तो धन्य होने का मार्ग अपने आप प्रशस्त हो जायेगा।"

यह व्यंग्य स्वयं उन्हें अपने कानों में खटका था। हरेन्द्र ने उन्हें व्यथित कंठ से कहा, "दादा, आज आप सभी यहाँ के अतिथि हैं। इस बात को आप लोग भूल गये कि कमल को हम आश्रम की ओर से ससम्मान निमन्त्रण करके लाये हैं।"

नीलिमा ने कहा, "तो फिर मेरे सम्बन्ध में कृपा करके उन्हें याद करा दो हरेन्द्र दा कि यदि कोई किसी को छोटी मालकिन कहकर पुकारने लग जाय तो वह उसकी सचमुच की गृहिणी नहीं हो जाती। उसे उस पर शासन करने की मात्रा का भी ज्ञान रखना चाहिए। मेरी ओर से मुखर्जी साहब के अनुभव के भण्डार में इतना आज जमा करा दिया जाय—भविष्य में वह काम आ सकता है।"

हरेन्द्र ने हाथ जोड़कर कहा, "रक्षा कीजिये भाभी साहिबा, सारी-की-सारी अनुभव-अनभिज्ञता की लड़ाई क्या आज मेरे ही यहाँ आकर लड़ी जायेगी ? जितनी शेष बची है उतनी घर जाकर पूरी कर लीजियेगा। जिस बात के भय से अक्षय को नहीं बुलवाया, आखिर क्या वही बात भाग्य में लिखी है ?"

सुनकर अजित और कमल दोनों ही इस संवाद पर हँस पड़े।

हरेन्द्र ने पूछा, "अजित बाबू, सुना है, कल आप अपने घर जायेंगे ?"

"पर आपने सुना किससे ?"

"आशु बाबू को बुलाने गया था।"

"अजित ने कहा, शायद। पर – कल नहीं, परसों। यह भी निश्चित नहीं कि घर जाऊँगा या और कहीं। हो सकता है कि शाम तक स्टेशन पहुँच जाऊँ और उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम जिस ओर की गाड़ी मिल जाय उसी पर यात्रा शुरू कर दूँ।"

हरेन्द्र ने हँसते हुए कहा, "अर्थात् लक्ष्य कोई निश्चित नहीं ?"

अजित ने कहा, "ना।"

"और लौटने का ?"

"ना, उसका भी कोई निश्चित नहीं।"

हरेन्द्र ने कहा, "अजित बाबू, आप भाग्यवान हैं। परन्तु बोरिया-बिस्तर ढोने के लिए यदि चाहिए तो मैं एक आदमी दे सकता हूँ; परदेश के लिए ऐसा मित्र मिलना असम्भव है।"

अविनाश को कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था, वे बोले, "हरेन्द्र, अब देर किस बात की है, चलने की तैयारी करो न। क्या कहते हो ?"

हरेन्द्र ने विनय के साथ कहा, "लड़कों के साथ जरा परिचय न

कीजिएगा। थोड़ा-बहुत उपदेश इन्हें दे जाइएगा।"

अविनाश ने कहा, "उपदेश देने तो मैं आया नहीं। आया था केवल इन लोगों का साथी बनकर। सो उसकी भी आवश्यकता नहीं रही।"

सतीश बहुत-से लड़कों के साथ ऊपर आ पहुँचा। दस-बारह वर्ष से लेकर उन्नीस-बीस वर्ष तक के युवक उनमें थे। जाड़े के दिन और शरीर पर सिर्फ एक कुरता, पाँव में जूते तक नहीं। हरेन्द्र ने आज एक सुन्दर भाषण लिख रखा था, वह मन-ही-मन उसी को दुहराते हुए गम्भीरता के साथ बोला, "इन लड़कों ने देश के काम में जीवन अर्पण कर दिया है। यही आशीर्वाद आप लोग हमें दीजिए कि आश्रम के महान् आदर्श ये भारत के नगर-नगर और गाँव-गाँव में फैला सकें।"

सबने प्रसन्नतापूर्वक उत्तर दिया।

हरेन्द्र ने कहा, "यदि समय मिला तो अपना भाषण मैं पीछे सुनाऊँगा।" यह कहकर उसने कमल को लक्ष्य करके कहा, "आपको ही आज मुख्य रूप से आमन्त्रण देकर हम लोगों ने बुलाया है, कुछ सुनने की आशा से। लड़के आशा लगाये हुए हैं कि आपके मुँह से आज वे ऐसी बात सुनेंगे जिससे उनके जीवन का व्रत अधिकतर सुन्दर हो उठे।"

कमल मारे संकोच और दुविधा के सुर्ख हो उठी। बोली, "मैं तो भाषण नहीं दे सकती हरेन्द्र बाबू।"

सतीश ने इसका उत्तर दिया, "व्याख्यान नहीं, हम उपदेश चाहते हैं। देश के काम में जो वस्तु सबसे अधिक आएगी, सिर्फ उसी के विषय में।"

कमल ने उसी से पूछा, "देश के काम में आपका मतलब क्या है?"

सतीश ने कहा, "जिससे देश का कल्याण हो।"

कमल ने कहा, "मगर कल्याण की धारणा तो सबकी एकसमान नहीं होती। आपके साथ मेरी धारणा का यदि मेल न बैठा तो मेरा उपदेश आपके काम नहीं आ सकता।"

सतीश संकट में पड़ गया। उसका इस संकट से उद्धार करने के लिए हरेन्द्र ने कहा, "देश की मुक्ति जिससे मिले वही है देश का एकमात्र कल्याण। देश में ऐसा कौन होगा जो इस सत्य को न मानता हो?"

कमल ने कहा, "कहने से भय लगता है हरेन्द्र बाबू। सब सुनकर

भड़क उठेंगे। नहीं तो मैं ही कहती कि अपने आपको और दूसरे को भूल-भुलैया में डालने वाला इस 'मुक्ति' शब्द के समान और कोई छल ही नहीं। किससे मुक्ति हरेन्द्र बाबू? दु:ख से या भव-बन्धन से? बताइए कि किस देश का एकमात्र कल्याण समझकर आश्रम-प्रतिष्ठा में आप लोग नियुक्त हुए हैं? यही क्या आपकी स्वदेश-सेवा का आदर्श है?"

हरेन्द्र व्याकुल होकर बोल उठा "ना-ना, यह सब नहीं, यह इच्छा हमारी नहीं है।"

कमल ने कहा, "तो फिर ऐसा कहिए कि हमारा आदर्श इससे अलग है। कहिए कि संसार-त्याग और वैराग्य-साधना हमारा लक्ष्य नहीं। हमारी साधना का सम्पूर्ण ऐश्वर्य, सम्पूर्ण सौन्दर्य, सम्पूर्ण जीवन लेकर जीवित रहना है। मगर इसकी शिक्षा क्या यही है? बदन पर कपड़े नहीं, पाँवों में जूते नहीं, फटे-पुराने कपड़े पहन रखे हैं, एक समय आधा पेट खाकर जो लड़के अस्वीकार के बीच बढ़ रहे हैं, प्राप्ति के आनन्द का जिनके भीतर चिह्न तक नहीं रहा है, देश की लक्ष्मी क्या उन्हीं के हाथ कपड़े के भण्डार की चाबी सौंप देगी? हरेन्द्र बाबू, संसार की ओर एक बार मुँह उठाकर देखिए तो सही। जिन्हें बहुत मिला है, उन्हें ही सरलता से दिया है। उन लोगों को ऐसी गरीबी का स्कूल खोलकर त्याग का ग्रेजुएट नहीं बनाया गया था।"

सतीश हतबुद्धि-सा हो गया, बोला, "क्या आप कहना चाहती हैं कि देश में मुक्ति-संग्राम में धर्म की साधना और त्याग की शिक्षा की कतई आवश्यकता नहीं?"

कमल ने कहा, "मुक्ति-संग्राम का अर्थ तो पहले साफ हो गया?"

सतीश बगलें झाँकने लगा।

कमल हँसते हुए बोली, "आपके भावों से मालूम होता है कि आप विदेशी राज-शक्ति के बन्धन से मुक्त होने को ही देश का मुक्ति-संग्राम कह रहे हैं। यदि यही तो सतीश बाबू, तो मैंने न तो कभी धर्म की साधना की है और न त्याग की दीक्षा ही ली है, फिर भी आपसे कह देती हूँ कि मुझे आप सबसे आगे सामना करने वालों के दल में पाइएगा—आप लोग तब ढूँढ़े भी न मिलेंगे।"

सतीश कुछ बोल नहीं सका। वह न जाने कैसा घबरा-सा गया और उसकी चंचल दृष्टि का अनुसरण करती हुई कमल कुछ देर के लिए जिस व्यक्ति की ओर से आखें न फेर सकी, वह था राजेन्द्र।

सतीश के सिवा किसी ने उधर लक्ष्य ही नहीं किया था कि कब वह चुपके से दरवाजे के पास आ खड़ा हुआ था। वह निष्फल दृष्टि से अब तक कमल की ही ओर देख रहा था, और अब भी वह ठीक उसी ओर देख रहा था। उसका चेहरा एक बार देखकर फिर भूलना कठिन था। उमर शायद पच्चीस-छव्वीस के लगभग होगी। रंग बिलकुल साफ, गोरा। देखने से अस्वाभाविक-सा मालूम पड़ता है।

हरेन्द्र ने कहा, "ये ही मेरे मित्र हैं राजेन्द्र—केवल मित्र नहीं बल्कि छोटे भाई जैसे। इतना कर्मठ कार्यकर्ता, इतना बड़ा देशभक्त, इतना निर्भय और साधुचित्त पुरुष मैंने नहीं देखा। भाभीजी, इन्हीं का जिक्र मैं उस रोज आपसे कर रहा था। वह जैसे हँसते-खेलते पाता है, वैसे ही हँसते-खेलते फेंक देता है। विचित्र आदमी है। अजित बाबू, इन्हीं को मैं बोझ उठाने के लिए आपके साथ दे रहा था।"

अजित कुछ कहना ही चाहता था कि लड़के ने आकर सूचना दी, "अक्षय बाबू आए हैं।"

हरेन्द्र आश्चर्यचकित होकर बोला, "अक्षय बाबू?"

अक्षय ने घर में घुसते हुए कहा, "हाँ जी, हाँ, तुम्हारा परम मित्र अक्षयकुमार।" फिर सहसा चौंककर, "एँ! आज बात क्या है? यहाँ तो सभी जने इकट्ठे हैं। आशु बाबू के साथ घूमने निकला था। सहसा चला आया। चलो अच्छा ही हुआ।"

इन सब बातों का किसी ने उत्तर नहीं दिया, कारण उसमें कुछ उत्तर देने योग्य था नहीं।

अक्षय ने कमल की ओर देखकर कहा, "तुम्हारे यहाँ कल सवेरे को जाने की सोच रहा था, लेकिन मकान तो मुझे मालूम नहीं—अच्छा ही हुआ जो भेंट हो गई। एक शुभ संवाद है।"

कमल चुपचाप देखती रही।

हरेन्द्र ने पूछा, "शुभ संवाद क्या है? सुनाओ तो सही। समाचार जब

शुभ है तो गुप्त नहीं होगा।"

अक्षय ने कहा, "नहीं, गुप्त योग्य अब रह ही क्या गया है? रास्ते में आज उस सिलाई की मशीन बेचने वाले कमबख्त पारसी से भेंट हो गई जो उस दिन कमल की ओर से रुपये उधार लेने गया था। गाड़ी रोककर मामला पूछा गया।" फिर कमल की ओर इशारा करके कहा, "आप उधार में एक मशीन खरीदकर फतूई-बतूई सीकर खर्च चला रही थीं। शिवनाथ तो कई दिन से लापता है। मगर वायदे के अनुसार किस्त तो समय पर चुकानी ही चाहिए, इसी से वह मशीन छीन ले गया। आशु बाबू ने आज पूरा मूल्य देकर खरीद लिया है।—कमल, कल सवेरे ही आदमी भेजकर मँगा लेना। खाने-पहनने से भी तंग हो। अरे, हम लोगों से यह बात कहनी थी?"

उसके कहने के अपमानजनक ढंग से सब-के-सब आहत हुए।

कमल के दु:खी तथा सूखे चेहरे को देखकर अविनाश तक का चेहरा भी उदास हो उठा।

कमल ने मृदु कण्ठ से कहा, "मेरी ओर से कृतज्ञता जताकर उन्हें मशीन वापस कर देने को कह दीजिएगा। अब मुझे उसकी आवश्यकता नहीं है।"

हरेन्द्र ने कहा, "अक्षय बाबू, इस घर से आप चले जाइये। आपको मैंने बुलाया नहीं था और न चाहा ही था कि आप यहाँ आएँ। फिर भी आप चले आए। आदमी की पशुता की क्या कहीं कोई सीमा नहीं है?"

कमल ने सहसा मुँह उठाते ही देखा कि अजित की दोनों आँखें आँसुओं से भर आई हैं। बोली, "अजित बाबू, क्या आपकी गाड़ी साथ है, कृपा कर मुझे घर पहुँचा दीजिएगा?"

अजित कुछ बोला नहीं। उसने केवल सिर हिलाकर 'हाँ' कर दी।

कमल ने नीलिमा को नमस्कार करके कहा, "अब शायद जल्दी भेंट न होगी, मैं यहाँ से जा रही हूँ।"

किसी को पूछने का साहस नहीं हुआ कि कहाँ? नीलिमा ने केवल उसका हाथ लेकर अपने हाथों में दबा दिया। दूसरे ही क्षण कमल हरेन्द्र को नमस्कार करके अजित के पीछे-पीछे बाहर निकल गई।

पंद्रह

अपने-आप में खोई कमल मोटर में बैठकर आकाश की ओर देख रही थी। सहसा गाड़ी रुकते ही इधर-उधर देखकर पूछा, "यह कहाँ आ गए अजित बाबू, मेरे घर का रास्ता तो यह नहीं है ?"

अजित ने उत्तर दिया, "नहीं, तुम ठीक कहती हो।"

"फिर ? लौटना तो पड़ेगा ही ?"

"यह आप जानें। आज्ञा होते ही लौट पड़ूँगा।"

कमल आश्चर्य में पड़ गई। इस अनोखे उत्तर के कारण उतनी नहीं जितनी उसके कष्ट की अस्वाभाविकता से वह विचलित हो उठी। क्षण-भर मौन रहकर उसने अपने को दृढ़ किया और हँसते हुए कहा, "मार्ग भूलने का अनुरोध तो मैंने नहीं किया अजित बाबू। संशोधन की आज्ञा मुझको ही देनी होगी ? ठीक जगह पहुँचा देने का उत्तरदायित्व आपका है—मेरा काम आप पर विश्वास करना।"

"परन्तु यदि मैं भूल कर बैठा हूँ तो कमल ?"

"प्रश्न के ऊपर से तो कोई विचार हल नहीं हो सकता अजित बाबू। भूल के बारे में पहले निःसंशय होकर विचार करूँगी।"

अजित ने अस्फुट स्वर में कहा, "तो विचार कर लीजिए, मैं प्रतीक्षा कर रहा हूँ।" उसके बाद वह क्षण-भर मौन रहकर सहसा बोल उठा, "कमल, उस दिन की बात याद है तुम्हें ? उस दिन भी ठीक ऐसा ही अँधकार था।"

"हाँ, ऐसा अँधकार था।" कहकर कमल ने गाड़ी का दरवाजा खोला। वह पीछे से उतरी और अजित की बगल में सामने की सीट पर जा बैठी।

सुनसान अँधकार। रात्रि बिलकुल नीरव थी।

कुछ देर तक दोनों में से कोई कुछ बोला नहीं।

"अजित बाबू !" कमल ने धीरे से कहा।

"हूँ ?"

अजित के हृदय के भीतर आँधी उठ रही थी, उत्तर देते न बना।

कमल ने फिर पूछा, "क्या सोच रहे हो ?"

अजित का स्वर काँपने लगा, बोला, "उस दिन, आशु बाबू के मकान का मेरा व्यवहार तुम्हें याद है? उस दिन सोचा कि तुम्हारा भूत ही शायद तुम्हारा सबसे बड़ा अंश है। मैं उसके साथ समझौता कैसे कर सकता हूँ? पीछे की छाया को सामने बढ़ाकर मैंने तुम्हारा चेहरा ढँक दिया था और इस बात को भूल गया था कि सूर्य घूमा करता है। लेकिन आज सोच रहा हूँ, तुम नहीं समझ सकतीं।"

कमल ने कहा, "स्त्री होकर इसके बाद भी न समझ सकूँगी, मैं क्या इतनी अज्ञान हूँ? जब मार्ग भूले, मैंने तो तभी समझ लिया था।"

अजित धीरे-धीरे उसके कंधे पर बायाँ हाथ रखकर चुप ही रहा। कुछ देर बाद उसने कहा, "कमल, मालूम होता है, आज मैं अपने को सँभाल नहीं सकूँगा।"

कमल हटकर नहीं बैठी। उसके व्यवहार में विस्मय या विह्वलता का नाम तक न था। सहज-स्वाभाविक शांत कण्ठ से बोली, "इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं अजित बाबू, ऐसा तो हुआ ही करता है; लेकिन आप तो केवल पुरुष ही नहीं हैं, न्याय-निष्ठ सभ्य पुरुष हैं। इतना छोटा काम तो आप कर नहीं सकेंगे।"

अजित तीव्र स्वर में बोला, "ऐसा भय तुम करती ही क्यों हो कमल कि ऐसा काम करना ही पड़े?"

कमल ने हँसकर कहा, "भय मैं अपने लिए नहीं करती अजित बाबू, करती हूँ केवल आपके लिए। आपसे करते बनता तो मुझे कोई भय न था। सोच यही है कि करते नहीं बनेगा। केवल एक रात की गलती के बदले इतनी बड़ी सजा आपके सिर लाद लेने में तरस आता है। अब नहीं, चलिए लौट चलें।"

बात अजित के हृदय तक नहीं पहुँची। क्षण-भर में उसकी नसों का खून खौल उठा—अपनी छाती के पास जोर से उसे खींचकर बोल उठा, "मुझ पर क्या तुम विश्वास नहीं कर सकतीं, कमल? तो किसलिए लौटना चाहती हो कमल? चलो, हम चले चलें।"

"चलिए।"

गाड़ी चलाते समय अजित ने सहसा रुककर पूछा, "घर के साथ लेने

योग्य क्या तुम्हारे पास कुछ भी नहीं ?"

"ना। लेकिन आपके…"

अजित को सोचना पड़ा। जेब में हाथ डालकर बोला, "रुपये-पैसे तो कुछ साथ में नहीं, उनकी तो आवश्यकता पड़ेगी।"

कमल ने कहा, "गाड़ी बेच देने से आसानी से रुपये आ जाएँगे।"

अजित आश्चर्य से बोला, "गाड़ी बेचूँगा ? परन्तु आशु बाबू की है—"

कमल ने कहा, "फिर क्या ? आशु बाबू मारे लज्जा और घृणा के गाड़ी का नाम तक न लेंगे। कोई चिन्ता की बात नहीं—चले चलिए।"

अजित मौन ही रहा। उसका बायाँ हाथ अब कमल के कंधे से खिचकर नीचे जा गिरा। बोला, "क्या मेरी हँसी कर रही हो तुम कमल ?"

"ना, सच कह रही हूँ।"

"सच ही समझ रही हो कि मैं गाड़ी चुरा सकता हूँ ? यह काम तुम स्वयं कर सकती हो ?"

कमल ने कहा, "मेरे सकने या न सकने पर यदि आप निर्भर करते अजित बाबू तो मैं इसका उत्तर देती। पराई चीज उड़ा लेने की हिम्मत आपमें नहीं है। चलिए, गाड़ी घुमाकर मुझे घर पहुँचा दीजिए।"

"पराई चीज उड़ा लेने को क्या बहुत बड़ी बात समझती हो तुम ?" लौटते समय अजित ने प्रश्न किया।

कमल ने कहा, "बड़ी-छोटी की बात नहीं। बस, यह साहस आपमें नहीं है, यही कहा है मैंने।"

"ना-ना, और इसके लिए मैं लज्जा अनुभव भी नहीं करता।" यह कहकर अजित जरा रुककर बोला, "बल्कि होता तो मैं लज्जा की बात समझता और मेरा विश्वास है कि सभी सभ्य व्यक्ति इस बात को स्वीकार करेंगे।"

कमल ने कहा, "क्योंकि स्वीकार करना बहुत आसान है। उसमें वाह-वाही जो मिलती है।"

"केवल वाहवाही ही ? उससे अधिक कुछ नहीं ? शिक्षा और संस्कार नाम की क्या कोई चीज ही नहीं देखी तुमने कभी ?"

"यदि देखी भी हो, तो उसकी आलोचना का यदि कभी अवसर आया

तो और किसी दिन करूँगी, आज नहीं।" और क्षण-भर मौन रहकर बोली, "आपके तर्क पर यदि और कोई होता तो व्यंग्य से कहता कि कमल को हड़प लेने की कोशिश में तो शिक्षा और संस्कार को संकोच हुआ नहीं? मगर मैं ऐसा नहीं कर सकती, क्योंकि कमल किसी की सम्पत्ति नहीं है। वह केवल अपनी है, और किसी की नहीं।"

"किसी दिन शायद हो भी नहीं सकती।"

"यह तो भविष्य की बात है अजित बाबू। इसका उत्तर कैसे दूं?"

"शायद किसी भी दिन उत्तर नहीं दे सकोगी। इसीलिए शिवनाथ की निर्ममता तुम्हें नहीं खटकती।" अजित एक लम्बी साँस लेकर फिर बोला, "तुम्हें समझना कठिन है कमल।"

"ना, मार्ग भूलते ही मुझे बुलाकर ले जाया जा सकता है।" कमल ने हँसकर कहा।

"शायद यह समझना मेरी भूल थी।"

"रास्ता भूलना भूल, भुलाकर ले जाने का प्रयत्न भूल, और फिर अपनी भी भूल? इतनी भूलों का बोझा आपके सिर से कब दूर होगा? अजित बाबू, अपने पर जरा विश्वास रखना सीखिए। इस प्रकार से अपने सामने अपने को छोटा मत बनाइए।" हँसकर कमल बोली।

"मगर अपनी भूल न मानना ही क्या अपने पर विश्वास करना कहा जाता है?" अजित ने पूछा।

"ऐसा नहीं, पर अस्वीकार करने का भी एक उपाय है। संसार केवल अपने को ही लेकर नहीं चलता। ऐसा होता तो सब झंझट मिट जाते। यहाँ और भी कई रहते हैं, उनकी भी इच्छा-अनिच्छा हमारे शरीर से आकर टकराती है। इसी से अन्तिम फलाफल यदि मन के अनुसार न हो तो उसे भला जानकर धिक्कार देते रहना अपना ही अपमान करना है। अपने प्रति इससे बढ़कर अविश्वास बताइये और क्या हो सकता है।"

अजित ने एक क्षण चुप रहकर कहा, "लेकिन जहाँ वास्तव में भूल हो? शिवनाथ के सम्बन्ध में भी क्या तुम्हें पश्चात्ताप नहीं हुआ कमल? क्या मुझे यही विश्वास करने को कहती हो?"

कमल ने इस प्रश्न का शायद उत्तर नहीं दिया, बोली, "विश्वास करने

न करने की गरज आपकी है। उसके विरुद्ध तो किसी दिन मैंने शिकायत नहीं की।"

"शिकायत करना तुम्हारा स्वभाव नहीं; परन्तु क्या कभी इस भूल के लिए अपने को नहीं धिक्कारा ?"

"ना।"

"इन सव वातों के पश्चात् मैं तुम्हें अनोखी और असाधारण ही कह सकता हूँ।"

इसका कमल ने कोई उत्तर नहीं दिया, वह चुप रही।

कुछ पलों के पश्चात् अजित सहसा पूछ वैठा, "कमल, ऐसी भूल यदि कभी कर वैठूँ तो तुमसे भेंट होगी ?"

"यदि का उत्तर यदि से ही दिया जा सकता है अजित वावू। अनिश्चित प्रस्ताव का निश्चित उत्तर नहीं दिया जा सकता।"

"अर्थात् यह मेरा मोह स्थायी नहीं है ?"

"मुझे ऐसा लगता है और ऐसा होना असम्भव भी नहीं है।"

"मैं और चाहे कुछ हूँ कमल, शिवनाथ नहीं हूँ।" व्यथित होकर अजित ने कहा।

कमल ने उत्तर दिया, "यह मैं जानती हूँ। शायद आपसे अधिक जानती हूँ अजित वावू।"

अजित ने कहा, "जानतीं तो विश्वास कर लेतीं कि आज मैंने तुम्हें झूठ वहकाना चाहा था, इसमें सच्चाई लेशमात्र भी नहीं थी।"

कमल ने कहा, "झूठ की बात नहीं, मोह की बात हो रही थी। ये दोनों एक चीज नहीं हैं। आज मोहवश यदि आपने किसी को वहकाया है तो अपने को, मुझे नहीं।"

"पर अन्त में ठगाई तो तुम ही जातीं कमल। तुमने साथ चलने से मना नहीं किया। यह केवल हँसी ही थी।"

"जाँच करके क्यों नहीं देखा ? रास्ता खुला था, मैंने तो मना ही न किया।" कमल हँसकर वोली।

"अगर नहीं किया तो तुम्हें समझाना वास्तव में असम्भव है। जैसे नारी का प्रेम हृदय का आच्छादन कर देता है, वैसे ही उसके रूप का मोह

भी बुद्धि को हर लेता है। तुम जानती थीं कि यह मेरा प्रेम नहीं है, केवल क्षणिक मोह है। फिर इसे बढ़ावा तुमने क्यों दिया? कुहरा चाहे जितना सूर्य को ढँक दे, फिर भी वह झूठ है। अटल सच तो सूर्य है।"

कमल बोली,"यह तो कवि की उपमा है अजित बाबू, कोई युक्ति नहीं, सत्य भी नहीं। मालूम नहीं सूर्य धूप है या नहीं, पर कुहरा भी झूठ नहीं। दोनों ही नश्वर हैं, और हो सकता है कि दोनों ही नित्य हों। इसी प्रकार भले ही मोह क्षणिक हो, पर वह क्षण भी तो सत्य नहीं है। यही यदि आपकी शिकायत हो कि मैंने एक रात के मोह को बढ़ावा क्यों देना चाहा तो मैं पूछती हूँ कि आयुक्त-काल की लम्बाई ही क्या जीवन का इतना बड़ा सत्य है?"

वह कहने लगी, "आपके लिए मेरी बातें समझने का दिन अब भी नहीं आया, इसी से शिवनाथ के प्रति आपके क्रोध की सीमा नहीं, मगर मैंने उन्हें क्षमा कर दिया है। इसकी मुझे शिकायत नहीं कि जितना उनसे मैंने पाया है उससे अधिक मुझे क्यों नहीं मिला।"

अजित ने कहा, "यानी मन को इतना निर्विकार बना डाला है! अच्छा, संसार में किसी के विरुद्ध क्या तुम्हें कोई भी शिकायत नहीं?"

कमल बोली, "है, केवल एक के विरुद्ध।"

"किसके विरुद्ध, बताओ तो सही कमल!"

"क्या करेंगे आप दूसरे की बात सुनकर?"

"दूसरे की बात? कम-से-कम मैं यह तो समझ लूंगा कि क्रोध मुझ पर नहीं है।"

कमल ने कहा, "क्या आप इससे प्रसन्न हो जाएँगे? पर उसके लिए अब समय नहीं रहा। हम लोग आ पहुँचे। गाड़ी रोकिये, मैं उतर जाऊँ।"

गाड़ी रुक गई।

अँधेरे में कोई सड़क के किनारे खड़ा था। पास आते ही दोनों चौंक पड़े। अजित डरता हुआ बोला, "कौन?"

"मैं हूँ राजेन्द्र। वही, जिसे हरेन्द्र भैया के आश्रम में देखा है।"

"अच्छा राजेन्द्र! इतनी रात में यहाँ कैसे?"

"आप लोगों की राह देख रहा था। आप लोगों के आने के पश्चात्

ही आशु बाबू के यहाँ से आदमी आपको ढूँढ़ने आया था।" उसने कमल की ओर देखा—"शायद आपने सुना हो, चारों ओर एन्फ्लुएंजा फैला हुआ है। बहुत-से लोग मर गए हैं। शिवनाथ बाबू बहुत अधिक बीमार हैं। उन्हें आशु बाबू के घर पहुँचा आया हूँ। आशु बाबू ने विचारा कि शायद आप हों, इसी से बुलाने भेजा था।"

"इस समय क्या बजा होगा ?"

"शायद तीन बज चुके हों।"

कमल ने राजेन्द्र से कहा, "अन्दर बैठिये, आपको आश्रम में उतारते चलेंगे।"

अजित चुप रहा। गाड़ी हरेन्द्र के घर के सामने आकर रुकी।

राजेन्द्र के उतरने पर कमल ने कहा, "आपको धन्यवाद। मुझे सूचना देने के लिए आज आपको बहुत कष्ट हुआ।"

"यह तो मेरा कर्त्तव्य था। आवश्यकता होने पर सूचना दीजियेगा।" कहकर वह चला गया। न कोई भूमिका, न कोई आडम्बर—शाम को हरेन्द्र के मुँह से इस लड़के के विषय में जो कुछ उसने सुना था, सब याद आ गया। अभी-अभी यौवन में पैर रखा है—अपना कहने को कुछ भी हाथ में नहीं रखा; पराये काम में सब बाँट दिया।

अजित चुप था। यह सुनने के बाद कि रात के तीन बज चुके हैं, किसी बात पर विचार देने योग्य शक्ति उसमें नहीं थी। शायद कोई भी उससे कुछ पूछेगा नहीं, पूछने का साहस भी शायद किसी में नहीं, पर अब अज्ञात घटना की कहानी आद्योपांत पूरी-की-पूरी बना भी लेंगे, इससे भी अधिक व्याकुल उसे कर रखा था इस लज्जाहीन नारी की निर्भय सत्यवादिता ने। इस दुनिया में झूठ बोलने की आवश्यकता ही नहीं। यह मानो सारी दुनिया को संकट में डालने और लांछित करने के लिए ही उत्पन्न हुई है।

गेट के अन्दर घुसते ही उसकी दृष्टि पड़ी खुली खिड़की के सामने खड़े आशु बाबू पर। शायद वे इसकी प्रतीक्षा में हैं। गाड़ी की आहट से नीचे की ओर देखकर बोले, "अजित आ गये। साथ में कमल है।"

"कमल ?"

"जदु, कमल को शिवनाथ के कमरे में ले जाओ। वे बीमार हैं।" कहते-

कहते वह स्वयं ही उतर आये और बोले, "मौसम बदल गया है। समय ऐसा खराब है कि चारों तरफ बीमारी फैल गयी है। बहुत लोग मर रहे हैं। मुझे भी हरारत-सी मालूम हो रही है।"

कमल बोली, "तो आप जग क्यों रहे हैं, देख-रेख करने वालों की कमी तो नहीं है यहाँ?"

"कौन है बताओ? डॉक्टर आकर देख-भाल गये हैं। मुझे सोने भेजकर मणि स्वयं ही बैठी जाग रही है। पर मुझे नींद ही नहीं आयी कमल। पति की बीमारी के समय भी कैसा अभिमान? लड़ाई-झगड़ा होता ही रहता है, परन्तु खबर तक नहीं ली कि तीन-चार दिन से कहाँ किस मकान में वह बुखार में पड़ा हुआ है। अब तुम्हीं को तो यह भुगतना होगा। हरेन्द्र बाबू के मुँह से सुना कि घर पर नहीं हो, तभी मैं समझ गया कि अजित ने तुम्हें छोड़ा नहीं। वह स्वयं खूब घूमना पसन्द करता है। तुम्हें भी ले गया होगा। लेकिन सोचो तो जरा, अँधेरे में अचानक कोई घटना हो जाती तो कितनी परेशानी होती?"

अजित का भार हल्का हो गया। आशु बाबू का मन मानो बुराई की ओर जाता ही नहीं। स्नेह और श्रद्धा से उसने मन-ही-मन उन्हें नमस्कार किया।

कमल ने पूछा, "वे अस्पताल में जाकर यहाँ क्यों आये?"

"अस्पताल? यह देखो, अभी तक तुम्हारा क्रोध समाप्त नहीं हुआ।"

"क्रोध की बात नहीं आशु बाबू, यह स्वाभाविक बात है।"

"न यह स्वाभाविक है, न संगत ही। हाँ, इतना अवश्य है कि मणि को उन्हें यहाँ न लाकर तुम्हारे पास भेज देना ठीक था।"

"ना, मणि जानती है कि इलाज़ कराने की शक्ति मुझमें नहीं है।" कमल बोली।

उन्हें तुरन्त एक पहली बात याद आ गयी और वे लज्जित से हो गये।

कमल बोली, "केवल मनोरमा ही नहीं, शिवनाथ भी इस सत्य से परिचित है कि सेवा से ही रोग नहीं जाता, दवा भी चाहिए। अच्छा ही हुआ कि सूचना मेरे पास न आकर मणि के पास पहुँची।"

आशु बाबू मलीन होकर कहने लगे, "यह बात नहीं कमल, सेवा ही सर्वस्व है। सेवा सबसे बड़ी दवा है। मैं भुक्तभोगी हूँ कमल, बीमारी भोगते-

भुगतते मुझे इतनी शिक्षा मिल चुकी है। घर चलो, तुम्हारी चीज है, जैसा तुम ठीक समझोगी, वैसा ही होगा। मेरे रहते दवा-दारू का कष्ट नहीं होगा।" और उसे वे मार्ग दिखाते हुए आगे ले चले।

अजीत किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर, बिना समझे ही उनके साथ हो लिया।

सबने धीरे से कमरे में प्रवेश किया। देखा, शय्या के पास कुर्सी पर बैठी मनोरमा रोगी की छाती पर अपना मस्तक रखकर सो रही है और उसकी गर्दन में परस्पर सम्बद्ध दोनों बाँहें डाले शिवनाथ भी सो रहा है।

अचानक इस दृश्य पर जैसे ही आशु बाबू की दृष्टि पड़ी वैसे ही उनकी आँखों में अँधकार छा गया। क्षण-भर बाद ही वे वहाँ से भाग खड़े हुए।

अजित और कमल आँख उठाकर एक-दूसरे का मुँह देखने लगे और चुपचाप बाहर चले गये।

सोलह

अजित और कमल बरामदे में रुक गये।

अजित का चेहरा सफेद पड़ गया। अचानक मानो सारा खून सूख गया है।

अजित ने सम्मान दिखाते हुए कमल से पूछा, "यदि आप अभी घर लौट जाना चाहें तो मैं उसका प्रबन्ध कर सकता हूँ। यहाँ इस घर में अब तो आपका एक क्षण भी रहना उचित नहीं।"

"और आपका रहना उचित है?"

"मेरा भी नहीं। कल सवेरे ही मैं कहीं चला जाऊँगा।"

कमल ने कहा, "यही ठीक है। मैं भी तभी जाऊँगी। इस कुर्सी पर रात बिता दूंगी। आप जाकर आराम करें।"

अजित बगल झाँककर बोला, "परन्तु—"

कमल ने कहा, "परन्तु रहने दीजिये अजित बाबू, इस समय न घर जाना ही ठीक है और न आपके कमरे में। आप जाइये।"

सवेरे बैरा अजित को आशु बाबू के कमरे में ले गया। वे खाट से उठे नहीं थे। पास एक कुर्सी पर कमल बैठी थी।

आशु बाबू बोले, "मैंने सुना है कि आज सवेरे ही तुम कहीं जा रहे हो। रहने के लिए मैं अब कह नहीं सकता। अच्छा, गुडबाई। भविष्य में शायद कभी भेंट भी न हो; पर मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूँ कि हम लोगों को क्षमा करके तुम अपने जीवन में सुखी रहो।"

आशु बाबू दो-तीन मिनट चुप रहे, फिर कमल से बोले, "तुम्हें बुलवा तो लिया पर तुम्हारी आँखों से आँखें मिलाने का साहस मुझे नहीं है।" फिर जरा ठहरकर बोले, "एक दिन अक्षय कहता था कि शिवनाथ शायद तुम्हारे यहाँ अकसर नहीं रहते। इस बात पर मैंने उस समय ध्यान नहीं दिया था। तुम रुपयों की कमी के कारण संकट में थीं, तब कारण मैं नहीं समझा था, मगर आज सब-कुछ साफ हो गया। तुम्हारे साथ मैं कई बार अच्छा व्यवहार नहीं कर सका, पर प्रथम परिचय के दिन से ही मैं तुम्हें प्यार करता हूँ। यदि मैं आगरा न आता तो अच्छा था।" कहते-कहते उनकी आँखों में आँसू आ गये। उन्हें हाथों से पोंछते हुए वे बोले—"हे प्रभु!"

"आपको तो बुखार है आशु बाबू!" उनके माथे पर हाथ रखकर कमल बोली।

उसका हाथ अपने हाथों में लेकर आशु बाबू ने कहा, "रहने दो कमल, मैं जानता हूँ, तुम बहुत बुद्धिमान हो। इस घर में उस आदमी का अस्तित्व मेरे सारे बदन में आग लगा रहा है।"

कमल बोली, "मुझे आप क्या आज्ञा देते हैं? कहिये। शिवनाथ बाबू को आप रखना नहीं चाहते, पर वे बीमार हैं। इस हालत में या तो उन्हें अस्पताल भेज दीजिये या उनके घर। और यदि समझते हैं कि मेरे घर भेजने से ठीक रहेगा, तो वहाँ भेज सकते हैं, मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मैं जी-जान से केवल सेवा ही कर सकती हूँ। अधिक कुछ नहीं।"

आशु बाबू कृतज्ञता से बोले, "कमल, मालूम नहीं क्यों, पर ऐसे ही उत्तर की मैंने तुमसे आशा की थी। तुम अपनी चीज अपने घर ले जाओ। इलाज के व्यय का भार मुझ पर रहा।"

"पर इस विषय में एक बात पहले से ही साफ हो जानी चाहिए।"

आशु बाबू तुरन्त कह उठे, "तुम्हें कहने की आवश्यकता नहीं कमल, मैं जानता हूँ। एक दिन सारी गंदगी दूर हो जायेगी। तुम कोई चिंता न करो।"

कमल उनके मुँह की ओर देखती रही।

"क्या सोच रही हो कमल ?"

"सोच रही थी कि आपके पास रुपया है, दूसरों के लिए खर्च करना आपके लिए कोई कठिन नहीं, लेकिन यह भ्रम आपके अन्दर नहीं होना चाहिए कि इस प्रकार आप मुझ पर दया कर रहे हैं। किसी भी बहाने मैं आपकी दी हुई भीख नहीं लूंगी।"

आशु बाबू को सिलाई की मशीन की याद आ गयी, "तो क्या उसके लिए क्षमा नहीं कर सकतीं कमल !"

कमल ने कहा, "भूल शायद तब नहीं की जितनी कि अब आप करते जा रहे हैं। अब आप सोचते होंगे कि शिवनाथ बाबू को बचाना शायद मुझे ही बचाना है। मगर वास्तव में ऐसी बात नहीं। इसके बाद आपकी जो इच्छा हो, कर सकते हैं, मुझे कोई आपत्ति नहीं।"

"ऐसा ही क्रोध आता है कमल। यह कोई अस्वाभाविक बात नहीं और न अन्याय ही है। अच्छी बात है। मैं शिवनाथ को बचाना चाहता हूँ, तुम पर कृपा नहीं करता। अब तो ठीक है न ?" आशु बाबू बोले।

कमल बोली, "ना, यह ठीक नहीं। आपको जब मैं समझा नहीं सकती तो फिर कोई उपाय नहीं। उन्हें अस्पताल में नहीं भेजना चाहते, तो हरेन्द्र बाबू के आश्रम में भेज दीजिये। वे अनेकों की सेवा करते हैं, इनकी भी करेंगे। आपको जो कुछ व्यय करना हो, वहीं करिये। मैं थक गयी हूँ। चलती हूँ।" इतना कहकर वह जाने को प्रस्तुत हो गयी।

आशु बाबू मन-ही-मन क्रुद्ध होकर बोले, "यह तुम्हारी ज्यादती है कमल, तुम दोनों के कल्याण के लिए जो कुछ मैं करने जा रहा हूँ, उसे तुम व्यर्थ-विकृत करके देख रही हो। एक ओर यह भी सच नहीं कि मेरी लड़की का इससे सम्बन्ध है, इसलिए मैं किसी प्रकार बच निकलने का मार्ग खोज रहा हूँ। शिवनाथ को मैं केवल बचाना ही नहीं चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि ऐसे संकट के दिनों में तुम उसकी सेवा करके उसे पहले के समान पा जाओ, इसीलिए मेरा प्रस्ताव केवल अपने स्वार्थवश ही नहीं।"

बात सहृदयतापूर्ण थी, परन्तु कमल पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वह बोली, "ठीक यही बात मैं आपको समझाना चाहती थी आशु बाबू।

सेवा करने से मुझे मना नहीं। सेवा करने का मुझ अभ्यास है; परन्तु मैं उन्हें फिर से पाना नहीं चाहती; न सेवा करके और न विना सेवा से। यह मेरा झूटा अभिमान नहीं है—सत्य यह है कि हम दोनों का सम्बन्ध टूट चुका है; उसे मैं जोड़ नहीं सकती।"

कमल के कथन में सहजता न थी। आशु वाबू दंग रह गये। वोले, "यह क्या कह रही हो कमल? साधारण-सी वात पर पति को छोड़ना चाहती हो? यह शिक्षा तुमको किसने दी?"

कमल चुप रही।

आशु वाबू फिर वोले, "शिक्षा जिसने दी है, गलत दी है। यह अन्याय है, असंगत है, अपराध है। चाहे किसी भी घर में तुमने जन्म लिया है, तुम भारतीय कन्या हो। जानती हो कमल, दूसरे देश का धर्म सारे देश के लिए अधर्म है और स्व-धर्म में मृत्यु भी अच्छी है। यही मोह हमें रसातल की ओर ले जा रहा था। तुम लोग पागल के समान कहाँ जा रही हो? तुम्हें किसी वात की कमी नहीं, दीनता नहीं, किसी के आगे हाथ पसारने की आवश्यकता नहीं, केवल एक वार अपने घर की ओर मुड़कर देखो। पूर्व-पुरुष तुम्हारे लिए सब-कुछ छोड़ गये हैं। केवल एक वार हाथ बढ़ाकर उठा भर लो। वचपन की सभी वातें तो याद हैं—उफ, शिक्षित लोगों की तब कैसी दशा थी!" इतना कहकर उन्होंने स्वर्गीय मनीषियों को लक्ष्य करके हाथ जोड़कर नमस्कार किया।

कमल ने देखा कि अजित को आवेश में मानो होश नहीं रहा—ऐसी दशा थी।

आशु वावू भावावेश में फिर कहने लगे, "कमल, और कुछ भी यदि वे न कर जाते तो भी, केवल इस कारण ही देशवासियों के हृदय में वे प्रातः-स्मरणीय बने रहते।"

"क्या केवल इसी के लिए वे प्रातःस्मरणीय हैं?" कमल वोली।

"हाँ, केवल इसी वात के लिए। वाहर से दृष्टि हटाकर केवल घर की ओर आँख उठाकर देखने को कहा था—इसीलिए।"

कमल ने पूछा, "वाहर यदि प्रकाश हो और पूर्व आकाश में सूर्योदय हो रहा हो, तो भी पीछे मुड़कर पश्चिम की ओर देखना होगा? क्या यही है

स्वदेश-प्रेम ?"

यह बात शायद आशु बाबू ने नहीं सुनी। वे आवेश में कहते गये, "हमारे देश का धर्म, देश के पुराण-इतिहास, देश का आचार-व्यवहार, रीति-नीति विदेश के दबाव से लुप्त होते जा रहे थे। उसके प्रति हमारे अन्दर जो फिर से श्रद्धा और विश्वास पैदा हुआ है, वह केवल उन्हीं की भविष्य-दृष्टि का फल है। जाति के हिसाब से हम ध्वंस की ओर बढ़ रहे थे, उससे बचना क्या साधारण बात है कमल ? यह ज्ञान हमें किसने दिया कि उसे फिर से प्राप्त किये बिना हम नहीं बच सकते—कहो कमल ?"

अचानक अजित उत्तेजना में बोला, "मैंने कभी इसकी कल्पना भी नहीं की थी कि सब बातों का विचार भी आपके मन में व्याप्त है। मुझे भारी दुःख है कि अब तक मैंने आपको नहीं पहचाना, आपके चरणों में बैठकर उपदेश नहीं लिया।"

वह और भी कुछ कहने जा रहा था, तभी नौकर ने आकर कहा कि हरेन्द्र बाबू आदि भेंट करने आ रहे हैं।

दूसरे क्षण हरेन्द्र, सतीश और राजेन्द्र आ पहुँचे। कहा, "मालूम हुआ कि शिवनाथ बाबू सो रहे हैं। आते समय डाक्टर के यहाँ भी होता आया हूँ। उनका कहना है कि सीरियस नहीं, जल्दी ही आराम हो जायेगा।" कहते हुए उसने कमल को नमस्कार किया और अपने साथियों के साथ एक ओर बैठ गया।

आशु बाबू की दृष्टि थी कमल की ओर। उसी को लक्ष्य करके बोले, "मेरा सारा जीवन विलास में बीता है, इस बात को तुम लोग क्यों भूल जाते हो ! बहुत-सी चीजें निकट से नहीं दिखायी देतीं, दूर से ही दिखायी देती हैं। मैंने जो आज साफ देखा है यह शिक्षित मानव का परिवर्तन है। इन्हीं हरेन्द्र के आश्रम को देखो न, इसका जो प्रत्येक नगर में शाखा-प्रशाखाएँ विस्तार करने का आयोजन है, उसके मूल में क्या वही भावना नहीं है ? वही ब्रह्मचर्य, संयम की वही पुरानी रीति-नीति का प्रवर्तन—उसी को यदि हम भूल जायें, उसी के प्रति यदि हम विश्वास खो दें, तो फिर आशा के लिए हमारे पास कुछ भी शेष नहीं रहेगा ? तपोवन का आदर्श केवल हमारा था। संसार-भर में उसकी तुलना नहीं अजित। हमारे समाज का निर्णय करने वाले शास्त्रकार

संन्यासी नहीं थे, उनके दाने को बिना संशय के ग्रहण करने में हमारी सार्थकता है—यही हमारे कल्याण का मार्ग है कमल, दूसरा नहीं।"

अजित मौन था।

सतीश और हरेन्द्र ने आश्चर्य से देखा कि यह साहबी चाल-चलन वाला व्यक्ति आज क्या कह रहा है।

एक क्षण के लिए अपना दुःख भूलकर आशु बाबू बोले, "अब तुम समझीं कमल, तुमसे यह क्यों कह रहा था?"

कमल ने उत्तर में कहा, "ना।"

"ना क्यों?" आशु बाबू बोले।

कमल ने कहा, "आप परमानन्द के साथ यही तो कह रहे थे कि विदेशी शिक्षा के प्रभाव को दूर करके फिर प्राचीन शिक्षा पद्धति की ओर आज के शिक्षित जन आगे बढ़ रहे हैं। आपका विचार है कि इससे देश का कल्याण होगा, परन्तु इसका कारण आपने कोई नहीं बतलाया।"

"बताया कैसे नहीं?"

"नहीं बताया। जो आप कह रहे थे वह सुधार-विरोधी और प्राचीनता के अन्ध-विश्वासी कहा करते हैं। इसका कोई प्रमाण नहीं कि सभी पुरानी वस्तुओं का पुनरुद्धार संसार में हुआ है।"

आशु बाबू को इसका उत्तर न मिला।

अजित बोला, "बुरी वस्तु का उद्धार करने में कोई शक्ति नहीं नष्ट करता।"

कमल ने कहा, "बहुत लोग करते हैं। बुरी के लिए नहीं, बल्कि पुरानी वस्तु-मात्र की स्वतःसिद्धि अच्छी चीज समझकर करते हैं। अपने देश की चीज समझकर उसे गले लिपटाने में स्वदेश-भक्ति की वाहवाही तो है।"

आशु बाबू परेशान होकर बोले, "क्या कहती हो कमल! अपने देश का धर्म और आचार को छोड़कर यदि हम बाहर से भीख माँगें तो फिर अपना कहने को हमारे पास रह क्या जायेगा? फिर हम संसार में मनुष्य किस प्रकार कहलाएँगे और उसका क्या परिचय देंगे?"

कमल ने कहा, "परिचय देने की आवश्यकता ही नहीं है। संसार हमें बिना परिचय के ही जान लेगा।"

आशु बाबू बोले, "तुम्हें तो मैं समझ नहीं सका कमल !"

"समझने की कोई बात नहीं आशु बाबू, इस नश्वर संसार में मानव पग-पग पर जिस सत्य का अनुभव करता है, उसे सब पहचान नहीं सकते। सोचते हैं, यह आफत कहाँ से आ गई ? आपको उस दिन ताजमहल के नीचे खड़ी शिवानी की याद है ? आज कमल में वह नहीं है। आप सोचेंगे कि जिसे उस दिन देखा था वह कहाँ गई ? किन्तु वही मनुष्य का सच्चा परिचय है—मैं चाहती हूँ कि इसी सत्य से सदा लोगों को परिचय दे सकूँ।" तनिक रुककर पुनः बोली, "तर्क-वितर्क में हमारी वास्तविक बात खो गई —मूल विषय से बहुत दूर चले गए। मैं बहुत थकी हुई हूँ, अब जाती हूँ।"

आशु बाबू कुछ उत्तर न दे सके, केवल देखते ही रह गए। इस स्त्री को कहीं उन्होंने स्पष्ट समझा और कहीं बिलकुल ही नहीं समझा।

"अब पहुँचा दीजिये न अजय बाबू।" अजित को संकेत करके कमल ने कहा।

अजित संकोचवश सिर भी न उठा सका। कमल मन-ही-मन जरा हँसकर आगे बढ़ी और सहसा राजेन्द्र के कंधे पर हाथ रखकर बोली, "राजेन्द्र बाबू, तुम चलो न भाई, मुझे पहुँचा आओ।"

इस अचानक भाई के सम्बोधन से राजेन्द्र ने चौंककर उधर देखा। फिर शांत स्वर में बोला, "चलिए।"

दरवाजे के बीचोबीच कमल खड़ी होकर बोली, "आशु बाबू, मेरा प्रस्ताव ज्यों-का-त्यों है। उसी शर्त पर यदि इच्छा हो तो भेज दीजिए, मैं प्रयत्न कर देखूँगी। बच जाएं तो अच्छा है, नहीं तो उनका भाग्य।" वह नीचे चली गई। सब बुत बनकर रह गए।

रास्ते में राजेन्द्र ने विदा लेकर कहा, "मैं घण्टे-भर में अपना एक काम समाप्त कर लौटता हूँ।"

कमल ने घर जाकर देखा कि जीने का दरवाजा बन्द है। किसी ने घर नहीं खोला। पता चला कि नौकरानी बीमार है, उसकी छोटी नातिन सवेरे आकर चाबी रख गई थी।

कमल घर खोलकर घर के काम-धन्धे में लग गई।

एक प्रकार से कल से ही बिना खाये थी। उसने तय किया था, झटपट

किसी प्रकार कुछ खाकर आराम करेगी। सब काम निपटाकर जब वह नीचे से नहा-धोकर ऊपर आई तो चाय हो चुकी थी। इतने दिनों में वह समझ रही थी कि उसे यहाँ नहीं रहना है। रहना न सम्भव ही था, और न उचित ही। महीने के महीने किराया कहीं देना तो होगा ही, पर केवल जाने के दिन तक पहुँचना ही मानो उसके लिए कठिन हो रहा था। रात के बाद सुबह और सुबह के बाद रात आकर उसे रोक देती थी।

वह छज्जे पर जा बैठती और शून्य दृष्टि से सड़क पर देखती हुई न जाने क्या भूलने का प्रयत्न करती। फिर नीचे आकर काम में लग जाती। इसी प्रकार आज उसका काम और दिन दोनों समाप्त हुए। दिन तो रोज ही समाप्त होता है, पर समय काटने के लिए एक किताब उठाकर बिस्तरे के सहारे बैठी-बैठी उसके पन्ने उलटने लगी; लेकिन आज वह थकी बहुत थी। इसका पता भी नहीं चला कि कब किताब के पन्नों के साथ-साथ उसकी आँखों के पलक बन्द हो गए। जब पता चला तब कमरे की बत्ती बुझ चुकी थी और खिड़की से सूर्य के प्रकाश ने आकर सारे कमरे को लाल कर दिया था।

दिन चढ़ने लगा, पर महरी नहीं आई, इसलिए बासा तलाश करके उसकी भी खबर-सुध लेने की आवश्यकता हुई। कपड़े बदलकर वह निकल ही रही थी कि इतने में जीने पर किसी के चढ़ने का शब्द हुआ।

किसी ने पुकारा, "घर में हैं क्या ? आ सकता हूँ ?"

"आइये।" कमल ने कहा।

आने वाला था हरेन्द्र। कुर्सी खींचकर सामने बैठ गया और बोला, "कहीं बाहर जा रही थीं क्या ?"

"हाँ। जो बुढ़िया मेरे यहाँ काम करती थी वह बीमार है। उसी को देखने जा रही थी।"

"इन्फ्लुएंजा के अलावा और कुछ नहीं। मालूम होता है, आगरे में भी संक्रामक रोग फैल गया है। बस्तियों का बुरा हाल है। यदि अधिक फैला तो भागना पड़ेगा या मरना। यह बुढ़िया कहाँ है ?"

"सुना है कि यहीं कहीं रहती है, ढूंढ़ना होगा।"

हरेन्द्र ने कहा, "छूत की बीमारी है, जरा सावधान रहिएगा।"

"ना।" कमल बोली।

हरेन्द्र कमल के मुँह की ओर देखकर बोला, "डरिए नहीं, भय की ऐसी कोई बात नहीं। कल आना चाहता था, पर समय नहीं मिला। अक्षय वाबू की तबीयत खराब है। आशु वावू को आप कल देख ही आई हैं—अविनाश भैया को भी बुखार है, भाभी का मुँह सूख रहा है, कहीं बीमार न हो जाएँ। इसके अलावा शिवनाथ बीमार हैं ही। इन्फ्लुएंजा है। अस्पताल वह जाना नहीं चाहते। उनके घर पर ही उन्हें आज एक वार जाकर देख आना।"

"वहाँ है कौन ?" कमल ने प्रश्न किया।

"एक नौकर है। ऊपर कुछ पंजाबी रहते हैं।"

"एक वार राजेन्द्र वाबू को क्या आप मेरे पास भेज सकते हैं ?"

"भेज सकता हूँ, पर वह मिलेगा नहीं। मोचियों के मुहल्ले में बीमारी फैल रही है, उन्हीं की सेवा करने में लगा हुआ है। आश्रम में आया तो उससे कह दूँगा।" हरेन्द्र ने कहा।

"उन्हें घर पहुँचाया किसने है—आपने ?"

"ना, राजेन्द्र ने। उसी से सुना है कि पंजाबी लोग देख-भाल कर रहे हैं। फिर वे करें या ना करें, राजेन्द्र को जब सूचना मिल गई है तो किसी वात की कमी नहीं होने देगा—सम्भव है स्वयं ही देख-भाल कर रहा हो। राजेन्द्र को रोग नहीं पकड़ता। पुलिस से बचा रहे तो अकेला सौ के बरावर है।"

"पुलिस द्वारा पकड़े जाने का भय है क्या ?"

"हाँ, और इससे आश्रम को भी खतरा है।"

"उन्हें आश्रम छोड़ने के लिए कह क्यों नहीं देते ?"

"मुश्किल है। कहने से उसी समय चला जाएगा और फिर कभी लौटकर न आयेगा।"

"न आने में कोई हानि ?"

"हानि ! आप नहीं जानतीं। उसका जाना मैं सहन नहीं कर सकता।" इतना कहकर हरेन्द्र एक मिनट मौन रहा, फिर सहसा वोल उठा, "एक बड़े मजे की बात सुनो। कल भाई साहब के यहाँ से लौटकर देखता हूँ कि

अजित बाबू पधारे हैं। मैं डर गया कि कारण क्या है? कहीं बीमारी तो नहीं बढ़ गई? पता चला ऐसी कोई बात नहीं। वह आश्रम में रहने के लिए आए हैं। कहीं सतीश से उनकी बात पक्की हो गई होगी। आश्रम के काम में जीवन बिताने को ऐसे बड़े आदमी मिलें तो हमारे लिए श्रेयस्कर है, परन्तु कुछ गड़बड़ मालूम होती है। सवेरे आशु बाबू के पास गया तो वे बोले, 'संकल्प तो उत्तम है, पर भारत में आश्रमों की कमी नहीं, आगरा के अलावा कहीं अन्य स्थान पर रहें तो मैं कुछ दिन और आगरे में रहता'।"

कमल चुप रही। उसके लिए इसमें कुछ आश्चर्य नहीं था।

"आशु बाबू के यहाँ से आ रहा हूँ, और सोच रहा हूँ कि अजित बाबू से क्या कहूँ।"

हरेन्द्र फिर कहने लगा, "कदाचित् आशु बाबू को सब कुछ पता है। शिवनाथ के आपके प्रति व्यवहार से वह दुःखी हैं। लगभग बलपूर्वक ही उन्हें घर से विदा किया है। मनोरमा की इच्छा नहीं थी—अजित बाबू ने शायद मनोरमा का पक्ष लेकर ही झगड़ा किया हो।"

थोड़ी हँसकर कमल बोली, "हो सकता है; पर आपसे यह सब राजेन्द्र ने कहा था?"

"भला ये बातें राजेन्द्र कभी कहेगा! वह ऐसा आदमी बिलकुल नहीं है। वह जानता भी होगा तो भी न कहेगा। इसी से सोच रहा हूँ आखिर समझौता ही होगा। जितने दिन अजित आश्रम में रहेगा, हमारी ओर से किसी बात में कमी न होगी।"

"यही उचित है।" कमल बोली।

हरेन्द्र ने कहा, "अच्छा, मैं चला। समय मिला तो कल आऊँगा।"

"आइयेगा।" कहकर कमल ने नमस्कार किया और बोली, "राजेन्द्र को भेजना न भूलिएगा। कह दीजिएगा कि बड़ी कठिनाई के समय याद कर रही है।"

"कठिनाई में?" हरेन्द्र आश्चर्य से बोला, "भेंट होते ही भेज दूंगा, परन्तु वह कठिनाई क्या मुझसे नहीं की जा सकती? मुझे भी आप अपना भाई ही समझिएगा।"

"समझती हूँ, लेकिन उन्हीं को भेज दीजिएगा।"

"भेज दूंगा, अवश्य भेज दूंगा ।" कहकर हरेन्द्र चला गया ।

□

तीसरे पहर राजेन्द्र यहाँ आ पहुँचा ।

"मेरा एक काम करना होगा तुम्हें राजेन्द्र ।"

"कर दूँगा पर कल मेरे नाम के साथ वाला 'वावू' आज गायव कैसे हो गया ?"

"अच्छा ही हुआ, कुछ हलके हो गए । इच्छा हो तो फिर जोड़ दूं ?"

"ना, कोई इच्छा नहीं; परन्तु मैं आपको क्या कहकर पुकारूँ ?"

"कमल कहकर पुकारने में मेरे मान की कोई हानि नहीं होगी । नाम के भारी वनाने में मुझे लज्जा आती है । 'आप' न कहकर मुझे नाम से ही पुकारें तो अच्छा है ।"

राजेन्द्र बोला, "मुझे क्या करना होगा ?"

"मेरा भाई बनना होगा । लोग कहते हैं तुम क्रान्तिकारी हो । यदि यह सच है तो मेरे साथ तुम्हारी मित्रता पक्की रहेगी ।"

"यह पक्की मित्रता मेरे किस काम आएगी ?"

कमल इस संशय और उपेक्षा की ध्वनि का अनुभव करके वोली, "ऐसी वात नहीं कहनी चाहिए । मित्रता एक दुर्लभ वस्तु है, और मेरी मित्रता उससे भी अधिक है । जिसे पहचानते नहीं उस पर अश्रद्धा करके अपने को छोटा मत वनाओ ।"

इसका राजेन्द्र पर अच्छा प्रभाव हुआ । मुस्कराते हुए बोला, "अश्रद्धा के कारण नहीं—मित्रता की आवश्यकता नहीं समझने के कारण कहा था, और यदि आप समझें कि यह चीज मेरे काम आ सकती है, तो मैं अस्वीकार भी नहीं करूँगा; लेकिन सोच यही रहा हूँ कि क्या काम आएगी ।"

कमल का चेहरा आरक्त हो उठा, जैसे किसी ने चाबुक मारकर उसे अपमानित किया हो । वह उच्च शिक्षिता, अत्यन्त सुन्दरी और तीव्र बुद्धि-शालिनी है । संसार में नारियों ने उससे घृणा की है । पुरुषों ने आतंक की आग से भस्म करना चाहा है और अवज्ञा का ढोंग भी न किया हो सो वात नहीं; मगर यह तो कुछ और ही चीज है । आज इस युवक के सामने अपनी तुच्छता अनुभव करके मानो वह जमीन में गड़ गई ।

कमल के मन में एक सन्देह उठा। उसने पूछा, "मेरे सम्वन्ध में हो सकता है तुमने वहुत कुछ सुना हो।"

राजेन्द्र ने कहा, "हाँ, ये लोग प्रायः कहा तो वहुत कुछ करते हैं।"

"क्या कहते हैं?"

"देखिए, इस समय मेरी स्मरण-शक्ति वहुत बुरी है। कुछ याद नहीं रहता।"

"सच कहते हो?" कमल ने कहा।

"सच ही कह रहा हूँ।" राजेन्द्र ने उत्तर दिया।

कमल ने तर्क न करके यह विश्वास कर लिया कि स्त्रियों के विषय में अब तक इस व्यक्ति के मन में किसी प्रकार का कुतूहल ही पैदा नहीं हुआ।

कमल थोड़ी देर बाद वोली, "शिवनाथ वावू ने मुझे त्याग दिया है, क्या यह मालूम है आपको?"

"मालूम है।" राजेन्द्र ने कहा।

कमल ने कहा, "उस दिन हमारे विवाह के अनुष्ठान में तो धोखा था, पर मन में धोखा नहीं था। सवने कहा कि यह विवाह पक्का नहीं हुआ; लेकिन मैं डरी नहीं। मैंने कहा, होने दो कच्चा, हमारे भीतर के मन ने जव मान लिया है तव हमें यह देखने की आवश्यकता नहीं कि वाहर की गाँठ में कितने फेरे पड़े। वल्कि मैंने तो सोचा, यह अच्छा ही हुआ कि जिसे पति के रूप में स्वीकार किया है उसे ऊपर से नीचे तक कसकर वाँधा नहीं। उसकी मुक्ति की अर्गला यदि थोड़ी ढीली ही रह गई तो रहने दो। यदि मन ही दिवालिया हो जाए, तो फिर पुरोहित के मन्त्र को महाजन वना के खड़ा करने से ब्याज भले ही अदा हो जाय, पर मूल तो डूव ही जाएगा। मगर यह सव तुमसे कहना व्यर्थ है, तुम समझोगे नहीं।"

राजेन्द्र चुप था।

कमल फिर कहने लगी, "मैं नहीं जानती थी कि उन्हें रुपयों का लोभ इतना अधिक है। जानती तो लांछना से वच जाती।"

"इसका मतलव?" राजेन्द्र वोला।

कमल ने सहसा अपने को रोककर कहा, "रहने दो मतलव। तुम सुनके करोगे भी भला क्या?"

सूर्य अस्त हो चुका था। घर में अँधेरा होता जा रहा था। कमल ने बत्ती जलाई और अपनी जगह पर आकर कहा, "खैर, जो भी हो, मुझे एक बार उनके घर ले चलो।"

"वहाँ जाकर क्या करेंगी?"

"अपनी आँखों से एक बार देखना चाहती हूँ। अगर आवश्यकता होगी तो रह जाऊँगी, नहीं तो तुम पर भार सौंपकर निश्चिंत हो जाऊँगी, इसीलिए तुम्हें बुलाया था। तुम्हारे अलावा यह काम और कोई नहीं कर सकता। उनके प्रति लोगों को काफी घृणा है।" कहते-कहते कमल ने बत्ती को बढ़ा दिया।

"अच्छा चलिए, मैं ताँगा ले आऊँ।"

ताँगा आ गया।

उस पर बैठ राजेन्द्र बोला, "उनका भार मुझ पर सौंप आप निश्चिंत होना चाहती हैं, यह सम्भव तो था पर अब यहाँ मेरा रहना सम्भव नहीं, बहुत शीघ्र चले जाना है। आप कोई और प्रबन्ध करें तो अच्छा है।"

"क्यों, पुलिस शायद परेशान कर रही है?" कमल ने पूछा।

"उसका तो मैं अभ्यस्त हूँ—इसके लिए नहीं।"

"तो क्या आश्रम के लोग जाने को कह रहे हैं? भयभीत रहते हैं, परन्तु इसी आगरा शहर में ऐसा भी एक व्यक्ति है जो तुम्हें स्थान देने में जरा भी नहीं डरेगा।"

राजेन्द्र ने कहा, "वह शायद आप ही हैं। इस उपद्रव से न डरने वाले आदमी बिरले ही हैं। होते तो देश की यह दशा नहीं रहती।" जरा ठहरकर फिर बोला, "मगर मैं इस कारण से नहीं जा सकता। और चाहे जिसके मुँह से निकल जाए, पर मेरे लिए चले जाने की बात हरेन्द्र भैया के मुँह से नहीं निकल सकती।"

"तो क्यों जा रहे हो?"

"केवल अपने लिए। मेरा उनसे मत नहीं मिलता, और न काम की धारा ही मेल खाती है। केवल प्रेम की दृष्टि से हरेन्द्र को मैं भाई से भी प्रिय हूँ।"

कमल की चिन्ता दूर हो गई। बोली, "इससे बढ़कर और क्या हो

सकता है राजेन्द्र ! मन जहाँ मिल गया, वहाँ मत का मेल न हो, न सही। इससे क्या आता-जाता है। सब कोई एक ही प्रकार से सोचेंगे, एक ही प्रकार का काम करेंगे और सभी एकसाथ रहेंगे—यह क्यों ? और हम अगर दूसरे के मत पर श्रद्धा न कर सकें, तो फिर शिक्षा ही क्या हुई ?"

राजेन्द्र हँस पड़ा।

"हँसे क्यों ?" कमल ने पूछा।

"हँसा इसलिए कि तब हँसा नहीं था। आपने अपने स्वयं के विवाह के मामले में मन के मेल को ही एकमात्र सत्य स्थिर करके बाह्य अनुष्ठान को बेमेल कहके उड़ा दिया था। वह सत्य नहीं था, इसलिए आज आप दोनों का सब-कुछ झूठ हो गया।"

"इसका तात्पर्य ?"

राजेन्द्र ने कहा, "मन के मेल को मैं बुरा नहीं समझता। मगर उसी को बड़ा कहना आजकल एक ऊँचे ढंग का फैशन हो गया है। इससे उदारता और महत्ता दोनों ही प्रकट होती हैं, परन्तु सत्य प्रकट नहीं होता। यह कहना गलत है कि संसार में केवल सर्वोच्च एक मन ही है और उसके बाहर जो कुछ है वह कुछ नहीं है। आप अभी-अभी विभिन्न मतवादों के प्रति श्रद्धा रख सकने को ही बड़ी शिक्षा बता रही थीं मगर आप जानती हैं कि सब तरह के मतों पर श्रद्धा कौन रख सकता है ? जिसको अपने मत का कुछ भी पता नहीं, वही रख सकता है। शिक्षा के द्वारा विरुद्ध मत की चुपचाप उपेक्षा की जा सकती है।"

कमल को अत्यन्त आश्चर्य हुआ। वह मौन रही।

राजेन्द्र फिर कहने लगा, "हमारी ऐसी नीति नहीं है। झूठी श्रद्धा से हम संसार का सर्वनाश नहीं करते। उस श्रद्धा को तोड़-फोड़कर चकनाचूर कर डालते हैं। हम लोगों का काम है।"

कमल ने कहा, "इसी को तुम लोग काम कहते हो ?"

राजेन्द्र ने कहा, "हाँ, कहते हैं। मत का भार ही यदि हमारे कार्यों में बाधा पहुँचाता रहा तो मन के मेल से हमें क्या करना है ? हम चाहते हैं मत की एकता, काम की एकता—हमारे लिए भावों के विलास का कोई भी मूल्य नहीं शिवानी—"

"मेरा यह नाम भी तुम्हें मालूम है ?"

"हाँ। कर्म के जगत् में आदमी के व्यवहार का मेल ही बड़ा मेल है, मन का नहीं है। मन का हो तो बना रहे। अंतःकरण का विचार अंतर्यामी करेंगे। हमारा काम तो व्यावहारिक एकता के विना नहीं चल सकता। यही हमारी कसौटी है—इसी से हम जाँच करते हैं। बाहर से यदि स्वर में मेल नहीं तो केवल दो जनों के मन के मेल में संगीत की सृष्टि नहीं होती, वह तो केवल कोलाहल ही कहलायेगा। राजाओं की सेनाएँ युद्ध करती हैं, उनकी बाहर की एकता ही राज की शक्ति है। मन से उसे कोई मतलब नहीं। नियम का शासन संयम है– और यही हम लोगों की नीति है। ताँगे वाले, रोको, रोको —शिवानी, यही उनका घर है।"

एक टूटा-फूटा मकान है। दोनों चुपके से उतरकर नीचे की एक कोठरी में पहुँचे। आहट सुनकर शिवनाथ ने आँखें खोलकर देखा, पर दीये के धुँधले प्रकाश में शायद पहचान न सका। क्षण-भर बाद ही उसने आँखें मीच लीं।

कमल स्तब्ध रह गई। सहसा किसी को विश्वास नहीं हो सकता कि यहाँ कोई आदमी भी रहता है। इतने में एक सत्रह-अठारह साल का लड़का वहाँ आया।

राजेन्द्र ने उसका परिचय दिया, "शिवनाथ बाबू का नौकर है। पथ्य बनाने से लेकर दवा खिलाने तक सब काम यही करता है। बीमार के सम्बन्ध में यदि उपदेश देना हो तो इसी को दीजिए। क्या नाम है तेरा ?"

"फगुआ।"

"आज दवा दी थी ?"

"हाँ—दूध भी पिला दिया है।"

"ऊपर के पंजाबी बाबुओं में से कोई आया था ?"

"दोपहर को एक बाबू आए थे।"

कमल ने कहा, "झाड़ू-वाड़ू है या नहीं ?"

राजेन्द्र बोला, "झाड़ू क्या करेगी ? उसे पीटेगी क्या ?"

"यह क्या हँसी का समय है ? माया-ममता क्या तुम्हारे बिलकुल नहीं है ?" कमल गम्भीर स्वर में बोली।

"पहले थी। वाढ़ और अकाल दोनों में नष्ट हो गई है।"

फगुआ झाड़ू लेकर आ गया।

राजेन्द्र बोला, "मैं भूख से मर रहा हूँ, कहीं जाकर कुछ खा आऊँ। तब तक झाड़ू और इस लड़के का जो उपयोग कर सकें, आप कीजिए। वापस आकर मैं आपको घर पहुँचा दूँगा। भयभीत न होना, मैं डेढ़-दो घंटे में लौट आता हूँ।" कहकर वह चल दिया।

दो घंटे बाद राजेन्द्र वहाँ आया। उसने इधर-उधर देखा और इस थोड़े-से समय में सारे कमरे में पर्याप्त परिवर्तन देख कुछ देर चुप खड़ा रहा। फिर हाथ की छोटी-सी पोटली बगल की तिपाई पर रखते हुए बोला, "आपको जैसा समझता था वैसी नहीं हैं। आप पर भरोसा किया जा सकता है।"

कमल चुप रही। चुपके से उसने उसके मुँह की ओर देखा।

राजेन्द्र ने कहा, "इस थोड़े समय में आपने तो बिस्तर बदल डाला है। पर आपने उन्हें उठाकर उस पर सुलाया कैसे?"

"तरीके से। यह काम कठिन नहीं है।"

"मगर मालूम कैसे हो?"

"बचपन में चाय के बगीचे में मैंने बहुत-से रोगियों की सेवा की है।"

"अच्छा, यह बात है।" कहकर उसने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। कहा, "आते समय कुछ खाने को ले आया हूँ। लीजिए, खा लीजिए, मैं बैठा हूँ।"

कमल उसकी ओर जरा हँसकर बोली, "खाने के बारे में तो मैंने कहा नहीं था, अचानक यह बात सूझी कैसे?"

राजेन्द्र बोला, "बात सच है, सूझा बिलकुल अचानक। जब मेरा पेट भर गया तब लगा कि आपको भी भूख लगी होगी। थोड़ा-सा लेता आया। देर न कीजिए, खाने बैठिए।"

कमल ने खाना स्वीकार नहीं किया।

राजेन्द्र ने भी जोर न दिया। आखिर वह बोला, "अच्छा, अब चलो न। बहुत रात हो रही है और मार्ग भी काफी तय करना है।"

"पर तुम्हें तो फिर इसी मार्ग से लौटना भी है?"

"हाँ।"

"तुम्हारा मोची-मोहल्ला कितनी दूर है?"

"यहाँ से करीब एक मील है।"

"तुम साइकिल से घूम आओ —मैं तब तक बैठी हूँ।"

राजेन्द्र बोला, "पर आपने तो दो दिन से कुछ खाया नहीं।"

"कैसे पता चला तुम्हें ?"

"सूचना मैंने स्वयं प्राप्त की है। आते समय रसोईघर झाँककर देखा था, आलू-भात तैयार था—पतीली देखने से स्पष्ट हो गया कि वह रात्रि का बनाया हुआ है। अर्थात् दो दिन से आपका कोरा उपवास हो रहा है। सो या तो चलिए या फिर जो लाया हूँ उसे खा लीजिए।"

"मगर मेरे लिए तुम्हें इतनी चिन्ता क्यों ?" कमल हँसकर बोली।

"कारण की अभी स्वयं खोज में हूँ, पता चलने पर सूचना दूँगा।"

कमल बोली, "अवश्य देना। शरमाना मत।" फिर कुछ देर चुप रह-कर कहा, "राजेन्द्र, तुम्हारे आश्रम के भाई साहबों ने तुम्हें बहुत कम पहचाना है, इसी से वह तुम्हें उपद्रवी समझते हैं; पर मैं तुम्हें पहचानती हूँ। पर मुझे भी पहचानना तुम्हारे लिए आवश्यक है।" और फिर जरा स्थिर रहकर कहने लगी, "मैं अपने हाथ से बनाकर खाती हूँ। एक समय खाती हूँ, सो भी अत्यन्त गरीबी का खाना···मुट्ठी-भर दाल-भात, बस। पर मेरा व्रत नहीं है, इसलिए तोड़ भी सकती हूँ; लेकिन इसीलिए नियम भंग नहीं करूँगी कि दो दिन से खाया नहीं है। तुम्हारे इस स्नेह को नहीं भूलूंगी, पर तुम्हारी बात भी न रख सकूँगी राजेन्द्र ! इसके लिए तुम अप्रसन्न मत होना, भला ?"

"ना।"

थोड़ी देर का मौन।

"क्या सोच रही हो, बताओ तो सही ?"

"सोच रही हूँ, परिचय की भूमिका का यह अंश बुरा नहीं रहा। आसानी में भुलाया नहीं जा सकेगा।"

"मैं तुम्हें भूलने कब दूंगी।" वह हँस पड़ी। फिर बोली, "अब जाओ और जल्दी लौट आना। बड़ी आरामकुर्सी पर कम्बल बिछा रखूंगी—सबेरा होने पर हम लोग घर चलेंगे—ठीक है ?"

राजेन्द्र ने सिर हिलाकर कहा, "ठीक है। सोचा था, आज की रात भी

आँखों में बितानी पड़ेगी; लेकिन अवकाश स्वीकार हो गया—सेवाभार आपने अपने ऊपर ले लिया। लौटने में मुझे कुछ देर न लगेगी, पर इस बीच में सो मत जाइएगा।"

राजेन्द्र बाहर चला गया।

शिवनाथ मानो जाने की वाट देख रहा था। करवट बदलकर बोला, "वह कौन है ?"

कमल सुनकर चौंक पड़ी।

आँखों में थोड़ी-सी सुस्ती थी; पर चेहरा बिलकुल स्वाभाविक था। अधूरी नींद उचट जाने जैसा है, उससे अधिक कुछ नहीं।

शिवनाथ ने फिर पूछा, "यह कौन हैं शिवानी ! तुम्हें साथ लेकर क्या यहीं आए हैं ? क्या नाम है ?"

"राजेन्द्र।"

"तुम दोनों क्या आजकल एक ही मकान में रहते हो ?"

"प्रयत्न तो यही कर रही हूँ। रह जाएँ तो मेरा भाग्य।"

शिवनाथ ने फिर पूछा, "यह बात तुमने किसके मुँह से सुनी कि मेरे साथ तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं रहा ? मैंने कहा है या ऐसा लोग कह रहे हैं ?"

कमल ने इसका उत्तर नहीं दिया। उसने स्वयं ही प्रश्न किया, "मुझसे कोई ब्याह नहीं किया, सो मैंने इस पर भले ही विश्वास न किया हो, तुम तो करते थे। पर मुझे छोड़कर आते समय कहकर क्यों नहीं आये ? तुम्हें बाँधकर रोकना या रो-पीटकर अनर्थ खड़ा करना मेरा स्वभाव नहीं।"

शिवनाथ थोड़ी देर चुप रहकर बोला, "काम की झंझट के मारे या रोजगार के कारण कुछ दिनों के लिए पृथक् मकान लेकर रहने लगना ही क्या त्यागना हो गया ? मैं तो सोचता था—"

कमल बीच में बोल उठी, "रहने दो, मैं नहीं जानना चाहती।" कुछ चुप रहकर अपने को शान्त कर बोली, "तुम क्या सचमुच ही बीमार थे ?"

"सच नहीं तो क्या झूठ ?"

"सचमुच ही यदि बीमार थे तो मेरे यहाँ न आकर आशु बाबू के घर किसलिए गए ? तुम्हारे एक काम ने तो मुझे दुःख ही पहुँचाया है, पर दूसरे

काम ने मेरा तिरस्कार किया है। मैं जानती हूँ, यह सुनकर कि मुझे दुःख हुआ है, तुम हँसोगे, पर यह जानना ही मेरे लिए संतोष है कि तुम इतने ओछे हो। केवल इसीलिए, मैंने यह सह लिया, नहीं तो मुझसे नहीं सहा जाता। तुम जानते हो, मुझे वह सब सहन हुआ, पर तुम्हें घर से निकाल देना मुझसे सहा नहीं गया। इसी से तुम्हारी सेवा करने आई थी—तुम्हें रिझाने नहीं।"

"तुम्हारी इस दया के लिए मैं कृतज्ञ हूँ शिवानी।"

"तुम मुझे शिवानी कह के मत पुकारो।"

"क्यों?"

"यह नाम सुनने से मुझे अब घृणा होती है।"

"परन्तु एक दिन तो तुम इसी नाम को बहुत पसन्द करती थीं।" कहकर शिवनाथ ने कमल का हाथ अपने हाथ में ले लिया।

"मौन क्यों हो रही हो, कमल!"

कमल फिर भी चुप रही।

"क्या सोच रही हो, बताओ न शिवानी!"

"क्या सोच रही हूँ, जानते हो! सोच रही हूँ कि इन बातों को याद दिलाने वाला व्यक्ति कितना पाखण्डी है।"

शिवनाथ रुआँसा होकर बोला, "मैं पाखण्डी नहीं हूँ शिवानी। एक दिन आयेगा जब तुम अपनी भूल समझ जाओगी—उस दिन तुम्हारे पश्चात्ताप की सीमा न रहेगी कि क्यों मैंने पृथक् कमरा किराये पर लिया है—"

"परन्तु पृथक् कमरा लेने का कारण तो मैंने नहीं पूछा? मैं तो केवल यही जानना चाहती थी कि यह बात तुम मुझे बताकर क्यों नहीं आए? तुम्हें एक दिन के लिए भी मैं बाँधकर नहीं रखती।"

उसने आँखों से आँसू ढलकाकर कहा, "कहने का साहस नहीं हुआ शिवानी!"

"क्यों?"

शिवनाथ कमीज के कफों से आँसू पोंछकर बोला, "एक तो रुपयों की तंगी, उस पर आये दिन पत्थर खरीदने बाहर जाना पड़ता था। माल लादने-उतारने के लिए स्टेशन के पास एक—"

कमल बिस्तर से उठकर दूर एक कुर्सी पर जा बैठी। बोली, "मुझे अपने लिए अब दुःख नहीं होता। होता है एक दूसरे आदमी के लिए, पर आज तुम्हारे लिए भी दुःख हो रहा है शिवनाथ बाबू ! कोरी वंचना को ही मूलधन मानकर दुनिया में व्यापार नहीं किया जा सकता। मेरे साथ हो सकता है कि कभी तुम्हारा मिलाप न हो, लेकिन मेरी तुम्हें याद आयेगी। जो होना था सो तो हो चुका, वह अब वापस नहीं आ सकता; तुम अच्छी तरह रहो, यही मेरी परमात्मा से प्रार्थना है।"

कमल ने बड़ी कठिनाई से अपने आँसू रोके। यह बताकर कि आशु बाबू ने क्यों उसे अपने घर से हटा दिया, उसका असली कारण क्या था—वह इतनी बड़ी चोट, इतनी बात हो जाने पर भी उसे चोट न पहुँचा सकी।

बाहर साइकिल की घंटी सुनाई पड़ी।

शिवनाथ बिना कुछ बोले चुपचाप करवट बदलकर सो रहा।

राजेन्द्र ने भीतर आकर कहा, "आप सचमुच जाग रही हैं। रोगी का क्या हाल है ? दवा पिलायी ?"

"ना, कुछ नहीं पिलायी।" कमल ने कहा।

राजेन्द्र ने उँगली से इशारा करके कहा, "चुप। नींद उचट जायेगी—नींद खराब होना अच्छा नहीं।"

"पर तुम्हारे मोचियों का क्या हाल हुआ ?"

"वे भले आदमी थे, बात रख ली। मेरे पहुँचने के पहले ही यमराज के भैंसे आकर दो आत्माओं को ले गये। सवेरे दोनों मुर्दों को म्युनिसिपैलिटी के भैंसों को सौंपकर अवकाश पा लूंगा—और भी आठ-दस साँसें भर रहे हैं, कल एक बार आपको ले जाकर दिखलाऊँगा। आशा है आपको पर्याप्त ज्ञान प्राप्त होगा। आरामकुर्सी पर मेरा कम्बल का बिछौना कहाँ है ? भूल गयीं ?"

कमल ने तुरन्त कम्बल बिछा दिया।

"ओफ्—अब जान-में-जान आयी।" कहकर उसने एक लम्बी साँस ली और हाथ-पाँव पसारकर वह पड़ रहा, बोला, "दौड़-धूप करते-करते पसीने से लथपथ हो गया हूँ—पंखा-वंखा कुछ है क्या ?"

कमल हाथ में पंखा लेकर कुर्सी खींचकर उसके सिरहाने बैठ गयी और

बोली, "मैं हवा कर रही हूँ, तुम सो जाओ। रोगी के लिए कोई चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं, वे ठीक हैं।"

"तव तो सब तरफ शुभ-ही-शुभ समाचार है।" कहते हुए उसने आँखें मीच लीं।

सत्रह

इस देश में इंफ्लुएंजा नयी बीमारी नहीं है। 'डेंग या हड्डी तोड़' बुखार के नाम से यहाँ वाले इसे पुकारते हैं।

इस बार अचानक इसकी प्रवल शक्ति की कठोरता से लोग पहले तो हतबुद्धि हो गये। बाद में जिससे जिधर बन पड़ा, भाग खड़ा हुआ। बीमार की सेवा करना तो दूर रहा, मरते समय मुँह में पानी देने वाला भी बहुतों के भाग्य में न लिखा था। आगरा के भाग्य में भी यही लिखा था—उस प्राचीन नगरी की शक्ल कुछ ही दिनों में बिलकुल बदल गयी। स्कूल-कालेज बन्द हो गये हैं। किसी का भाई मर गया है तो किसी का लड़का, किसी की स्त्री मर गयी है तो किसी की लड़की।

मोचियों के मोहल्ले में अब अधिक आदमी नहीं बचे हैं। जितने मरे, उतने ही भाग गये। शेष के लिए राजेन्द्र अकेला ही बहुत है। उनकी गति और मुक्ति का भार स्वयं उसी ने अपने पर लिया है। सहयोगी के रूप में कमल हाथ बँटाने आयी थी। उफ्!मोचियों की यह कैसी दुर्दशा थी! वर्णन कठिन है। झोंपड़ियों में पाँव धरते ही शरीर काँप उठता था—कहीं भी बैठने को स्थान नहीं। वहाँ आने के पहले कमल नहीं जानती थी कि गंदगी कैसी भयंकर हो सकती है। बड़े दर्प के साथ वह राजेन्द्र के साथ यहाँ आयी थी। संसार की किसी बात से वह डरती नहीं—मौत से भी नहीं, पर यहाँ आकर उसने समझा कि इसकी भी एक सीमा है। कुछ दिनों में ही डर के मारे उसकी देह का खून सूखने लगा। फिर भी बिलकुल ही दिवालिया होकर घर लौट आने के पहले राजेन्द्र ने उसे आश्वासन देकर कहा, "ऐसी निडरता मैंने अपने जीवन में नहीं देखी। ठीक तूफान के मुँह को ही आपने संभाल

लिया; पर अब आवश्यकता नहीं—आप घर जाकर कुछ दिन आराम कीजिये। जो कुछ आप किये जा रही हैं, उसका ऋण ये अपने जीवन में न चुका सकेंगे।''

''और तुम ?''

राजेन्द्र ने कहा, ''इन शेष लोगों को महायात्रा कराकर मैं भी भाग जाऊँगा नहीं तो, आप चाहती हैं कि इनके साथ मैं भी मर जाऊँ ?''

स्कूल-कालेज बन्द होने के समय में हरेन्द्र का ब्रह्मचर्याश्रम भी बन्द है। ब्रह्मचारी बालकों को किसी दूसरे स्थान में पहुँचा दिया गया है और देखरेख के लिए सतीश उनके साथ है। अविनाश की बीमारी के कारण हरेन्द्र नहीं जा सका।

आज वह कमल के घर आया और नमस्कार करके बोला, ''उन्हीं में से मैं भी एक हूँ।''

कमल ने धीरे से पूछा, ''मुझ पर आप श्रद्धा रखते हैं, वह किस नीति से ? मेरे मत या आचरण से आपका मेल नहीं है ?''

हरेन्द्र ने उत्तर दिया, ''कोई मेल नहीं। परन्तु फिर भी मैं गहरी श्रद्धा रखता हूँ। क्यों, यही प्रश्न मैं अपने-आप से बारम्बार पूछा करता हूँ।''

''कोई उत्तर नहीं पाते ?''

''ना, मगर विश्वास है कि किसी-न-किसी दिन अवश्य पा लूँगा।'' फिर जरा ठहरकर बोला, ''आपका इतिहास कुछ-कुछ आपके ही मुँह से सुना है, कुछ अजित बाबू से पता चला है—हाँ, आपको मालूम होगा शायद, वे अब हमारे आश्रम में ही रहने लगे हैं।''

''यह तो आप पहले ही बता चुके हैं।''

हरेन्द्र बोला, ''आपके जीवन-इतिहास के अनोखे अध्याय ऐसी उदारता से सामने आ खड़े हुए हैं कि उनके विरुद्ध छिछली राय व्यक्त करने में भय लगता है। अब तक जिन बातों का बुरा मानना सीखा है, आपके जीवन ने मानो उन्हीं के विरुद्ध मामला दायर कर दिया है। इन बातों का न्याय करने वाला कहाँ मिलेगा और उसका नतीजा क्या होगा सो मुझे कुछ भी नहीं मालूम, पर बताइये तो सही कि इस तरह से जो निर्भयता से आ सकती है और पर्दे की कोई आवश्यकता नहीं, उसके प्रति श्रद्धा कैसे प्रकट की जाय ?''

कमल ने कहा, "निर्भयता से आपके सामने खड़ा हो जाना ही क्या कोई वहुत वड़ा काम है ? दो कनकटों की कहानी क्या आपने सुनी ? वे भी वीच सड़क से चलते थे। उनका निर्भय-निःसंकोच वेहयापन देखकर दुनिया में लज्जा को भी लज्जा आती है। उनकी यह वात क्या आदमी के लिए श्रद्धा की वस्तु है ?"

"लेकिन, यह और वात है।"

"कैसे जाना कि और वात है ? वाहर से मेरे पिता को भी लोग उन्हीं में से एक समझा करते थे। मगर मैं जानती हूँ, वह सच नहीं था और सच तो केवल मेरे जानने पर ही निर्भर नहीं—दुनिया के आगे उसका प्रमाण क्या है ?" कमल वोली।

हरेन्द्र इस प्रश्न का उत्तर न दे सका और चुप रहा।

कमल कहने लगी, "मेरा इतिहास आप सवने सुना है, और सम्भव है कि उस कहानी के प्रति आनन्द लिया है; पर इस विषय में आप चुप हैं कि मेरे काम सव अच्छे हुए या जीवन मेरा पवित्र है या कलुषित—मगर हाँ, सवकी अपेक्षा दृष्टि के सामने हुए हैं—मेरे प्रति आपकी श्रद्धा के आकर्षण का कारण यही है। हरेन्द्र वावू, अक्षय वावू की अश्रद्धा से वढ़कर यह श्रद्धा ही मुझे अधिक दुःख पहुँचाती है। अश्रद्धा मैं सह लेती हूँ; पर इस श्रद्धा का वोझ नहीं।"

हरेन्द्र को इन शब्दों में अपने अपमान का अनुभव हुआ। वह वोला, "क्या इस पर आपको विश्वास नहीं कि विचार और व्यवहार में पृथक्ता होने पर भी मैं आप पर श्रद्धा कर सकता हूँ ?"

कमल ने सरलता से उत्तर दिया, "यह तो मैंने नहीं कहा हरेन्द्र वावू कि विश्वास नहीं होता। मैंने तो केवल यही कहा है कि ऐसी श्रद्धा मुझे दुःख पहुँचाती है।" फिर कुछ ठहरकर कहा, "आचार और विचार के ध्यान से अक्षय वावू और आपमें कोई विशेष भेद नहीं है। उनमें वहुत जगह अनावश्यक और अत्यधिक कठोरता न होती तो आप सब एक-से ही होते और श्रद्धा के विचार से भी आप सब एक हैं। मेरे केवल इस साहस ने कि मैं लज्जा और संकोच के मारे छिपी-छिपी नहीं फिरती, आप लोगों से श्रद्धा प्राप्त की है। पर इसका क्या मूल्य है हरेन्द्र वावू ? यह सोचकर

कि आप इसीलिए मेरी वाहवाही करते हैं कि मन में एक अरुचि आ गई है।"

हरेन्द्र ने कहा, "इसके लिए वाहवाही यदि हो ही, तो क्या वह असंगत है? साहस क्या दुनिया में कोई चीज नहीं?"

कमल ने कहा, "आप लोग हर एक प्रश्न को इतना एकाकी करके क्यों पूछते हैं? यह तो मैंने नहीं कहा कि साहस कोई चीज ही नहीं। मैंने तो कहा था कि यह चीज संसार में दुर्लभ है और दुर्लभ होने से ही यह आँखों में चकाचौंध पैदा कर देती है। पर इससे भी बड़ी एक चीज है और वह चीज सहसा बाहर से साहस के अभाव जैसी ही प्रतीत होती है।"

हरेन्द्र ने सिर हिलाते हुए कहा, "समझ नहीं सका। आपकी बहुत-सी बातें मुझे पहेली-सी मालूम देती हैं, लेकिन आज की बातें तो उन्हें भी लाँघ गई हैं। इसका आपको कुछ ध्यान नहीं कि किसका उत्तर किसे दिये चली जा रही हैं।"

"ठीक यही बात है।" फिर क्षण-भर मौन रहकर बोली, "हो भी सकता है। सचमुच की श्रद्धा पाना क्या चीज है, सो शायद अब तक मैं स्वयं ही नहीं जानती। उस दिन सहसा चौंक-सी गई। हरेन्द्र बाबू, आप दुःखी न हों, पर उसके साथ तुलना करने से और भी सब बातें आज हँसी-सी मालूम होती हैं। अभी-अभी मेरी निर्भीकता की प्रशंसा कर रहे थे—अच्छी बात है। आपने सुना है कि शिवनाथ मुझे छोड़कर चले गए हैं।"

हरेन्द्र शर्म से सिर झुकाकर बोला, "हाँ।"

कमल ने कहा, "हम दोनों में मन-ही-मन एक शर्त थी कि सम्बन्ध-विच्छेद का दिन यदि कभी आवेगा तो दोनों पृथक् हो जाएँगे।—किसी कागज पर लिखा-पढ़ी करने की आवश्यकता नहीं।"

हरेन्द्र ने कहा, "पशु कहीं का!"

कमल ने कहा, "वह आपके मित्र अक्षय बाबू हैं। शिवनाथ गुणी आदमी हैं। उनके विरुद्ध मुझे अपनी ओर से कोई बड़ी शिकायत नहीं और शिकायत करने से लाभ ही क्या है? हृदय की अदालत में तो एकतरफा निर्णय ही होता है, उसकी कोई अपील नहीं।"

हरेन्द्र ने कहा, "इसके माने हुए कि प्रेम के सिवा और किसी बन्धन को आप नहीं मानतीं?"

"पहली बात तो यह है कि हमारे मामले में कोई और बन्धन था नहीं; और दूसरी, यदि होता भी तो उसे स्वीकार कराने से लाभ क्या था ? देह का जो भाग लकवे से व्यर्थ हो जाता है उसके लिए बाहर का बन्धन भारी बोझ हो उठता है।" कहकर क्षण-भर वह चुप रही और फिर कहने लगी, "आप सोचते होंगे कि सचमुच का ब्याह नहीं हुआ इसी से ऐसी बात मुँह से निकाल रही हूँ, हुआ होता तो न निकाल सकती; परन्तु यह बात नहीं है। हुआ होता तो भी निकाल सकती थी। पर तब इतनी सरलता से इस समस्या को हल न कर पाती। निरर्थक भाग भी शायद देह से जड़ा रह जाता और अधिकांश स्त्रियों के सम्बन्ध में जैसा होता है, मुझे भी उसी तरह आमरण उस दुःख का बोझ लिये यह जीवन बिताना पड़ता। मैं बच गई हरेन्द्र बाबू, भाग्य से छुटकारे का दरवाजा खुला था, अतः मुक्ति पा गई।"

हरेन्द्र ने कहा, "आपको शायद मुक्ति मिल गई हो; लेकिन इस प्रकार यदि मुक्ति-द्वार खुला रखना चाहें तो संसार में समाज-व्यवस्था की नींव तक उखड़ जाए।"

कमल ने कहा, "सोचा जा सकता है और एक दिन ऐसा आयेगा भी। इसका कारण यह है कि मनुष्य के इतिहास का शेष अध्ययन अभी पूरा नहीं लिखा गया। एक दिन के किसी एक अनुष्ठान के जोर से अगर उसके छुटकारे का रास्ता सारे जीवन के लिए रोक दिया जाए तो उसे अच्छी व्यवस्था नहीं माना जा सकता। संसार में सभी भूल-चूकों के सुधार की व्यवस्था है। कोई उसे बुरा नहीं बतलाता। फिर भी, जहाँ भ्रान्ति की सम्भावना सबसे ज्यादा है और उसके निराकरण की आवश्यकता भी उतनी ही अधिक है, वहीं लोगों ने अगर सारे उपायों को अपनी इच्छा से बन्द कर रखा हो तो उसे अच्छा कैसे मान लिया जाए, बताइए भला?"

इस स्त्री की कई प्रकार की दुर्दशा के कारण हरेन्द्र के मन में गहरी सहानुभूति थी—विरुद्ध आलोचना में वह जल्दी शामिल नहीं होता और कोई जब तरह-तरह की गवाहियों और प्रमाणों से उसे हीन सिद्ध करने की कोशिश करता तब वह विरोध भी करता। विरोधी लोग कमल के प्रकट आचरण और वैसी ही निर्लज्ज उक्तियों के दृष्टान्त दे-देकर धिक्कारते,

तब हरेन्द्र तर्क-युद्ध में परास्त होकर भी जी-जान से यह समझने का यत्न किया करता कि कमल के जीवन में कभी भी यह सत्य नहीं हो सकता। कहीं-न-कहीं कोई एक गहरा रहस्य है जो एक दिन अवश्य हीं प्रकट होगा।

इस पर वे व्यंग्य से कहते, "कृपा कर उसे प्रकट कर दीजिए तो प्रवासी बंगाली समाज में हम लोग बदनामी से बच जाएँ।"

अविनाश कहते हैं, "ये विचार कमल के मुँह से नये ही सुने हों; सो यह बात भी नहीं है अक्षय, मैंने तो वह पहले से ही सुन रक्खे हैं। आजकल की दो-चार अंग्रेजी की अनुवादित पुस्तकें पढ़ लेना ही इसके लिए काफी है। विचारों का इसमें कोई चमत्कार नहीं।"

अक्षय कठोर होकर पूछता, "क्या सुन रखा है? हरेन्द्र अविवाहित छोकरा है, उसे क्षमा किया जा सकता है, मगर आश्चर्य तो यह है कि बुढ़ापे में आकर आप लोगों की आँखें भी चौंधिया गईं, आशु बाबू! उस कीचड़ में ही किसी दिन बहुतों को खींच ले जाकर मारेगी वह, केवल अक्षय को वह भुलावा नहीं दे सकती—वही वास्तविकता पहचानता है।"

आशु बाबू मुस्कराकर रह जाते, पर अविनाश बाबू मारे क्रोध के लाल हो जाते।

हरेन्द्र कहता, "आप बड़े साहसी हैं अक्षय बाबू, आपकी जयजयकार हो। हम सब मिल के जब कीचड़ में डुबकियाँ लेने लगें तब आप किनारे पर खड़े-खड़े बाजा बजाइएगा।"

अक्षय उत्तर देता, "मैं गृहस्थी आदमी हूँ, मैं सहज-सीधी बुद्धि से समाज को मानकर चलता हूँ। न तो मैं ब्याह की कोई नयी व्याख्या करना चाहता हूँ और न दुनिया-भर के व्यर्थ के लड़कों को जमा कर ब्रह्मचारी-गिरी सिखाता हूँ। कुछ प्रयत्न करो तो आश्रम विश्वामित्र ऋषि का तपोवन हो उठेगा और शायद हमेशा के लिए तुम्हारी एक कीर्ति रह जायेगी।"

अविनाश क्रोध भूलकर जोर से हँस पड़ते और निर्मल मुस्कान से आशु बाबू का चेहरा चमक उठता।

हरेन्द्र के आश्रम पर किसी का भी विश्वास नहीं था, उसे सबने एक व्यक्तिगत ढोंग भर समझ रक्खा था।

हरेन्द्र मारे क्रोध के लाल होकर कहता, "पशु के साथ तो युक्ति-तर्क

चल नहीं सकता, उसके लिए दूसरी विधि है। मगर उसकी व्यवस्था करते नहीं बनती, इसलिए हर किसी को सींग मारते फिरते हो। छोटे-बड़े, नीच-ऊँच, स्त्री-पुरुष किसी का भी विचार नहीं करते।" और यह कहते हुए अन्य दो-चार जनों को लक्ष्य करके कहता, "पर आप लोग प्रश्रय क्योंकर देते हैं? इतना बड़ा एक कुत्सित संकेत भी मानो कोई हँसी का विषय हो!"

अविनाश हताश होकर कहते हैं, "ना-ना, प्रश्रय क्यों देने लगे, पर तुम जानते ही हो, अक्षय को बोलते समय उपयुक्त काल और क्षेत्र का ज्ञान नहीं रहता।"

हरेन्द्र कहता, "यह काल-ज्ञान सच पूछा जाए तो उसकी अपेक्षा आप लोगों को और भी कम है। मनुष्य के मन का चेहरा तो दिखाई देता नहीं दादा, नहीं तो हँसी-मजाक कम ही लोगों के मुँह से शोभा देता है। विवाह के बहाने शिवनाथ ने कमल को ठग लिया, मगर मेरा दृढ़ विश्वास है कि उस धोखे को भी कमल ने सत्य के समान ही मान लिया था। गृहस्थी की लेन-देन के लाभ-हानि का बखेड़ा करके उसके न चाहने पर भी आप लोग क्यों छोड़ने लगे? शिवनाथ उनके प्रेम की निधि हो सकता है, पर आप लोगों की घृणा का मूल कारण—मूल पूंजी? उसी को सजा-सजाकर आप लोगों से जितना चलाया जाय, चलाइये, पर मैं विदा लेता हूँ।" इतना कहकर हरेन्द्र उस दिन क्रोधित होकर चला गया।

उसके मन में इस बात का दृढ़ विश्वास था, किसी दिन कमल के मुँह से यह बात कही जाएगी कि शैव-विवाह को वास्तविक विवाह मानकर ही धोखे से छली गई थी। अपनी इच्छा से, सब-कुछ जानते हुए एक गणिका के समान उसने शिवनाथ का आश्रय नहीं लिया था, परन्तु आज उसके विश्वास की यह भीत भी मिट्टी में मिल गई। हरेन्द्र कोई अक्षय या अविनाश नहीं था। बिना किसी भेद-भाव के नर-नारी सबके मन में एक प्रकार की विस्तृत और गहरी उदारता थी। इसीलिए देश और दूसरे कल्याण के लिए सब प्रकार के अनुष्ठानों में उसने बचपन से अपने को लगा रखा था। उसका ब्रह्मचर्य-आश्रम, उसका उदार दान, सबके साथ अपना सब-कुछ बाँट लेना—इन सबकी जड़ में उसकी बड़ी उदार भावना काम कर रही है और उसकी इस प्रवृत्ति ने ही उसे आरम्भ से कमल के प्रति श्रद्धान्वित

कर रखा था; परन्तु इसकी उसने कल्पना तक भी नहीं की थी कि आज वह उसी के मुँह पर उसी के प्रश्न के उत्तर में ऐसा भयानक उत्तर देगी। भारत के धर्म, नीति, आचार, उसके स्वातन्त्र्य और सभ्यता के प्रति हरेन्द्र के मन में अपूर्व स्नेह और असीम भक्ति थी, फिर भी लम्बी पराधीनता और व्यक्ति-विशेष की दुर्बलतावश उत्पन्न होने वाले उसके व्यतिक्रम को भी वह अस्वीकार नहीं करता। कमल के द्वारा ऐसी उग्र अवज्ञा के साथ उसके मूलभूत सिद्धान्तों तक के अस्वीकार किये जाने के कारण उसके दुःख की सीमा नहीं रही और इस बात की याद करके कि कमल के पिता योरोपीय थे और माता कुटिला थी—उसकी नसों में व्यभिचार का खून संचारित हो रहा है। मारे घृणा के वह मन-ही-मन पीला पड़ गया।

कई क्षणों तक चुप रहकर धीरे से बोला, "तो अब जाता हूँ।"

कमल हरेन्द्र के मन के भाव को न पहचान सकी, केवल एक परिवर्तन पर उसका लक्ष्य गया। धीरे से उसने पूछा, "मगर जिस काम के लिए आए थे उसका तो कुछ किया नहीं?"

हरेन्द्र ने सिर उठाकर पूछा, "क्या काम?"

कमल ने कहा, "राजेन्द्र की सूचना जानने आए थे, पर बिना जाने ही चले जा रहे हैं। अच्छा, यहाँ उनके रहने के कारण क्या आप लोगों में बहुत निम्न आलोचना हुआ करती है? सच बतलाइएगा?"

हरेन्द्र ने कहा, "यदि कभी होती भी है तो मैं उसमें शामिल नहीं होता। मेरे लिए यही काफी है कि वह पुलिस के हाथ न पड़े। उसे मैं पहचानता हूँ।"

"लेकिन मुझे?"

"लेकिन आप तो ऐसी बातों का विचार करतीं नहीं, और आपका ऐसा विश्वास ही है।"

"बहुत कुछ ऐसा ही है, यानी ऐसी कोई कड़ी सौगन्ध मैंने नहीं ले रखी है कि इन बातों का विचार करूँगी ही। पर स्त्री का ही विचार करने से काम नहीं चलता हरेन्द्र बाबू, और एक आदमी का भी विचार करना आवश्यक है।"

"इसे मैं व्यर्थ समझता हूँ। बहुत दिनों के बहुत काम-काजों में जिसे

मैंने बिना संशय के पहचान लिया है, उसके सम्बन्ध में मुझे कोई सन्देह नहीं। उसका जहाँ मन करे वहाँ रहे, मैं निश्चिंत हूँ।"

कमल ने उसके चेहरे की तरफ क्षण-भर चुप रहकर देखा और कहा —"आदमी को बहुत परीक्षाएँ देनी पड़ती हैं, हरेन्द्र बाबू! उसका एक दिन पहले का प्रश्न सम्भव है कि दूसरे दिन के उत्तर से मेल न खाये। किसी के सम्बन्ध में भी अपने विचार को इस प्रकार शेष बनाकर नहीं रखना चाहिए, धोखा खाना पड़ता है।"

हरेन्द्र ने अनुमान किया कि कमल ने ये बातें केवल तत्त्व-दृष्टि से ही नहीं कहीं, इनमें कुछ एक संकेत भी हैं, परन्तु पूछताछ करके उस संकेत को स्पष्ट कराने की उसे हिम्मत नहीं पड़ी। राजेन्द्र के प्रसंग को बंद करके उसने सहसा दूसरा प्रसंग छेड़ दिया, बोला, "हम लोगों ने निश्चय किया है कि शिवनाथ को उचित दण्ड दिया जाए।"

कमल सचमुच ही आश्चर्य में पड़ गई। उसने पूछा, "हम लोगों ने अर्थात् किसने?"

हरेन्द्र ने कहा, "जो भी हो, उनमें मैं भी एक हूँ। आशु बाबू बीमार हैं। उन्होंने वचन दिया है कि अच्छे होने पर वे भी मेरी सहायता करेंगे।"

"हाँ, आज सात-आठ दिन हुए उनकी तबीयत ठीक नहीं है। मनोरमा पहले से ही चली गई है। आशु बाबू के चाचा काशीवास कर रहे हैं, वे ही आकर उसे ले गये हैं।"

कमल मौन हो रही।

हरेन्द्र कहने लगा, "शिवनाथ जानता है कि कानून की रस्सी उस तक पहुँच नहीं सकती। इसी बल पर उसने अपने मृतक मित्र की स्त्री को धोखा दिया। कानून को वह अच्छी तरह समझता है। केवल नहीं जानता तो यही कि दुनिया में कानून ही सब-कुछ नहीं है, उसके बाहर भी कुछ और विद्यमान है।"

कमल ने हँसते हुए आश्चर्य से पूछा, "लेकिन आप लोगों ने दण्ड उनके लिए क्या निश्चय किया है? उन्हें पकड़ लाकर फिर एक बार मेरे साथ जोड़ देंगे, यही न?"

हरेन्द्र से बगैर हँसे न रहा गया। बोला, "मगर यह भी तो नहीं हो

सकता कि वह उत्तरदायित्व को इस प्रकार छोड़कर अपने मन के अनुसार बिना किसी वाधा-विघ्न के वच निकले और इसका भी कोई अर्थ नहीं कि आपके साथ उसे जोड़ देना ही होगा।"

कमल ने कहा, "तो फिर उन्हें लाकर आप करेंगे क्या? मुझ पर पहरा देने के काम में लगाएँगे, या उनकी गरदन पकड़ेंगे और हानि वसूल कर मुझे दिलाएँगे? पहली बात तो यह कि रुपये मैं लूँ नहीं, दूसरी वह चीज उनके पास है भी नहीं। शिवनाथ कितने गरीब हैं, सो और कोई भले ही न जाने, मैं तो जानती हूँ।"

"तो क्या इतने वड़े अपराध का कोई दण्ड ही न होगा? और कुछ हो चाहे न हो, पर यह तो उन्हें जता देना आवश्यक है कि वाजार से आज भी चाबुक खरीदा जा सकता है।"

कमल व्याकुल होकर कहने लगी, "ना-ना, ऐसा न कीजिएगा। उससे मेरा इतना बड़ा अपमान होगा कि मैं उसे सह नहीं सकूँगी।" फिर उसने कहा, "इतने दिन मैं क्रोध में जल-भुन रही थी। इस प्रकार चोर की भाँति भागते फिरने की क्या आवश्यकता थी और साफ-साफ मुझसे कहकर जाते तो क्या मैं उन्हें रोक लेती? उसके बाद सहसा एक दिन मौत के मोहल्ले से बुलाहट आई। वहाँ न जाने कितनी मौत अपनी आँखों से देखकर आई। आज मेरी चिन्तन की धारा एक दूसरे ही मार्ग से वहने लगी है। अब मैं सोचती हूँ कि उनमें जो कहकर जाने का साहस नहीं था सो वही तो मेरा मान है। अव मुझे कोई शिकायत नहीं, मेरा सब-का-सब वसूल हो गया है। आशु वावू से नमस्कार जताकर कहिएगा कि मेरी भलाई करने की कामना से कहीं वे मेरी हानि न कर बैठें। संसार की सब चीजें सबके समझने की नहीं होतीं हरेन्द्र वावू, आप दुःखी न हों; पर मेरी वात अव न कीजिए। दुनिया में केवल शिवनाथ और कमल ही हों सो वात नहीं। वहाँ और लोग भी रहते हैं, और उनके सुख-दुःख हैं। अच्छा, अव कौन कैसे हैं सो समाचार भी तो बताइए।"

हरेन्द्र ने कहा, "पूछिये?"

"पहले बताइये कि अविनाश बावू का क्या समाचार है? सुना था वे बीमार हैं, अव अच्छे हो गये?"

"हाँ, पूरी तरह अच्छे न होने पर भी बहुत कुछ अच्छे हैं। उनके चचेरे भाई रहते हैं लाहौर। स्वास्थ्य ठीक करने के लिए वे लड़कों को साथ लेकर वहीं गए हैं। लौटने में शायद दो-एक महीने लग जाएँ।"

"और नीलिमा ? वे भी क्या साथ गई हैं ?"

"ना, वे तो यहीं हैं।"

कमल ने आश्चर्य के साथ पूछा, "यहीं हैं ? अकेली, उस मकान में ?"

हरेन्द्र ने पहले तो जरा इधर-उधर किया, फिर कहा, "भाभी की समस्या सचमुच जरा कठिन हो गई थी, पर भगवान् ने बचा लिया; आशु बाबू की सेवा के बहाने उन्हें यहीं छोड़ गए।"

यह संवाद इतना खराब था कि कमल आगे कुछ पूछ न सकी। हरेन्द्र के स्वर से गूढ़ क्रोध का चिह्न प्रकट हुआ, "परदेश में अपने घर पर जो चाहे किया जा सकता है, पर वयस्का विधवा साली को लेकर चचेरे भैया के घर जाकर नहीं रहा जा सकता। उन्होंने कहा, 'तुम भी तो मेरे अपने जन हो; तुम्हारे घर क्या—' मैंने उत्तर दिया कि पहले तो मैं तुम्हारा अपना आदमी हूँ, तो बहुत दूर के नाते से—पर उनका कोई भी नहीं। दूसरे, वह मेरा घर नहीं, आश्रम है, वहाँ रखने का नियम नहीं। तीसरे, इस समय लड़के सब बाहर चले गए हैं, मैं अकेला हूँ। चारों ओर बीमारी फैल रही है, उनके भाई के यहाँ से बार-बार चिट्ठी और तार आ रहे हैं—दादा बड़े संकट में पड़ गए।"

कमल ने पूछा, "पर सुना है कि नीलिमा का पीहर भी है।"

हरेन्द्र ने सिर हिलाकर कहा, "है, और सुनते हैं, एक समृद्ध ससुराल भी है; पर उन सबका जिक्र ही नहीं उठा। अचानक एक दिन इसका विचित्र समाधान हो गया। प्रस्ताव किस ओर से पेश हुआ मुझे नहीं मालूम, पर बीमार आशु बाबू का बोझ नीलिमा ने ले लिया।"

कमल चुप रही।

हरेन्द्र हँसता हुआ बोला, "मगर हाँ, आशा है कि भाभी की नौकरी नहीं जाएगी। उन लोगों के वापस आने पर फिर वे अपने पुराने गृहिणी-पद पर प्रतिष्ठित हो सकेंगी।"

कमल ने इस व्यंग्य का भी कोई उत्तर नहीं दिया।

हरेन्द्र कहने लगा, "मैं जानता हूँ, भाभी वास्तव में सच्चरित्र महिला हैं। अविनाश दा को वे उनके बुरे-से-बुरे दिनों में छोड़कर नहीं जा सकी थीं और उनके रह जाने के कारण ही उधर के उनके सब मार्ग बन्द हो गए हैं। मगर, उधर भी देखा कि विपत्ति के दिनों में उनके लिए मार्ग खुला नहीं है। इसी से सोचता हूँ कि बिना किसी अपराध के भी इस देश की स्त्रियाँ कितनी परवश हैं!"

कमल उसी प्रकार मौन बैठी रही।

"बातें सुनकर आप शायद मन-ही-मन हँस रही हैं, क्यों?"

"ना।"

हरेन्द्र बोला, "मैं प्रायः जाया करता हूँ आशु बाबू को देखने। वे दोनों ही आपके समाचार जानना चाहते थे। भाभी के आग्रह की तो कोई सीमा ही नहीं। एक दिन चलिएगा वहाँ।"

कमल बोली, "आज ही चलिए न हरेन्द्र बाबू।"

"आज ही चलेंगी, चलिए। यदि मिल जाए तो मैं एक ताँगा ले आऊँ।" वह बाहर ही जा रहा था कि कमल ने उसे वापस बुलाकर कहा, "ताँगे में हम दोनों के साथ जाने से आश्रम के हितैषी लोग अप्रसन्न होंगे। चलिए, पैदल ही चलें।"

हरेन्द्र ने पीछे को मुड़कर कहा, "इसका अर्थ?"

"कुछ नहीं—ऐसे ही। चलिये, चलें।"

अट्ठारह

तीसरे पहर हरेन्द्र और कमल दोनों आशु बाबू के घर पहुँच गए।

कई दिन से उन्हें ज्वर नहीं है, परन्तु निर्बलता अभी तक नहीं गई। इन दोनों को देखते ही वे उठकर बैठ गए और कितने प्रसन्न हुए, यह उनके चेहरे से स्पष्ट था। वह डरते थे कि कमल शायद अब न आयेगी। इसी से हाथ उठाकर बोले, "आओ, मेरे पास आकर बैठो।" और पास ही पड़ी कुर्सी पर बिठाकर बोले, "कैसी हो कमल?"

"अच्छी हूँ।" कमल ने हंसकर उत्तर दिया।

आशु बावू ने कहा, "भगवान् का आशीर्वाद है, नहीं तो इस कुसमय में कोई अच्छी तरह है, यह सोचा ही नहीं जा सकता। इतने दिन थीं कहाँ? हरेन्द्र ने हमेशा यही बतलाया कि घर में ताला पड़ा है। नीलिमा को संदेह था कि तुम कहीं बाहर चली गई हो।"

हरेन्द्र ने उत्तर दिया, "आप चमारों के मोहल्ले में सेवा-कार्य में लगी हुई थीं। आज भेंट हो गई अत: पकड़ लाया हूँ।"

आशु बावू घबराकर बोले, "चमारों के मोहल्ले में? पर अखबार में तो खबर है कि मोहल्ला बिलकुल उजाड़ हो गया है। इतने दिन से वहीं थीं कमल?"

कमल ने कहा, "अकेले नहीं, साथ में राजेन्द्र भी थे।"

आशु बावू ने कहा, "बहुत विचित्र है यह लड़का। मैंने दो-तीन बार देखा है। उसके बारे में कुछ नहीं जानता, पर ऐसा लगता है कि वह किसी विचित्र धातु का बना है। उसे साथ क्यों नहीं लाईं?"

"मोहल्ला अभी पूरा-का-पूरा समाप्त नहीं हुआ। उनका प्रण है जो लोग अभी बचे हुए हैं उन सबको रवाना करके ही वह आएँगे।"

आशु बावू ने पूछा, "फिर तुम्हें कैसे छुट्टी मिल गई? क्या तुम्हें वहाँ फिर जाना है? मना मैं नहीं करता, पर है चिन्ता का विषय।"

कमल ने कहा, "चिन्ता क्या है आशु बावू और चिन्ता कहाँ नहीं है? पर मेरी सामर्थ्य समाप्त हो चुकी। तभी मैं आई हूँ। फिर वहाँ जाने की सामर्थ्य मुझमें नहीं। अब अकेले राजेन्द्र वहाँ हैं। शुरू में ऐसा लगा कि वे जिन्दा कैसे रहेंगे? और कितने दिन? अकेले चली आई। किसी भी तरह मेरी चिन्ता नहीं मिटी। अब मुझे कोई डर नहीं है। मैं समझ गई हूँ कि प्रकृति ही स्वयं अपने मतलब से ऐसों को जिन्दा रखती है। नहीं, गरीब-दुखियों के झोंपड़ों में जब बाढ़ की तरह मृत्यु आ पहुँचती है तब उसकी ध्वंस-लीला की साक्षी कौन देगा? आज हरेन्द्र बाबू से यह सब किस्सा कह रही थी। शिवनाथ बाबू के घर आखिरी रात जब शर्म से सिर झुकाये चली आई—"

आशु बाबू पहले से सुन चुके थे। बोले, "इसमें तुम्हारे लिए शर्म की क्या बात है कमल ? सुना है, उनकी सेवा करने के लिए ही तुम बिना कहे अपने-आप उनके घर पहुँच गई थीं—"

कमल ने कहा, "लज्जा उस बात की नहीं आशु बाबू ! लज्जा तो मुझे तब हुई जब मैंने देखा कि उन्हें कोई बीमारी ही नहीं—सब ढोंग है—इस तरह आप लोगों की श्रद्धा पाना ही उनका उद्देश्य था। आखिर आपने अपने घर से उन्हें निकाल ही दिया।—तब मेरा क्या हाल हुआ सो मैं आपको नहीं बता सकती। जो साथ था उसे भी यह बात बता नहीं सकी—सिर्फ किसी तरह रात के अँधेरे में उस दिन चुपचाप वहाँ से निकल आई। रास्ते में बार-बार सिर्फ एक ही बात का खयाल आता रहा कि अति क्षुद्र कंगाल आदमी को गुस्से में आकर दण्ड देना न तो धर्म है और न सम्मान है।"

आशु बाबू ने आश्चर्य से कहा, "क्या शिवनाथ की बीमारी केवल बहाना थी ?"

तभी सबने देखा कि नीलिमा आ रही है। उसके हाथ में दूध का कटोरा है।

कमल ने नमस्कार किया। उसने कटोरा रखा। प्रत्येक को नमस्कार किया और स्वयं कुछ न बोलकर एक तरफ बैठ गई।

आशु बाबू ने कहा, "लेकिन यह तो कमजोरी है कमल ! मैं निरन्तर सोच रहा था कि जो कार्य ठीक नहीं है, उसे तुम क्षमा नहीं कर सकतीं।"

हरेन्द्र ने कहा, "मोची मोहल्ले की मौतें देखकर इनका विचार बदल गया है। पहले इनके मन में चाहे जो बात रही हो पर अब किसी के भी विरुद्ध इनके मन में कोई शिकायत नहीं।"

आशु बाबू ने कहा, "परन्तु उसने जो तुम पर इतना बड़ा अत्याचार किया, उसका क्या होगा ?"

कमल बोली, "यह प्रश्न मेरे लिए अब असंगत मालूम होता है। आँसू बहाने में मुझे लज्जा आती है। आप लोगों से केवल प्रार्थना है कि मेरे दुर्भाग्य की उनसे खींचातानी न करें।" इतना कहकर उसने आँखें बन्द कर लीं।

नीलिमा ने मौन भंग करते हुए धीरे से कहा, "यह तो ठण्डा हो गया

है। देखिए, पी पाएँगे या नहीं।"

आशु बाबू ने कटोरा मुँह से लगाकर जरा-सा पिया और फिर रख दिया। नीलिमा ने कहा, "रखने से काम नहीं चलेगा। डाक्टर की व्यवस्था में समाप्त नहीं होने दूंगी।"

आराम के लिए आशु बाबू को अकेला छोड़कर नीलिमा सबको साथ लेकर अन्दर चली गई।

नीलिमा की बातें ज्यादातर मधुर होती हैं। सेवा करने आई है। नीलिमा की इस अत्यन्त सावधानी की अपूर्व स्निग्धता से मानो कमल को सन्देह का सामना करना पड़ा। विस्मय सिर्फ एक तरफ से हुआ, ऐसे संदेह को कि सम्पत्ति के मोह ने इस विधवा को खुश कर लिया है, कमल अपनी कल्पना में भी स्थान न दे सकी। नीलिमा का इतना परिचय तो वह जान ही चुकी थी। आशु बाबू के यौवन और रूप का प्रश्न तो इस मामले में सिर्फ असंगत ही नहीं बल्कि हास्यप्रद भी है, तब फिर इसका पता कहाँ लगेगा, मन-ही-मन कमल उसकी खोज करने लगी। इसके साथ-साथ एक पहलू और भी है। वह आशु बाबू का अपना पहलू। लोगों का पक्का विश्वास था कि इस सरल और सीधे आदमी के हृदय के नीचे की गहराई में पत्नी-प्रेम का आदर्श ऐसी अटल निष्ठा के साथ नित्य पूजित होता जा रहा है। किसी दिन कोई भी प्रलोभन उस पर दाग नहीं लगा सकता। जिस दिन मनोरमा की माँ की मौत हुई थी—उसी दिन से, उस स्वर्गीय पत्नी की याद को उखाड़कर नवीन की प्रतिष्ठा के लिए घरवालों और इष्ट-मित्रों ने प्रयत्न करने में कुछ उठा नहीं रखा था, किन्तु फिर भी उस दुर्भेद्य दुर्ग का द्वार तोड़ने का कौशल किसी को भी ढूँढ़े नहीं मिला।

बातें करते-करते नीलिमा की नजर कमल पर पड़ी। देखा कि चाय के प्याले में मुँह लगाने के सिवा उसने और कुछ खाया नहीं है। मन्द स्वर में उसको उलाहना देते ही कमल ने हंसते हुए उत्तर दिया, "इतने में ही भूल गईं क्या?"

"भूल गईं? क्या मतलब?"

"इसका मतलब यही कि मेरे खाने-पीने की बात आपको याद नहीं। मैं तो बेवक्त कुछ खाती-पीती ही नहीं।"

"और हजार अनुरोध करने पर भी उसमें अन्तर नहीं पड़ता।" हरेन्द्र ने पीछे से जोड़ दिया।

कमल ने वैसे ही हँसते हुए कहा, "यह दर्प तो मैं नहीं करती हरेन्द्र वाबू कि इस हठ में कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। पर हाँ, यह मानती हूँ, आम तौर पर इस नियम की आदत पड़ गई है।"

रास्ते में निकलकर कमल ने हरेन्द्र से पूछा, "अब आप जा किधर रहे हैं, वताइये न?"

हरेन्द्र ने कहा, "डरिये मत, आपके घर नहीं जाऊँगा, पर जहाँ से आपको लाया हूँ वहाँ न पहुँचा दूँ तो ठीक नहीं होगा।"

काफी रात बीत चुकी थी। रास्ते में लोगों का आना-जाना नहीं के वरावर था। चलते-चलते अचानक अत्यन्त घनिष्ठ की तरह कमल ने हरेन्द्र का एक हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा, "चलिए मेरे साथ। उचित-अनुचित का ध्यान आपका कितना सूक्ष्म हो गया है, परीक्षा दीजियेगा।"

हरेन्द्र मारे संकोच के घवरा उठा।

साफ-साफ देखने लगा कि यह अच्छा नहीं हुआ। इस तरह रास्ते में चलना खतरे से खाली नहीं। अगर कोई परिचित सामने पड़ जाय तो शर्म का ठिकाना न रहेगा; परन्तु वगैर कहे हाथ छुड़ा लेने की अशोभन कठोरता भी कठिन थी। जव उसने विदा माँगी तो कमल ने कहा, "इतनी जल्दी काहे की है? आश्रम में अजित वावू के सिवा तो और कोई है नहीं?"

हरेन्द्र ने कहा, "ना, आज वे भी नहीं हैं, सवेरे की गाड़ी से देहली गए हैं, शायद कल लौट आयेंगे।"

कमल ने पूछा, "जाकर खाएँगे क्या? आश्रम में रसोइया रखने की तो व्यवस्था है नहीं?"

हरेन्द्र ने कहा, "ना, हम लोग अपने हाथ से वनाते हैं।"

"यानी कि आप और अजित वावू?" कहकर कमल हँस पड़ी।

"हाँ। पर आप हँसती क्यों हैं? हम लोग अच्छा खाना वनाते हैं।"

"मेरे हाथ का खाने में अगर आपको बुरा न लगे तो निमन्त्रण स्वीकार कीजिए।"

हरेन्द्र ने अत्यन्त क्षुब्ध होकर कहा, "आप क्या सचमुच ही यह समझती

हैं कि मैं ना कर दूँगा? आपत्ति केवल इतनी ही है कि असमय मैं आपको कष्ट नहीं देना चाहता।"

कमल ने कहा, "यह आप अपने-आप ही देख लीजिए, मुझे कोई कष्ट नहीं होगा।"

कमल ने रसोई बनाते हुए कहा, "मेरी तैयारियाँ बहुत कम हैं, लेकिन यदि खाने-पीने में कोई कष्ट भी हो तो औरों की तरह असह्य न होगा।"

हरेन्द्र ने प्रसन्न होकर उत्तर दिया, "हमारे यहाँ खाने-पीने की व्यवस्था वही है जो आप देख आई हैं। हम लोग बहुत कष्टों के साथ रहते हैं।"

"क्यों रहते हैं? अजित बाबू बड़े आदमी हैं, आपकी अपनी व्यवस्था ऐसी बुरी नहीं—फिर कष्ट का तो कोई कारण नहीं।"

हरेन्द्र ने कहा, "कारण न सही, जरूरत तो है। आपकी व्यवस्था हमारे जैसी ही है, लेकिन अगर कोई बाहर वाला आपसे इसका कारण पूछे तो उसे क्या आप इसका कारण बता सकते हैं?"

कमल ने कहा, "बाहर वालों को भले ही न बता सकूँ, भीतर वाले को बता ही सकती हूँ। बात यह है कि मैं सचमुच ही बहुत गरीब हूँ, अपने भरण-पोषण के लिए कमाने की जितनी मुझमें हिम्मत है, उसमें इससे ज्यादा नहीं किया जा सकता। पिताजी ने मुझे कुछ नहीं दिया, पर वे मुझे दूसरों के अनुग्रह से बचने का यह बीज-मन्त्र दे गये हैं।"

हरेन्द्र उसकी तरफ चुपचाप देखता रहा। इस परदेश में कमल कैसी निरुपाय है। सिर्फ रुपये-पैसे लेकर ही नहीं, समाज, सम्मान, सहानुभूति—किसी भी ओर ताकने के लिए उसके पास कुछ नहीं है। मगर इस सत्य को भी वह बिना याद किये न रह सका कि इतनी जबरदस्त निःसहायता भी इस नारी को जरा भी दुर्बल नहीं कर सकी है। आज भी वह किसी से भी भीख नहीं माँगती। जो शिवनाथ इसकी इतनी बड़ी दुर्गति का मुख्य कारण है, उसे भी दान करने लायक धन अब तक उसका खतम नहीं हुआ।

हरेन्द्र ने शायद साहस और सांत्वना देने के अभिप्राय से ही उससे कहा, "आपके साथ मैं विवाद नहीं करना चाहता कमल, किन्तु इसके सिवा मैं और कुछ सोच भी नहीं सकता कि हमारी तरह आपकी गरीबी भी

वास्तविक नहीं है। एक बार भी आप चाहें तो आपका दुःख समाप्त हो सकता है; पर ऐसी इच्छा आपमें नहीं है। आप भी समझती हैं कि अपनी इच्छा से ग्रहण किये हुए दुःख को ऐश्वर्य के समान भोगा जा सकता है।''

कमल ने कहा, ''हाँ, भोगा जा सकता है। किन्तु क्यों, आप जानते हैं, क्योंकि वह जरूरी दुःख का सिर्फ एक नाटक है। सभी नाटकों में थोड़ा-बहुत कौतुक रहता है।'' वह स्वयं कौतुक से हँस पड़ी।

हरेन्द्र क्षण-भर चुप रहा। फिर बोला, ''किन्तु यह तो आप मानती हैं कि बहुतायत से जीवन व्यर्थ होने लगता है और दुःख-दैन्य से गुजरकर मनुष्य का चरित्र महान् और सच्चा हो जाता है।''

कमल ने कहा, ''सत्य बनने के लिए उधर भी तो थोड़ा-बहुत सत्य रहना चाहिए हरेन्द्र बाबू ! आप लोग बड़े आदमी हैं, असल में आपको कोई कमी नहीं। फिर उसमें अजित बाबू भी जा मिले हैं। आपके आश्रम की फिलॉसफी को मैं इतना समझती हूँ कि गरीब के दुःख भोगने की विडंबना से कभी महत्त्व को नहीं पाया जा सकता तो थोड़े से दंभ और अहम्मन्यता के संस्कारों से अंधे न होकर जरा आँख खोल के आप देखें तो यह चीज साफ दिखाई दे जाएगी। इसके दृष्टान्त के लिए भारत-भ्रमण की जरूरत न होगी; पर तर्क अभी छोड़िए, रसोई तैयार है, आप खाने बैठिए।''

हरेन्द्र ने आशा छोड़कर कहा, ''कठिनाई यह है कि भारतवर्ष की फिलॉसफी समझना आपके बूते से बाहर की बात है। आपकी शिराओं में म्लेच्छ-रक्त बह रहा है। हिन्दुओं का आदर्श आपकी दृष्टि में खेल ही मालूम देगा। दीजिए क्या बनाया है, खाने को दीजिए।''

''देती हूँ।'' कहकर कमल ने आसन बिछा दिया।

हरेन्द्र फिर बोला, ''अच्छा मान लीजिए कि कोई अगर वास्तव में अपना सर्वस्व दान कर सचमुच के अभाव और दैन्य में जो अपने को घसीटे लाये तब तो अभिनय कहकर उसका मजाक नहीं किया जा सकेगा।''

कमल ने बीच में ही कहा, ''तब फिर मजाक नहीं—तब तो असल में पागल मानकर उसके लिए सिर पकड़कर रोने का समय आ जायेगा। हरेन्द्र बाबू, कुछ दिन पहले मैं भी आप ही जैसा सोचा करती थी, पर अब यह संदेह मेरा जाता रहा। गरीबी या अभाव की इच्छा या अनिच्छा जैसे

भी आवे, उसमें गर्व करने की कोई बात नहीं। उसके अन्दर है शून्यता, दुर्बलता और उसमें पाप है। अभाव मनुष्य को कितना हीन और कितना छोटा बना देता है, सो मैंने अपनी आँखों से इस महामारी में चमारों के मोहल्ले में जाकर देखा। और भी एक आदमी ने यह देखा है, वे हैं आपके मित्र राजेन्द्र। मैं आम तौर से सोचा करती हूँ कि आप लोगों ने उन्हीं को विदा कर दिया। कहावत है न कि मणि फेंककर काँच के टुकड़े को उठा लेना—"

हरेन्द्र चुप रहा।

आयोजन मामूली था, पर कमल ने कैसे यत्न से अतिथि को खिलाया, यह कहा नहीं जा सकता। हरेन्द्र खाने बैठा तो बार-बार नीलिमा भाभी की याद आने लगी। नारीत्व के शान्त माधुर्य की दृष्टि से वह नीलिमा को सबसे बढ़कर मानता था। मन-ही-मन वह बोला—'शिक्षा, संस्कार और रुचि-प्रवृत्ति में इन दोनों में चाहे कितना अन्तर न हो, पर सेवा और ममता में दोनों समान हैं।' आज हरेन्द्र को भूख न थी, केवल कमल को खुश करने के लिए उसने इतना खा लिया। बोला, "बहुत बार जाकर भाभी को मैंने इसी प्रकार सताया है कमल !"

"नीलिमा को ?"

"हाँ।"

"वह तंग हो जाती थीं ?"

"क्यों नहीं। पर मानती न थीं।"

"केवल आपकी ही नहीं, सभी पुरुषों की ऐसी मोटी अक्ल हुआ करती है।" कमल हँसकर बोली।

हरेन्द्र बोला, "मैंने देखा है।"

कमल ने कहा, "मैं जानती हूँ और इस देखने के गर्व में ही आप लोग मरे जा रहे हैं।"

हरेन्द्र ने कहा, "गर्व आप लोगों में भी थोड़ा नहीं। तब भाभी खाये बिना रह जातीं, सारी रात बिताकर भी हार नहीं मानतीं।"

कमल चुपचाप उसके मुँह की तरफ देखती रही।

हरेन्द्र कह रहा था, "आप लोगों के आशीर्वाद से मोटी अक्ल ही हम

लोगों की हमेशा बनी रहे—इसी में अधिक लाभ है। आप लोगों की थोड़ी बुद्धि के कारण से भूखा मरना हमें स्वीकार नहीं।"

कमल ने कोई उत्तर नहीं दिया। हरेन्द्र बोला, "अब से मैं आपकी सूक्ष्म बुद्धि की भी बीच-बीच में परीक्षा लिया करूँगा।"

कमल ने कहा, "वह आप नहीं ले सकेंगे, गरीब होने की वजह से आपको मुझ पर दया आ जायेगी।"

हरेन्द्र पहले लज्जित-सा हुआ। फिर बोला, "देखिये, इस बात का उत्तर देने में जबान रुकती है। क्यों, जानती हैं? राजरानी जिसे होना चाहिए उसे कंगलापन अच्छा नहीं लगता। मालूम होता है आपकी गरीबी दुनिया की सब अमीर स्त्रियों का मजाक उड़ा रही है।"

बात तीर की तरह कमल के दिल में लगी।

कमल ने कहा, "आप खाना खा चुके हों तो उठिए। उस कमरे में जाकर सारी गप्प सुनूंगी।"

कमल ने सोने के कमरे में आकर कहा, "आज आपकी भाभी का सारा इतिहास बिना सुने आपको नहीं छोड़ूँगी। सुनाइएगा?"

हरेन्द्र बोला, "भाभी के विषय में तो बहुत थोड़ा जानता हूँ। उनके साथ पहली जान-पहचान इसी आगरे में हुई थी। केवल एक बात उनके बारे में मैं जानता हूँ और वह उनका कलंकहीन सतीत्व। जब उनके पति मरे थे उनकी आयु उन्नीस-बीस साल थी। यह याद अब तक मिटी नहीं है और न कभी मिट ही सकती है—जीवन के अन्तिम दिन तक वह अक्षय बनी रहेगी। पुरुषों में जब आशु बाबू की बात उठती है—मैं मानता हूँ, उनकी निष्ठा भी असाधारण है—लेकिन—"

"हरेन्द्र बाबू, रात बहुत हो गई, अब तो आप घर नहीं जा सकते—इसी कमरे में आपके लिए बिस्तर बिछा दूँ न?"

हरेन्द्र ने पूछा, "इसी कमरे में? और आप?"

कमल ने कहा, "मैं भी यहीं सोऊँगी।"

हरेन्द्र पीला पड़ गया।

कमल ने हँसते हुए कहा, "आप ब्रह्मचारी जो हैं। आपको भी क्या कोई डर है?"

हरेन्द्र स्तब्ध रह गया। यह कैसा प्रस्ताव है, उससे कल्पना करते भी न बना। स्त्री होकर उसके मुँह से यह बात निकली कैसे ?

कमल ने कुछ पल चुप रहकर कहा, "मैं ही गलती पर थी, हरेन्द्र बाबू, अपने घर जाइये। इसी कारण शायद आपकी असीम श्रद्धा की पात्री नीलिमा को आश्रम में स्थान नहीं मिला। मिला तो आशु बाबू के घर में। सूने घर में अनात्मीय नर-नारी का केवल एक ही सम्बन्ध आपको मालूम है--पुरुष के निकट औरत सिर्फ औरत ही है, ब्रह्मचारी होने पर भी नहीं। जाइये, अब देर न कीजिये, आश्रम जाइये।" इतना कहकर वह खुद बाहर के अँधेरे बरामदे में जाकर अदृश्य हो गई।

हरेन्द्र मूढ़ की तरह दो-तीन मिनट चुपचाप खड़ा रहा। फिर धीरे-धीरे नीचे उतर गया।

□

आगरे की इंफ्लुएंजा की महामारी लगभग एक महीने में समाप्त हो गई। कमल घर में बैठी सिलाई का काम कर रही थी, इतने में हरेन्द्र आ गया। उसके हाथ में एक पोटली थी। उसे पास ही रखते हुए बोला, "आपके श्रम को देखकर तकाजा करने में शर्म लगती है। परन्तु आदमी भी ऐसे बेशर्म हैं कि भेंट होते ही पूछते हैं, बन गया? मैं साफ जवाब देता हूँ कि अभी बहुत देर है। बहुत आवश्यकता हो तो कहिये कपड़ा लौटा दूँ। किन्तु मजे की बात यह है कि आपके हाथ की सिली हुई चीज जिसने एक बार काम में ली, बस वह आपका पक्का ग्राहक। यह देखिए न, अजित बाबू के घर से उनका नौकर फिर रेशम का थान और नमूने के लिए कुरता दे गया।"

कमल ने मशीन पर से आँख उठाकर कहा, "मना कर देते?"

"मना? कह दिया है कि छः महीने से पहले नहीं तैयार होगा—उस पर भी राजी हो गया। यह देखिये न, सिलाई के रुपये तक अग्रिम हाथ पर रख गया है।" कहते हुए हरेन्द्र ने रुपये निकालकर कमल के सामने रख दिये।

कमल ने कहा, "इतना अधिक काम आता रहा तो, मैं देखती हूँ, मुझे एक आदमी रखना पड़ेगा।" फिर उसने पोटली खोलकर पुराना पंजाबी कुरता उठाकर देखा और कहा, "किसी बड़ी दुकान का सिला हुआ मालूम

होता है। बड़े कारीगर का काम है—मुझसे ऐसा तो सीते न बनेगा। कीमती कपड़ा है, खराब हो जायेगा, इसे वापस कर दीजियेगा।"

हरेन्द्र ने आश्चर्य दिखाते हुए कहा, "आपसे बढ़कर कारीगर और भी है क्या कोई ?"

"यहाँ पर न सही, कलकत्ते में तो हैं। वहीं भेज देने को कहिए।"

"ना-ना, यह तो नहीं होगा। आपसे जैसा बन पड़े वैसा बना दीजिए, उसी से काम चल जायेगा।"

"हरेन्द्र बाबू, बनता तो बना देती।" कहकर वह एकदम हँस पड़ी, "अजित बाबू बड़े आदमी हैं और शौकीन ठहरे। ऐसा-वैसा बना देने से उनसे पहना कैसे जाएगा। बेकार कपड़ा खराब करने से कोई लाभ नहीं; आप अपने साथ ले जाइये।"

हरेन्द्र ने आश्चर्य से कहा, "कैसे आपने समझा कि यह अजित बाबू का है ?"

कमल ने कहा, "मैं ज्योतिष जो जानती हूँ। रेशम का थान, पेशगी रुपया और फिर छः महीने बाद मिले तो भी कोई बात नहीं !--यहां के लोग ऐसे पागल नहीं होते हरेन्द्र बाबू ! उनसे कह दीजिये कि उनका कुरता बनाने लायक योग्यता मुझमें नहीं है। मैं तो गरीबों के कपड़े ही सीना जानती हूँ।"

हरेन्द्र संकट में पड़ गया। बोला, "उनकी इच्छा है कि आपके हाथ से सिला हुआ कुरता पहनें। इस संसार में उनसे बढ़कर आप पर शायद ही दूसरा श्रद्धा रखता हो।"

कमल ने कहा, "कुछ दिन पहले उनके मुँह से शायद ठीक इसके विपरीत बातें बहुतों ने सुनी होंगी !"

हरेन्द्र को सबकुछ याद था। वह लज्जित होकर बोला, "गलत नहीं है। मगर ऐसी धारणा एक दिन बहुतों की थी। शायद अकेले आशु बाबू की भले ही न हो, लेकिन उन्हें भी एक दिन विचलित होते देखा गया है। मुझको ही देखिये—पर उस दिन की कसौटी पर आज भी क्या मेरी भक्ति आँकी जायेगी ?"

कमल ने पूछा, "राजेन्द्र का पता लगा ?"

हरेन्द्र ने समझ लिया कि यह बुराई आज फिर स्थगित रही।

उसने कहा, "ना, अब तक तो नहीं लगा। आशा है कि लग जाएगा।"

कमल ने कहा, "मैंने तो आपसे केवल इतना ही जानना चाहा था कि वह पुलिस का मेहमान हुआ है या नहीं।"

हरेन्द्र ने कहा, "अभी तक पुलिस के हाथ से बचा हुआ है।"

कमल कुछ आश्वस्त हुई। पूछा, "वे कहाँ गए हैं और कब गए हैं, चमारों के मोहल्ले में जरा जा करके क्या उनका पता नहीं मालूम किया जा सकता ?—हरेन्द्र बाबू, उनके प्रति आपको स्नेह कितना है यह मैं जानती हूँ।"

उसने व्याकुल दृष्टि से हरेन्द्र की तरफ देखा और तभी वह सिलाई के काम में लग गई।

हरेन्द्र मौन रहा।

कमल ने फिर मशीन को एक तरफ खिसकाकर कहा, "चलो अब नहीं करती।" फिर आश्चर्य से बोली, "अरे! आप खड़े क्यों हैं? कुर्सी खींचकर बैठ क्यों नहीं गए आप ?"

"आपने बैठने को कहा कब ?"

"कहा नहीं तो बैठेंगे नहीं ?"

"ना, बगैर कहे बैठना ठीक नहीं।"

"किन्तु खड़े रहने के लिए भी मैंने नहीं कहा, फिर खड़े क्यों हैं आप ?"

"ऐसा है तो मैं अपनी गलती मानता हूँ।"

कमल हँस दी। बोली, "चलो मैं ही अपनी गलती मान लेती हूँ। आप बैठिये तो सही।"

कमल सहसा गम्भीर होकर बोली, "देखिये हरेन्द्र बाबू, यह जो मैं बैठने के लिए कहना भूल गई—जो अतिथि को आदर देना चाहिए था, नहीं दिया—घनिष्ठता के होते हुए भी इस गलती पर आपकी नजर पड़ ही गई।"

हरेन्द्र इसका अर्थ न समझ सका।

कमल ने कहा, "इससे संसार में न जाने कितना अर्थ हो रहा है और मजा यह है इसी को लोग सबसे अधिक भूलते हैं। क्यों, है न यही बात ?"

हरेन्द्र ने पूछा, "यह आप मुझसे कह रही हैं, या अपने आप से? अगर मुझसे तो जरा और खुलासा करके कहिए।"

कमल हँसकर बोली, "है तो असल में पहेली। सीधे रास्ते पर जाते-जाते ठोकर लगती है और उँगली से खून बहने लगता है, तब होश आता है, कि सम्भलकर चलना चाहिए था।"

हरेन्द्र ने कहा, "मगर पहेली ही रह गई, भीतरी तत्त्व को कुछ समझ नहीं आया।"

कमल ने कहा, "वता देने से ही सभी वातों का अर्थ समझ में नहीं आ जाता। मुझको देखिए न, मुझे तो किसी ने वताया भी नहीं, फिर भी बात का अर्थ जानने में मुझे कोई परेशानी नहीं।"

हरेन्द्र ने कहा, "इसका मतलब यह है कि आप भाग्यवती हैं और मैं अभागा। ये सब बातें क्या राजेन्द्र को याद करके कह रही हैं? उसे मैं भी तो जानता हूँ। सहज वनाकर के कहें तो शायद कुछ-कुछ समझ भी सकूँ। ऐसा न करने से मुझे अपनी बुद्धि पर अविश्वास हो जायेगा।"

कमल हँसकर बोली, "किसकी बुद्धि पर? मेरी पर या अपनी पर?"

"दोनों पर।"

कमल ने कहा, "राजेन्द्र को ही नहीं, आज मुझे आशु वाबू, मनोरमा, अक्षय, अविनाश, नीलिमा, शिवनाथ—यहाँ तक कि अपने पिताजी सभी की याद आ रही है।"

हरेन्द्र ने कहा, "माता-पिता स्वर्ग को गए, उनको इस मामले में खींचना उचित नहीं। जो जिन्दा हैं उनकी बात कीजिए। आप राजेन्द्र की बात कहिए। वह मेरा दोस्त है। उसे मैं जानता हूँ, पहचानता हूँ, प्यार भी करता हूँ, विश्वास कीजिए। मैं चाहे आश्रम चलाऊँ या और कुछ करूँ, धोखा नहीं देता, संसार में और लोगों की तरह मुझे भी प्रेम कहानी सुनना पसन्द है।"

कमल ने हँसकर उससे पूछा, "केवल दूसरों की सुनना ही पसन्द करते हो? उससे आगे कुछ नहीं चाहते?"

हरेन्द्र ने कहा, "ना। मैं ब्रह्मचारियों का पंडा हूँ, अक्षय का समूह सुन लेगा तो मुझे खा जायेगा।"

कमल हँसकर बोली, "ना, इसका मैं उपाय कर दूँगी।"

हरेन्द्र बोला, "आप मुझे बचा सकेंगी। आश्रम तोड़ देने पर भी छुटकारा नहीं। इससे अच्छा यह है कि आप अपनी ही बात कहें। राजेन्द्र को आप अपने मन से किसी तरह भुला नहीं सकतीं—उसकी बात के सिवा और कोई बात सोच नहीं सकतीं तो फिर वहाँ से आरम्भ कीजिए। उस अभागे को आप इतना कैसे चाहने लगीं, यह सुनने की इच्छा है।"

कमल ने कहा, "ठीक यही प्रश्न मैं बार-बार अपने-आप से भी पूछती रहती हूँ।"

"कुछ पता नहीं लगा?"

"ना।"

"छोड़िये इस बात को। एक बार मैं बता चुका हूँ कि इससे भी अच्छे उम्मीदवार हैं। अन्तिम निर्णय करने के पहले उनके केसों पर भी ध्यान डाल दीजिये, मेरी प्रार्थना है।"

"केसों पर तो गवाह और प्रमाणों की जरूरत होती है। उन्हें कौन उपस्थित करेगा?"

"वे स्वयं करेंगे। गवाह और सबूत के लिए वे तैयार हैं, पुकार पर उपस्थित हो जाएँगे।"

कमल हँस दी और खड़ी होकर बोली; "आपका चाय लेने का समय हो गया हरेन्द्र बाबू, थोड़ी-सी चाय बनाकर ले आऊँ, आप बैठिए।"

हरेन्द्र ने कहा, "बैठा तो हूँ ही, लेकिन आप जानती हैं कि चाय पीने के लिए मेरा कोई समय नहीं, मिलने पर तो पी लेता हूँ, न मिले तो कोई बात नहीं।" जरा रुककर, "एक बात आपसे पूछूँ?"

"अवश्य।"

"बहुत समय से आप किसी के पास नहीं गईं—क्या आना-जाना बन्द कर दिया है?"

कमल आश्चर्य से बोली, "नहीं तो। मुझे इसका कुछ ध्यान ही नहीं।"

"चलिये, जरा आशु बाबू के मकान तक घूम आवें। वे सचमुच बड़े खुश होंगे। जब वे बीमार थे तब आप गई थीं, अब तो वे ठीक हो गए हैं। केवल डॉक्टर ने मना कर दिया है कि वे बाहर न निकलें, नहीं तो शायद

वे किसी दिन अपने-आप ही यहाँ आ जाते।"

कमल ने कहा, "इसमें कोई आश्चर्य नहीं। जाना तो मुझे ही चाहिए था, लेकिन काम की वजह से नहीं जा सकी।"

"तो आज ही चलिए न?"

"शाम तो होने दीजियेगा। जरा एक प्याला चाय बना लाऊँ।"

□

शाम को दोनों घर से निकले। रास्ते में हरेन्द्र ने कहा, "जरा जल्दी चलते तो अच्छा था।"

कमल ने कहा, "कहीं कोई जान-पहचान वाला देख लेता तो?"

"भले ही देख लेता। इन सब चीजों की अब मैं चिन्ता नहीं करता।"

"पर मैं तो करती हूँ।"

हरेन्द्र इसे मजाक समझकर बोला, "परन्तु जान-पहचान वाले जब यह सुनेंगे कि आप मेरे साथ अकेली निकलने में संकोच करने लगी हैं, तो वे क्या समझेंगे?"

"शायद सोचेंगे कि मैंने मजाक किया है।"

"परन्तु आपका जानने वाला क्या और कुछ समझ सकता है?"

कमल ने कुछ उत्तर न दिया।

हरेन्द्र ने फिर कहा, "आज आपको शायद सब-कुछ असह्य हो रहा है।"

कमल ने कहा, "जो समझ नहीं सकता उसे न समझाना ही अच्छा है। राजेन्द्र को चाहकर भी नहीं भूलती। इसका सबसे ज्यादा अहसास आपके आने पर होता है। उसके लिए आश्रम में स्थान नहीं हुआ—यद्यपि किसी पेड़ के नीचे पड़े रहने से भी उसका गुजारा हो जाता। केवल मैंने ही वहाँ रहने नहीं दिया और आदर के साथ बुला लाई। मेरे घर आया—कहीं से भी उसके मन को कोई बाधा नहीं आई। हवा और प्रकाश की तरह उसके आने पर भी सब दिशाएँ खुली रहीं; पुरुष का मानो एक नया रूप मिला, यह सोचने का मुझे समय ही नहीं मिला कि यह अच्छा है या बुरा—शायद सोचने में देर भी लगे।"

हरेन्द्र ने कहा, "यह बड़ी भारी तसल्ली है।"

"तसल्ली क्यों है?"

"मालूम नहीं।"

उसके वाद कोई भी कुछ नहीं वोला।

आशु बाबू के घर पहुँचकर नौकर को सामने देखकर बोले, "बाबू साहब का जी अच्छा है?"

उसने नमस्कार करके कहा, "जी हाँ, अच्छा है।"

"अपने कमरे में ही हैं क्या?"

"ना, सामने वाले कमरे में बैठे किसी के साथ बातें कर रहे हैं।"

कमल ने कहा, "कौन है?"

हरेन्द्र ने कहा, "भाभी, शायद कोई और है—"

परदा हटाकर देखा कि नीलिमा नहीं थी और आशु बाबू आरामकुर्सी के हत्थों पर पैर फैलाये चुरुट पी रहे थे और पास सोफे पर सीधी बैठी एक अपरिचित महिला बातें कर रही थी।

हरेन्द्र और कमल ने कमरे में कदम रखते ही सुना कि वह अनर्गल अंग्रेजी वोल रही है।

आशु वावू की कमल पर नजर पड़ी तो उनका चेहरा आनन्द से भर उठा। एक बार बैठने की कोशिश की, पर बैठा नहीं गया। चुरुट फेंककर वोले, "आओ कमल, आओ।" और अपरिचित को सम्बोधित करके बोले, "ये मेरी एक रिश्तेदार हैं। परसों आई हैं। इन्हें शायद कुछ दिन यहाँ रख सकूँ।" जरा ठहरकर बोले, "वेला, ये कमल हैं। मेरी लड़की के समान।"

दोनों ने दोनों के लिए हाथ उठाकर नमस्कार किया।

हरेन्द्र ने कहा, "और मैं?"

"ओ हो, तुम तो रह ही गए। ये हरेन्द्र बावू। प्रोफेसर अक्षय के घनिष्ठ मित्र।"

"यहाँ मेरे पास आओ कमल, तुम्हारे हाथ को हाथ में लेकर कुछ देर चुप बैठा रहूँ, इसके लिए कई दिनों से मेरा जी तड़फड़ा रहा है।"

कमल ने हँसकर अपने दोनों हाथ बढ़ाकर उनके मोटे भारी हाथ को अपनी गोद में रख लिया।

"खा-पीकर आई हो क्या?"

"ना।" कमल बोली।

"पूछने से लाभ ही क्या? यहाँ तुम्हें खिला तो कुछ सकता नहीं?" आशु वावू बोले।

कमल ने कुछ जवाब नहीं दिया।

वेला की ओर देखकर आशु वावू थोड़ा हँसकर बोले, "क्यों, मेरा कहा ठीक है न? अब तो जान गईं?"

महिला खामोश।

आशु बाबू फिर वोले, "इस लड़की को बाहर से देखकर जैसा आश्चर्य होता है, भीतर से देखकर वैसे ही आश्चर्य में रह जाना होता है; क्यों हरेन्द्र, ठीक है न?"

हरेन्द्र चुप था।

कमल ने हँसते हुए उत्तर दिया, "सच होने में सन्देह है; परन्तु मात्रा-ज्ञान आपका सृष्टि में स्थिर है।"

"आह, ऐसा है!" आशु वावू ने गम्भीर स्नेह के स्वर में कहा, "जानता हूँ कि इस घर में तुम्हें खिला-पिला कुछ भी न सकूँगा, पर यह तो बताओ, अपने यहाँ तुमने क्या-क्या खाया है?"

"जो रोज खाती हूँ।"

"सुनूँ तो सही? वेला सोचती होगी मैंने बढ़ाकर कहा है।"

"अर्थात् पीछे मेरे बारे में वहुत-कुछ कहा जा चुका है?" कमल हँसकर वोली।

"यह अस्वीकार नहीं करूँगा।" इतने में चाँदी की तश्तरी में एक छोटा कार्ड लिये हुए बैरा आ गया। वोले, "उन्हें इसी कमरे में ले आओ।"

आगंतुक था अजित।

एकसाथ इतने परिचित जनों की उपस्थिति की सम्भावना उसने नहीं की थी। अजित आ गया।

"बैठो अजित! ठीक तो हो?" आशु वावू वोले।

"जी हाँ, आपकी हालत अब कैसी है?" अजित ने पूछा।

"बीमारी तो ठीक ही मालूम होती है।"

इसके पश्चात् दो-तीन मिनट तक सब चुप रहे।

हरेन्द्र सवसे पहले बोला, "क्या सीधे घर से आ रहे हैं?"

अजित बोला, "ना, एकदम सीधा नहीं आ रहा हूँ, आपको खोजते हुए जरा घूम-फिरकर आ रहा हूँ।"

"मुझे खोजते हुए? क्या काम है?"

"काम मेरा नहीं, किसी और एक सज्जन का है। वे राजेन्द्र की खोज में दोपहर से चार बार आ चुके हैं। बैठने को कहा पर वे राजी न हुए। प्रतीक्षा करना उनको सहन नहीं।"

"थे कौन? देखने में कैसे थे? यह आपने क्यों नहीं कहा कि वह यहाँ नहीं है।" संदेह-भरे स्वर में हरेन्द्र बोला।

अजित ने कहा "यह समाचार तो उन्हें दे दिया; परन्तु शायद उन्होंने इस पर विश्वास नहीं किया।"

हरेन्द्र उद्विग्नता में खड़ा हो गया और कमल को घर पहुँचाने का भार आशु बाबू पर छोड़कर चल दिया।

उसके चले जाने पर आशु बाबू ने कहा, "इस लड़के राजेन्द्र को मैंने दो-तीन बार से अधिक नहीं देखा—बिना किसी झंझट में पड़े वह देखता ही नहीं, क्यों? उससे मैं काफी प्यार करने लगा हूँ, मालूम नहीं क्यों? मजा यह है कि हरेन्द्र के मुँह से सुना करता हूँ कि यह बिलकुल अव्यवस्थित है, पुलिस इसे सन्देह की दृष्टि से देखती है। देखो न अचानक कहाँ चला गया।"

"अचानक यदि मालूम पड़े कि वे संकट में हैं, तो आप क्या करें?"

आशु बाबू ने कहा, "क्या करूँ, उत्तर भी तभी दिया जा सकता है। बीमारी के दिनों में उसके बहुत-से किस्से हरेन्द्र के मुँह से सुने हैं। दूसरों के लिए अपने-आपको किस तरह विलीन कर दिया जा सकता है—यह उससे सीखें। भगवान् से प्रार्थना है कि उस पर कभी कोई संकट न आये।"

मन-ही-मन लगभग सभी ने इस प्रार्थना में साथ दिया।

कमल ने पूछा, "नीलिमा को आज देखा नहीं।"

आशु बाबू ने कहा, "दिन-रात काम-धंधे में ही लगी रहती है, किन्तु आज सुना है कि सिरदर्द की वजह से बिस्तर पर पड़ी है। तबीयत शायद कुछ ज्यादा खराब है।" फिर क्षण-भर चुप रहकर कहा, "अविनाश के साथ मेरा परिचय आगरे में हुआ। बीच-बीच में आता-जाता रहता हूँ।

कितनी-सी जान-पहचान है। फिर भी आज सोचता हूँ कि संसार में अपना-पराया कोई नहीं। कमल, यह कोई नहीं जानता कि संसार के इस महा-समुद्र के प्रवाह में पड़कर कौन कहाँ से बहता हुआ पास आ जाता है और कौन बहकर दूर चला जाता है, यह कोई नहीं जानता।"

वेला के सिवाय दोनों ही जान गए कि यह बात किसको लक्ष्य करके और किस दुःख से कही गई है।

"इस बीमारी से उठने के बाद से संसार की बहुत-सी चीजें मानो कुछ दूसरी तरह ही दिखाई पड़ती हैं। ऐसा लगता है कि वाद-विवाद व्यर्थ किया जाता है। मनुष्य अपने चारों तरफ बहुत-सी भूलों और बहुत-से धोखों को जमा करके व्यर्थ में अँधा बना रहता है। आनन्द तो नहीं, बल्कि निरा-नन्द ही मानो उसकी इस सभ्यता और भद्रता का अन्तिम लक्ष्य है।"

आशु बाबू अपने-आप ही रुके। शायद कमल की आश्चर्यजनक दृष्टि ने उन्हें सचेत किया, "तुम्हारे साथ मुझे बहुत-सी बातें करनी हैं कमल, किसी दिन फिर आना।"

"आऊँगी। आज जाती हूँ।"

"अच्छा। गाड़ी नीचे खड़ी है, तुम्हें वह पहुँचा देगा—अजित, तुम भी साथ चले जाओ, वापस आते समय तुम्हें उतार देगा।"

दोनों प्रणाम करके बाहर निकल गए।

वेला साथ-साथ गाड़ी तक आई, बोली, "आपके साथ बातचीत करने का आज टाइम नहीं रहा, किन्तु अबके जिस रोज आएँगी, मैं नहीं छोड़ूँगी।"

कमल ने हँसकर कहा, "यह मेरा सौभाग्य है; परन्तु डर यह है परि-चय पाकर कहीं आपका विचार न बदल जाय।"

मोटर में दोनों पास-पास बैठे।

चौराहे पर कमल ने कहा, "उस दिन की रात को भी ऐसा ही अँधेरा था—याद है?"

"हाँ, याद है।"

"और उस दिन का पागलपन?"

"सो भी याद है।"

"मैं राजी हो गई थी, सो याद है?"

अजित ने हँसकर कहा, "ना। किन्तु आपने जो व्यंग्य किया था सो याद है।"

कमल ने विस्मय प्रकट करके कहा, "व्यंग्य किया था? नहीं तो!"

"जरूर किया था।"

कमल ने कहा, "तो आपने उलटा समझा था। खैर, उसे छोड़िए, आज तो व्यंग्य नहीं कर रही हूँ?—चलिए न, आज ही दोनों जने चल दें।"

"धत्! आप बड़ी दुष्ट हैं।"

कमल ने हँसकर कहा, "दुष्ट कैसी? बताइये, मेरे जैसी शान्त-सीधी स्त्री कहाँ मिलेगी? अचानक आज्ञा दी, कमल, चलो चलें, और मैं उसी समय राजी होकर बोली, 'चलिए'।"

"लेकिन वह तो केवल मजाक था।"

कमल ने कहा, "अच्छा, मजाक ही सही; लेकिन बताइये, अचानक ऐसी क्या गलती हो गई जो 'तुम' छोड़कर 'आप' कहना चालू कर दिया है? कितनी मुश्किल से दिन काट रही हूँ भला?—आप ही लोगों के कपड़े सी-सीकर किसी तरह गुजारा कर रही हूँ—और आपके पास रुपयों का आधिक्य नहीं—पर एक दिन भी आपने मेरी सुध ली? मनोरमा ऐसे कष्ट में पड़ती तो क्या आपसे रहा जाता? देखिये, दिन-रात मेहनत-मजदूरी करके कितनी निर्बल हो गई हूँ।" इतना कहकर जैसे ही उसने अपना हाथ अजित के हाथ पर रखा, वैसे ही अजित चौंक पड़ा और उसका सारा शरीर सिहर उठा। उसके मुँह से कुछ निकलना ही चाहता था कि कमल एकदम चिल्ला उठी—"ड्राइवर, रोको, यहाँ पागलखाने के पास आ गए। गाड़ी घुमा लो। अँधेरे में कुछ ध्यान ही नहीं रहा।"

अजित ने कहा, "हाँ, गलती अँधेरे की ही है।"

अजित ने दरवाजा खोल दिया। कमल सड़क पर उतरकर बोली, "अंधकार का इससे भी बढ़कर एक और अपराध है अजित बाबू, उसमें अकेले जाने में डर लगता है।"

अजित नीचे उतरकर पास जा खड़ा हुआ।

कमल ने ड्राइवर से कहा, "अब तुम घर जाओ, इन्हें जाने में अभी

कुछ देर लगेगी।"

"यह कैसे ? इतनी रात में मुझे गाड़ी कहाँ मिलेगी ?"

"उसकी व्यवस्था मैं कर दूँगी।"

गाड़ी चली गई।

अजित बोला, "मुझे मालूम है, कोई भी इन्तजाम न होगा। मुझे इस अँधकार में तीन-चार मील पैदल चलकर ही जाना पड़ेगा और अभी मैं आपको पहुँचाकर आसानी से घर जा सकता था।"

"नहीं जा सकते थे। कारण, बगैर खिलाये-पिलाये मैं आपको उस आश्रम की अनिश्चितता में नहीं भेज सकती। चलिये, आइये।"

□

घर पर नौकरानी आज बत्ती जलाये इन्तजार देख रही थी। पुकारते ही उसने दरवाजा खोल दिया। रसोईघर में जाकर कमल ने उसी सुन्दर आसन को बिछाते हुए अजित से बैठने के लिए कहा। सामान सब तैयार था। स्टोव जलाकर कमल ने रसोई चढ़ा दी और पास में ही बैठकर बोली, "ऐसे ही और एक दिन की बात याद है ?"

"अच्छा, उस दिन से आज क्या अन्तर है, बता सकती हैं ?"

अजित इधर-उधर देखकर याद करने की कोशिश करने लगा।

कमल हँसकर बोली, "रात-भर ढूँढ़ के भी नहीं बता सकेंगे। किसी दूसरी ही ओर देखिये।"

"किधर, बताइये तो।"

"मेरी तरफ।"

"एक दिन भी मैंने आपकी शक्ल अच्छी तरह से नहीं देखी। सब देखते थे, पर मुझसे देखते न बनता था।" अजित बोला।

"औरों के साथ आपमें यही तो अन्तर है। वे जो देख सके उसका कारण यह था कि उनकी दृष्टि में मेरे प्रति आदर का भाव नहीं था।"

अजित चुप रहा।

कमल कहने लगी, "मैंने तय किया था कि जैसे भी होगा आपको ढूँढ़ निकालूँगी। मुझे आशा नहीं थी कि आशु बाबू के घर आज आपसे भेंट हो जाएगी, पर संयोग से जब भेंट हो गई तब सोच लिया कि पकड़ ही लाऊँगी।

भोजन कराना तो केवल एक छोटी-सी वात है, इसलिए भोजन के बाद भी छुट्टी नहीं मिलेगी। आज रात को मैं आपको इसी मकान में वन्द रखूंगी।"

"पर इससे आपको लाभ ?"

कमल ने कहा, "लाभ की बात पीछे वताऊँगी; पर आज मुझे 'आप' कहते हैं, इसका मुझे दुःख होता है। एक दिन 'तुम' कहके बोलते थे, आज उसे बदल देने लायक कोई भी गलती मैंने नहीं की है। रूठकर यदि उत्तर न दूं तो आपको दुःख होगा ?"

अजित ने कहा, "हाँ, अवश्य होगा।"

कमल ने कहा, "आप आगरे आये थे मनोरमा के लिए; पर वह जव इस तरह चली गयी तव सबने सोचा कि अब आप एक पल भी यहाँ पर नहीं रुकेंगे। केवल एक मैं ही जानती थी कि आप नहीं जा सकेंगे। अच्छा, इस वात पर कि मैं आपको प्यार करती हूँ, आप विश्वास करते हैं ?"

"ना-ना।"

"जरूर करते हैं। इसी से आपके विरुद्ध मेरी वहुत-सी शिकायतें हैं।" कमल वोली।

अजित ने कहा, "बहुत-सी ? एक-आध हमको सुनाओ भी तो।"

कमल ने कहा, "सुनाऊँगी, इसीलिए तो मैंने जाने नहीं दिया। गरीबों के कपड़े सीकर अपना पेट भरती हूँ, यह मुझे असह्य है। पर मैं संकट में पड़ी हूँ, इसीलिए यह कैसे सहा जा सकता है कि आपके भी कुरते सीकर मैं दाम लूँ।"

"पर दान तो लेतीं नहीं तुम।"

"हाँ, दान मैं नहीं लेती—यहाँ तक कि आपका भी नहीं; परन्तु दान के अलावा क्या संसार में देने का कोई रास्ता नहीं ? आपने जोर देकर क्यों नहीं कहा कि कमल, वह काम मैं तुम्हें नहीं करने दूँगा। मैं उसका क्या उत्तर देती। दुर्दैव से आज यदि मेरी मेहनत-मजदूरी करके खाने की शक्ति जाती रही तो फिर आपके जीते-जी क्या मैं घर-घर भीख माँगती फिरूँगी ?"

इस दर्द-भरी वात ने अजित को घवरा दिया, उसने कहा, "यह नहीं हो सकता कमल, मेरे जीते-जी यह संभव नहीं है। तुम्हारे वारे में मैंने एक दिन भी इस तरह नहीं सोचा। अव भी मानो मन में यह बात नहीं वैठती कि

जिस कमल को हम जानते हैं, वह तुम ही हो।"

कमल ने कहा, "और लोग जो चाहे जानते रहें; पर आप क्या उन्हीं में से एक हैं? उनसे ज्यादा कुछ नहीं?"

इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिला।

इसके बाद दोनों चुप रहे। शायद दोनों ने यह महसूस किया कि दूसरे से पूछने की अपेक्षा यह बात अपने से ही पूछने की ज्यादा जरूरत है।

अजित ने गंभीर होकर खाते-खाते कहा—"मजा यह है कि पास चाहे कितना ही रुपया क्यों न हो, तुम्हारी कमाई का अन्न हाथ फैलाकर खाये बिना किसी को छुटकारा नहीं। और तुम न किसी का लेती हो न खाती हो—कोई सिर पटककर मर जाय तो भी नहीं।"

"आप खाते ही क्यों हैं? इसके अतिरिक्त आपने सिर भी कब पटका है?" कमल बोली।

अजित ने क़हा, "सिर पटकने की इच्छा बहुत दफे हुई है और तुम्हारा खाता इसलिए हूँ कि जबरदस्ती में तुमसे जीत नहीं पाता। आज मैं कहूँ कि कमल, आज से मैंने तुम्हारा सारा बोझ अपने ऊपर लिया, तो संभव है कि तुम कोई ऐसी तेज बात कह बैठो कि मेरे मुँह से दूसरा कोई शब्द ही न निकले।"

कमल ने कहा, "यह बात क्या कभी कही आपने?"

"शायद कही थी।"

"और मैंने सुनी नहीं वह बात?"

"ना।"

"तो आपने सुनाने लायक तरीके से नहीं कही। मैंने मन-ही-मन सिर्फ इच्छा ही की होगी—मुँह से प्रकट नहीं हुई।"

"अच्छा मान लीजिये यदि आज कहूँ?"

"और मैं भी यदि कहूँ कि नहीं।"

अजित ने हाथ का कौर नीचे रखते हुए कहा—"यही तो कठिन है। तुम्हें हम समझ नहीं सके। अभी-अभी तुमने कहा था कि मेरा भार सह ला और अभी-अभी कह रही हो, नहीं!"

कमल हँस दी, बोली, "ऐसा नहीं, आप भी कह देखिये। कहिये, आज तो

खाना खा लिया है, फिर कभी न खायेंगे, देखूं कैसे आपकी बात रहती है।"

अजित ने कहा, "रहेगी कैसे ! बिना खिलाये तुम मानोगी नहीं।"

इस बार कमल नहीं हँसी। बोली—"आपके लिए मेरा बोझ उठाने का समय अभी नहीं आया। जिस दिन आयेगा उस दिन मेरे मुँह से भी 'ना' नहीं निकलेगा। रात ज्यादा होती जा रही है, आप खाना खा लीजिये।"

"खाता हूँ। पर वह दिन कब आयेगा ?"

कमल ने सिर हिलाते हुए कहा, "सो मैं नहीं बता सकती। जवाब आपको स्वयं एक दिन देना पड़ेगा।"

"एक दिन बहुत खोजा था, पर मिला नहीं। इसी आशा से कि जवाब तुम्हीं से मिलेगा, मैं हाथ पसारे बैठा रहूंगा" —अजित बोला।

इसके बाद वह चुपचाप खाने लगा।

थोड़ी देर बाद कमल ने पूछा, "इस घर के होते हुए भी आप एकदम हरेन्द्र के आश्रम क्यों पहुँचे ?"

अजित ने कहा, "कहीं-न-कहीं तो जाना ही था। तुम जानती हो, आगरा छोड़कर मैं कहीं जा नहीं सकता था।"

"यदि यही सच है, तो सीधे मेरे पास क्यों न चले आये ?"

"यदि आता तो सचमुच आश्रय मिलता ?"

"सचमुच यह तब बताती। खैर छोड़िये, हरेन्द्र के आश्रम में तो असुविधाओं का कोई छोर नहीं—मगर इतना कष्ट आप कैसे सह लेते हैं ?"

"पता नहीं, कैसे सह लेता हूँ; पर आज तक मुझे उन सब बातों का मन में ध्यान भी नहीं आया। अब तो मैं उन्हीं का आदी हो गया हूँ। हो सकता है कि यही मेरे भविष्य का जीवन हो। अब तक निष्क्रिय नहीं बैठा था। आदमी भेजकर जगह-जगह आश्रम ठीक करने की कोशिश करता रहा हूँ। तीन-चार जगह से आशा भी मिली है। जी चाहता है एक बार घूम आऊँ।"

"यह राय आपको किसने दी ? हरेन्द्र ने शायद ?"

अजित दे कहा, "अगर दी भी हो तो निष्पाप होकर ही दी है। देश का नाश जिन लोगों ने अपनी आँखों से देखा है—दारिद्रय्य का कठोर दुःख, धर्मंहीनता की गहरी पीड़ा दुर्बलता से उत्पन्न दयनीय भीरुता..."

कमल बीच में बोल उठी—"हरेन्द्र ने यह सब देखा है, मैं मना नहीं

करती; पर आपके निकट तो यह सब सुनी हुई बातें हैं। अपनी आँखों से तो आपको कभी कुछ देखने का अवसर मिला नहीं?"

"पर बातें तो ये सब सही हैं?"

"सही नहीं हैं, यह मैं नहीं कहती, पर उनके विरोध का उपाय क्या इन आश्रमों की इज्जत है?"

"नहीं क्यों? भारतवर्ष का मतलब केवल उत्तर में हिमालय और तीनों ओर समुद्र से घिरा हुआ थोड़ा-सा भूखंड ही तो नहीं? यहाँ की पुरानी सभ्यता, धार्मिक विशिष्टता, नैतिक पवित्रता, न्याय-निष्ठा की महिमा—यही तो भारत है। इसी से इसका नाम है, देवभूमि। इसे इस दशा से बचाने के लिए तपस्या के सिवा और क्या रास्ता है? ब्रह्मचर्य व्रतधारी निष्कलंक बच्चों के लिए जीवन में सार्थक होने के…"

कमल ने उसे रोक दिया। बोल उठी, "आप खाना खा चुके हों तो हाथ-मुँह धोकर उस कमरे में चलिये।"

"तुम नहीं खाओगी?"

"मैं क्या दोनों समय खाती हूँ जो खाऊँगी? चलिये।"

"पर मुझे तो आश्रम वापस लौटना है।"

"ना-ना, उस कमरे में चलिये। बहुत-सी बातें आपसे मुझे करनी हैं।"

"अच्छा चलो; लेकिन बाहर रहने का हमारा नियम नहीं है—कितनी ही रात क्यों न हो, आश्रम में वापस लौटना ही पड़ेगा।"

कमल ने कहा, "वह नियम दीक्षित आश्रमवासियों के लिए है, आपके लिए नहीं।"

"मगर लोग क्या कहेंगे?"

इस बात से कमल का साहस छूट गया।

उसने कहा, "लोग केवल आपकी बुराई ही करेंगे, क्षमा नहीं कर सकते। जो रक्षा कर सकेगी उसके निकट आपको कोई डर नहीं। आपके उन लोगों से मैं कहीं ज्यादा आपकी अपनी हूँ। उस दिन अपने साथ चलने को कहा। चलिये उस कमरे में, मुझसे कोई भय नहीं। मैं उनकी जाति की हूँ जो पुरुषों के भाग की ही वस्तु है—उठिये।"

उस कमरे में कमल ने अजित के लिए नये पलंग पर बिस्तर बिछा दिया

और अपने लिए जमीन पर मामूली-सा बिछौना डाल लिया। फिर उठकर बाहर जाते हुए उसने कहा, "मैं अभी आती हूँ। दस मिनट लगेंगे, मगर आप सो मत जाइयेगा।"

"ना।"

"वर्ना मैं झकझोरकर जगा लूँगी।"

"उसकी जरूरत न होगी कमल, नींद मेरी आँखों से चली गयी है।"

"अच्छा, आपकी परीक्षा हो जायेगी"—कहकर वह कमरे से बाहर चली गयी। रसोई के बर्तन यथास्थान जमाकर रखे। जूठे बर्तन बरांडे में रखे। नौकरानी बहुत देर की चली गई थी, इससे नीचे के किवाड़ बन्द करना—घर-गृहस्थी के ऐसे ही सब छोटे-बड़े काम जो बाकी थे, उन्हें पूरा किया, तब कहीं उसकी छुट्टी हुई।

सूने कमरे में कमल के हाथ से बिछाये सुन्दर पलंग पर बैठकर अजित ने एक तेज साँस ली। शैया पर बैठकर मालूम होता था मानो एक खामोश आनन्द, मधुर स्पर्श धीरे से उसके सारे शरीर में फैल गया है।

अजित धनी घर की सन्तान है। जन्म से विलासी जीवन में वह इतना बड़ा हुआ है; परन्तु हरेन्द्र के ब्रह्मचर्य-आश्रम में भरती होने के बाद से गरीबी और आत्म-निग्रह के कठिन मार्ग से चल रहा है। एकदम उसकी नजर तकिये पर पड़ी। गिलाफ के चारों तरफ पीले फूल कढ़े हुए हैं। बिछौने की चादर के कोनों पर सफेद रेशम से कढ़ी हुई बेल थी। जरा-सी कारीगरी थी—मामूली-सी बात, जो न जाने और कितने आदमियों के घर होगी। देखकर अजित खुश हो गया। बाहर का काम खत्म करके कमरे में जब कमल आयी, तो अजित कह उठा, "वाह, कितना सुन्दर है!"

कमल आश्चर्य से बोली, "क्या सुन्दर है, यह बेल?"

"हाँ, और यह पीले रंग के फूल भी तुम्हीं ने सजाये हैं न?"

कमल ने हँसकर कहा, "खूब पूछा। स्वयं नहीं काढ़ती तो इनके लिए क्या बाजार से कारीगर बुलाती? आपको चाहिए ऐसा?"

"ना-ना, मैं क्या करूँगा?"

कमल हँस पड़ी, बोली, "आश्रम में जाकर इस पर सोइयेगा और कोई पूछे तो कहियेगा कि कमल ने रात-भर जागकर इसे बनाया था।"

"हश !"

"हश ! ये सब चीजें अपने लिए नहीं बनतीं। किसी अपने के लिए बनायी जाती हैं। कष्ट सहकर ये फूल अपने सोने के लिए नहीं काढ़े। एक-न-एक दिन कोई आता ही। सवेरे जब आप जाने लगेंगे तब ये आपके साथ रख दूँगी।"

इस बार अजित हँसकर बोला, "अच्छा कमल, तुमने क्या मेरे को एकदम पागल समझ रखा है ?"

"क्यों ?" कमल बोली।

"क्या इस बात पर भी मैं विश्वास कर लूँ कि तुमने मुझको ही याद करके ये चीजें तैयार की थीं ?" अजित बोला।

"क्यों नहीं करेंगे ?" कमल ने पूछा।

"इसलिए कि बात सच नहीं है।" अजित ने कहा।

"पर यदि कहूँ कि सच कह रही हूँ तो विश्वास करेंगे ?"

"जरूर करूँगा; परन्तु तुम्हारे मजाक की भी कोई हद नहीं—तुम्हें कहीं हिचक नहीं होती। उस दिन की मोटर पर घूमने की बात याद आते ही लज्जा की सीमा नहीं रहती। वह बात दूसरी है, पर मजाक के अलावा और किसी समय तुम झूठ नहीं बोलतीं, यह मेरा विश्वास है।"

"यदि मैं कहूँ कि मजाक में नहीं, सत्य कहा है वह ?"

"तब जरूर विश्वास करूँगा।"

कमल ने कहा, "यदि करें तो आज मैं आपसे सच कहूँगी। जब तक राजेन्द्र आश्रम से निकल मेरे यहाँ नहीं आया था, आप लोगों ने मिलकर मुझे घृणा से दूर कर दिया—उस गंभीर कष्ट के दिनों का ही यह काम है। शायद मुझे कभी मालूम भी न होता कि उस दिन ठीक किसकी याद करके ये फूल काढ़े थे।—वही चादर आज मैंने इस पलंग पर बिछा दी। इसे बिछाकर पहली बार मेरे जी में विचार आया कि उस दिन जिसकी याद करके रात-भर जागकर यह फूल-पत्ती, बेलें काढ़ी थीं, वह आप ही थे।"

अजित मौन था। केवल एक रंगीन आभा उसके चेहरे पर दिखायी दी और उसी क्षण समाप्त हो गयी।

कमल अपने-आप भी कुछ देर चुप रही। फिर बोली, "चुप रहकर क्या

सोच रहे थे, बताइये ?"

अजित ने कहा, "कुछ सोच नहीं रहा हूँ।"

"इसका कारण ?"

"कारण, तुम्हारी बातें सुनकर मेरे दिल में आँधी-सी चल रही है। आनन्द और आशा से रिक्त।"

धीरे-धीरे अजित फिर कहने लगा, "कमल, एक कहानी सुनो। मेरी माँ को एक बार भगवान् ने पूजा वाले कमरे में दर्शन दिये और माँ के हाथ से भोग लेकर सामने बैठकर खाया। उनकी इस आँखों-देखी बात पर कोई विश्वास नहीं कर सका। सबने सोचा कि सपना होगा, मगर हमारे इस अविश्वास का कष्ट उन्हें मरते समय तक रहा। आज तुम्हारी बात सुनकर मुझे वही बात याद आ रही है। मनुष्य के जीवन में ऐसा बहुत समय चला जाता है जब वह अपने बारे में अँधेरे ही में रहता है। मैं अब तक संसार में और भी बहुत जगह घूमता रहा हूँ, लेकिन इस आगरे में आकर ही मैंने अपने को पहचाना है। मेरे पास रुपया है और वह भी पिता की कमाई का। कोई भी चीज मेरी अपनी नहीं, जिसके लिए तुम प्रेम कर सकतीं।"

कमल ने कहा, "रुपयों की कोई चिन्ता न कीजिये। आश्रमवासियों को जब उसका पता चल गया है तो उसकी व्यवस्था वे स्वयं कर लेंगे।" कहते-कहते वह हँसी और फिर बोली, "इसके अतिरिक्त आपके स्वभाव की भलाई-बुराई समझने का टाइम भी मुझे नहीं मिला। अभी-अभी दसेक मिनट हुए अकेली सामने खड़ी थी कि एकदम कोई ठीक से मेरे कान में आकर सुना गया।"

अजित ने विस्मय से पूछा, "सच ? केवल दस मिनट पूर्व ? पर यदि यह सच है तो पागलपन है।"

कमल ने कहा, "पागलपन तो है ही। इसी से तो आपसे कहा था कि मुझे और कहीं ले चलिए। ऐसी भीख मैंने माँगी नहीं कि शादी करके मेरे साथ गृह-गृहस्थ भोगिये।"

कुछ कुंठित होकर अजित बोला, "भीख क्यों कहती हो कमल, यह तो तुम्हारे प्रेम का अधिकार है। मगर अधिकार का दावा तुमने किया, पानी के बुलबुले की तरह अल्पायु और झूठी चीज ?"

कमल ने कहा, "हो सकता है, उसकी उमर कम हो, परन्तु झूठ नहीं कह सकते ?"

"पर इस खुशी में स्थायी कुछ भी नहीं कमल !"

"न रहे, लेकिन जो लोग इस डर से कि असली फूल जल्दी से सूख जाते हैं, देर तक रहने वाले नकली फूलों का गुच्छा बनाते हैं, उनके साथ मेरा मेल नहीं खाता। पहले भी मैं कह चुकी हूँ कि किसी भी खुशी में स्थायित्व नहीं होता, स्थायी है सिर्फ उसी खुशी के दिन और वे दिन ही मानन-जीवन के परम संचय हैं। उस आनन्द को बाँधने चले कि वह मरा। इसी से ब्याह में स्थायित्व तो है पर उसका आनन्द नहीं।"

अजित को ध्यान आया कि ठीक यही बात उसने पहले भी कमल के मुँह से सुनी थी और यही उसके अंतःकरण का विश्वास है।

शिवनाथ ने उससे ब्याह नहीं किया था, धोखा दिया था, इसकी उसने कभी शिकायत नहीं की। क्यों नहीं की ? आज यह पहले-पहल अजित समझ सका। संसार भर की मानव-जाति के इस प्राचीन और पवित्र संस्कार के प्रति इतनी जबरदस्ती के कारण अजित का मन पश्चात्ताप से भर उठा। पल-भर मौन रहकर वह बोला, "तुम्हारे सामने मैं गर्व नहीं कर सकता; पर तुमसे अब मैं कुछ छिपाऊँगा नहीं। ये लोग कहते हैं कि कामिनी-काँचन का त्याग ही पुरुष का पुरुषार्थ है। अक्ल की तरफ से मैं इस पर विश्वास करता हूँ। कंचन मेरे पास बहुत है, परन्तु जब सोचता हूँ कि मुझे अपने जीवन में कोई नहीं मिलेगा, तब मेरा हृदय मानो सूख जाता है। यदि ऐसा कोई दिन जीवन में आया तो मैं आश्रम छोड़कर किधर को चला जाऊँगा; पर तुम्हारा आह्वान तो उससे बढ़कर झूठा है। इसका मैं ठीक उत्तर न दे सकूँगा।"

"इसे आप झूठ क्यों कह रहे हैं ?"

"झूठ इसलिए कि मनोरमा का व्यवहार तो यों सूझ में आता है कि उसने मुझे कभी प्यार नहीं किया; परन्तु शिवनाथ के प्रति शिवानी का प्यार तो मैंने देखा है, पर आज उसका चिह्न तक नहीं।"

कमल ने कहा, "आज यदि वह समाप्त हो गया तो क्या उस दिन वह मेरा छल था ?"

अजित ने कहा, "यह तो तुम्हीं जानो; पर मैं सोचता हूँ कि नारी के जीवन में इससे बड़ा झूठ और कुछ नहीं।"

कमल ने कहा, "नारी-जीवन के सच्चे निर्णय का भार पुरुष को अपने पर लेने की जरूरत नहीं—न मनोरमा का और न कमल का। अविचार से न केवल एक ही पक्ष क्षतिग्रस्त नहीं होता अजित बाबू, दोनों पक्ष का सर्व-नाश होता है। उस शिवनाथ ने जो कुछ पाया था, दुनिया के बहुत कम पुरुषों के भाग्य में उतना लिखा होता है; पर आज वह नहीं है। उस दिन का होना जितना बड़ा सत्य था, आज का न होना भी ठीक उतना ही बड़ा सत्य है, क्योंकि शठता की फटी गुदड़ी ओढ़कर इसे ढँक देने में इतनी शर्म आती है, इसी वजह से पुरुष के विचार से यह हो गया नारी-जीवन का सबसे बड़ा झूठ? क्या इसी सुविचार की आशा से हम आप लोगों का मुँह ताका करती हैं?"

अजित ने जवाब दिया, "मगर किया ही क्या जा सकता है? जो इतना क्षणभंगुर है, उसे इससे ज्यादा आदर मनुष्य देगा ही क्यों?"

कमल ने कहा, "देगा नहीं, यह मैं जानती हूँ। हमारे आँगन के किनारे उसकी अपेक्षा जो फूल खिलते हैं उनका जीवन एक क्षण से ज्यादा नहीं। एक पत्थर का सिल-लोढ़ा कहीं टिकाऊ है? सत्य की जाँच का पक्का मापदंड आप लोगों के पास है ही नहीं।"

"कमल, यह युक्ति नहीं, यह तो गुस्से की बात है।"

"गुस्सा किस बात का अजित बाबू, सिर्फ स्थायित्व लेकर ही जिनका व्यापार है, वे इसी तरह कीमतें आँका करते हैं। आह्वान पर जो आपसे 'हाँ' करते नहीं बना, उसकी जड़ में भी वही संदेह है। दस्तखत करके जो हमेशा के लिए बन्धन नहीं लेना चाहती उस पर आप विश्वास नहीं करेंगे। फूल को जो नहीं समझता उसके लिए वह सिल-लोढ़ा ही सबसे बड़ा सत्य है, क्योंकि उस सिल-लोढ़े के सूखकर झड़ जाने की आशा नहीं है।"

"यह व्यंग्य किसलिए कमल?" अजित बोला।

शायद यह प्रश्न कमल ने सुना ही नहीं। वह अपने आपसे कहने लगी, 'मनुष्य यह नहीं सोच पाता कि हृदय लोहे से बना नहीं होता, उसमें दुःख न होता हो यह बात नहीं—पर यही हृदय का धर्म है, यही उसका सत्य है।

फिर भी यह बात कही नहीं जा सकती और न मानी जा सकती है। इससे बढ़कर बुरी नीति संसार में और क्या है? इसी से तो किसी की समझ में न आया कि शिवनाथ को कैसे मैं सर्वातःकरण से क्षमा कर सकी हूं। रो-रोकर यौवन में जोगन बनना उनकी समझ में आ जाता; पर यह उनसे सहा नहीं गया। अरुचि और अवहेलना से सारा मन उनका कड़वा हो गया। पेड़ के पत्ते सूखकर झड़ जाते हैं और उनकी जगह नये पत्ते आकर भर देते हैं। यह तो हुआ झूठ, और बाहर की सूखी लता मर जाने पर भी पेड़ से चिपटी रहती है, यह हो गया सत्य?"

बात समाप्त होते ही अजित बोला, "एक बात हम लोग ज्यादातर भूल जाया करते हैं कि असल में तुम हमारी अपनी नहीं हो; तुम्हारा खून, तुम्हारा संस्कार, तुम्हारी सारी शिक्षा विदेशी। तुम उससे ऊपर नहीं उठ सकतीं और इसी जगह पर हमारा-तुम्हारा मतभेद है। रात बहुत हो गई है कमल, इस व्यर्थ के झगड़े को बन्द करो।"

इस चोट से अजित मन-ही-मन नाराज हो गया, बोला, "अच्छा, यह ही सही, लेकिन तुम इसे नहीं समझोगी कि इसका गूढ़ तत्त्व विदेशियों के लिए नहीं।"

"आपकी शिष्या बनने पर भी नहीं?"

"ना।"

कमल हँसकर बोली, "अच्छा, तो यह बताइये कि उन साधुओं के अड्डे में से आपका नाम कैसे कटवा सकती हूँ? वास्तव में वह आश्रम मेरी आँखों का काँटा बन गया है।"

अजित बोला, "राजेन्द्र को बुलाकर तुमने बेकार में जगह दे दी। तुम्हें कुछ भी शर्म न हुई—क्यों?"

"शर्म क्यों होती?"

"इन सब बातों की तुम चिन्ता ही नहीं करतीं।"

"आप लोगों के मतामत की चिन्ता?—वह तो नहीं करती।"

"अपने सम्बन्ध में भी शायद कभी किसी बात से नहीं डरतीं?"

कमल ने कहा—"यह तो नहीं कह सकती कि कभी डरती नहीं; पर ब्रह्मचारी से डर किस बात का?"

"हूँ" कहके अजित चुप हो गया। फिर बोला, "केंचुआ मिट्टी के नीचे अंधेरे में रहता है। वह जानता है कि बाहर के उजाले में निकलने से उसका बचना कठिन है—उसे लील जाने के लिए बहुतेरे मुंह खोले फिर रहे हैं। छिपने के सिवाय उसके पास कोई उपाय नहीं, पर तुम जानती हो कि आदमी औरत होने पर भी केंचुआ नहीं। शास्त्र में लिखा है कि अपने रूप को जान लेना ही परम शक्ति है—और तुम्हारा यह अपना स्वरूप-ज्ञान ही तुम्हारी शक्ति है—क्यों, है न ठीक ?"

कमल चुप रही।

अजित ने कहा—"स्त्रियाँ जिस चीज को अपने जीवन का सर्वस्व समझती हैं उस पर तुम्हारी ऐसी उदासीनता है कि चाहे कोई कितनी ही बुराई किया करे, वह तुम्हारे चारों तरफ आग की चारदीवारी बनकर ठहरी है। तुम तक पहुँचने के पहले ही वह बुराई स्वयं भस्म हो जाती है। अभी-अभी तुम मुझसे कह रही थीं कि जो पुरुष के भोग की वस्तु है, उनकी जाति की तुम नहीं हो। आज तुम्हारे सामने बैठकर उस बात का अर्थ स्पष्ट हो रहा है। मैं यह भी सोच रहा हूँ कि लोगों की निन्दा-प्रशंसा की आज्ञा न मानने-करने का साहस तुम्हें कहाँ से मिला है ?"

कमल ने कहा "अजित बाबू, आज तो बातें बहुत कुछ ज्ञान की कर रहे हैं।"

अजित ने कहा, "अच्छा कमल, एक बात बताओ, तुम्हारे लिए क्या मेरा प्रेम भी दूसरों की तरह व्यर्थ है ?"

"पर यह बात जानकर आप क्या करेंगे ?"

"कमल, अपने को शक्तिमान समझकर मैंने कभी गर्व नहीं किया। भीतर-भीतर मैं जितना दुर्बल हूँ उतना ही असहाय। किसी काम को जोर से कर डालने की शक्ति मुझमें नहीं।"

कमल हँसकर बोली, "यह मैं आपसे ज्यादा जानती हूँ।"

अजित ने कहा, "मुझे लगता है कि तुम्हें पाना जितना सरल है, खो देना भी उतना ही सरल।"

कमल ने कहा, "यह भी मैं जानती हूँ।"

अजित बोला, "वही तो परेशानी है। तुम्हें आज पा लेना ही तो सब

कुछ नहीं है। एक दिन यदि इसी तरह देना पड़ा तो क्या होगा?"

कमल ने मधुर कण्ठ से कहा, "कुछ भी न होगा। उस दिन खोना भी ऐसा ही सरल हो जाएगा। जितने दिन तक पास रहूँगी, उतने समय मैं आपको वही बात सिखाया करूँगी।"

अजित चौंककर बोला, "विलायत में रहते हुए मैंने देखा है कि वहाँ के लोग कितने आराम से—कितने छोटे कारणों से सदा के लिए अलग हो जाते हैं। सोचता हूँ, क्या उन्हें थोड़ी भी पीड़ा नहीं होती? और यही यदि उनके प्रेम का परिचय है तो वे सभ्यता का गर्व कैसे किया करते हैं?"

कमल ने कहा, "अजित बाबू, बाहर से समाचार-पत्रों में जितना सरल दीखता है, वास्तव में वह उतना सरल नहीं है। किन्तु फिर भी मैं तो यही कामना करती हूँ कि नर-नारी का यह सम्बन्ध ही किसी दिन संसार में उजाले और हवा की तरह सरल वास्तविक बन जाए।"

अजित चुपचाप उसके मुँह की तरफ देखता रह गया, कुछ बोल न पाया। न जाने क्यों, उसकी आखों में आँसू भर आये।

कमल ने अनुभव कर लिया। उठकर पलंग पर सिर के पास जा बैठी और माथे पर हाथ फेरने लगी, किन्तु शांति का एक शब्द भी उसके मुँह से नहीं निकला।

सामने की खुली हुई खिड़की से दिखाई दिया कि पूर्व का आकाश साफ होता जा रहा है।

"अजित बाबू--अब बिस्तर पर जाने का समय नहीं रहा।" कमल बोली।

"ना, अब उठता हूँ।" कहकर अजित उठकर बैठ गया।

बीस

आगरा!

कई हंगामों के बीच में भी आशु बाबू के जीवन में कोई अन्तर न आया; पर इधर कई दिनों से कुछ अन्तर-सा लोगों की निगाह में आने

लगा है। जैसे व्यर्थ ही बातचीत में रूखापन ले आते हैं, यहाँ तक कि नौकर-चाकरों तक को उनकी कुछ बातें तेज और आश्चर्यचकित-सी सुनाई देती है; पर ऐसा क्यों ? यह सोचना भी कठिन है। कारण कुछ भी क्यों न हो, परन्तु उनके हृदय में मानो आग जल रही है और उसकी चिनगारियाँ कभी-कभी बाहर दिखाई पड़ जाती हैं।

आज तक उन्होंने ठीक-ठीक बतलाया तो नहीं है, पर ऐसा लगता है कि अब उनके आगरे में रहने के दिन खत्म हो गए। जरा और स्वस्थ होने की देर है। उसके बाद जैसे एक दिन आये थे वैसे ही एक दिन चले जाएँगे।

संध्या के समय बहुत-से अधिकारी राजी-खुशी पूछने आ जाया करते हैं। सब आते हैं। यदि कोई नहीं आता तो वह अक्षय है। कमल कभी भी नहीं आती। उस दिन जो आई थी, उसके उपरान्त फिर नहीं आई।

आशु बाबू मजलिसी आदमी हैं। पहले की तरह अब वे मजलिस में शामिल नहीं हो पाते—उपस्थित रहने पर भी ज्यादातर चुप बैठे रहते हैं। ठीक न होने के कारण लोग उन्हें क्षमा कर देते हैं।

मनोरमा का कार्य वेला को निबटाना पड़ता है। आतिथ्य में कहीं कोई गलती नहीं होती। बाहर के लोग आकर केवल उसका रस ही लेते हैं। सभी आने वाले सोचते हैं कि इतना सुन्दर अतिथि-सम्मान रोज इस बीमार व्यक्ति से कैसे बन पाता है।

पर, 'कैसे बन पाता है' का इतिहास गुप्त ही रहता है।

नीलिमा सबके सामने आना पसन्द नहीं करती, किन्तु परदे की ओट में से ही वह घर का सारा काम ठीक करती है।

आज सुबह से ही थोड़ी-थोड़ी बूंदाबाँदी हो रही है और संध्या को खूब जोर की वर्षा होने लगी। ऐसी वर्षा में किसी के भी आने की आशा न थी। खिड़कियाँ बन्द कर दी गई हैं और आशु बाबू कमर पर दुशाला डाले आरामकुर्सी पर पड़े किताब पढ़ रहे हैं। वेला ने कहा, "इस अभागे देश में सब गलत ही है। कुछ दिन पहले जब यहाँ आई थी, तब वर्षा के लिए पूरे देश में ऐसा हाहाकार मचा था कि बिना देखे उसकी बात सोची भी नहीं जा सकती। इससे सोचती हूँ कि ऐसे कठोर सूखे देश में ताजमहल किस दिमाग की उपज है ?"

नीलिमा बोली, "इसका कारण सब लोग नहीं सोच सकते।"

"क्यों ?" सफलतापूर्वक बेला ने पूछा।

नीलिमा बोली, "सब बड़ी चीजें हाहाकार के बीच में ही पैदा होती हैं, अतएव मोद-प्रमोद में मग्न रहने वालों को यह सूझ ही नहीं सकता।"

इस उत्तर की दुसहता से न केवल बेला को ही किन्तु आशु बाबू को भी विस्मय हुआ। उन्होंने किताब पर से मुँह ऊँचा करके देखा कि नीलिमा पूर्ववत् सीने में लगी हुई है, मानो उसने कुछ भी नहीं कहा।

बेला शांत स्त्री है, और साथ ही सुशिक्षिता भी है। पैंतीस साल से ऊपर होने पर उसने अपने यौवन के लावण्य को आज तक सुरक्षित रखा है—रंग सुन्दर है, चेहरे पर एक विशिष्ट रूप है, पर गौर से देखने पर पता लग जाता है कि कोमलता की अनुपस्थिति ने मानो उसे रूखा बना रखा है। आँखों की दृष्टि चपल-चंचल है ही। खुशी-उत्सव में वह शोभती है। सहसा दुःख के बीच आ पड़ने से घर-मालिक को लजाना पड़ता है।

बेला का मुख पल-भर के लिए मारे गुस्से के लाल हो उठा; पर नाराज होकर झगड़ा करना उसकी शिक्षा और सौजन्य के विरुद्ध है, इसलिए अपने को सँभालकर बोली, "मुझ पर कटाक्ष करने से कोई लाभ नहीं। हाहाकार करते फिरना चाहे कितनी ही बड़ी बात हो, किन्तु यह मुझसे नहीं होते बनता। मेरा आत्म-सम्मान ज्ञान बना रहे, उससे ज्यादा मैं और नहीं चाहती।"

नीलिमा अपना कार्य करती रही, कोई जवाब नहीं दिया।

आशु बाबू अन्तर से क्षुब्ध होकर बोल उठे, "ना-ना, तुम पर कोई बात नहीं की बेला, बात उन्होंने सादे भाव से कही है। नीलिमा की आदत मुझे मालूम है, यह कभी नहीं हो सकता।"

बेला बोली, "न हो यही ठीक है। इतने दिन एकसाथ रहकर ऐसा मैं कभी भी सोच नहीं सकती।"

नीलिमा ने 'हाँ-ना' में कुछ भी उत्तर नहीं दिया, अपने कार्य में ऐसी लगी जैसे उसने कुछ सुना ही नहीं।

कमरे में बिलकुल चुप्पी छा गई।

बेला के पिता वकील थे, पर अपने काम में वे बड़ाई या अर्थ न प्राप्त

कर सके। उनका धर्म कोई नहीं जानता और समाज की तरफ से भी वे हिन्दू, ब्राह्मण या क्रिस्तान आदि किसी भी समाज को मानकर न चलते थे। लड़की को ज्यादा प्यार करते थे। 'वेला' नाम उन्होंने इच्छा से रखा था। सुन्दरी और शिक्षिता होने के कारण वेला का नाम उस दल में सबकी जवान पर चढ़ गया और इसलिए उसे धनी पति मिलने में देर न हुई। वे हाल ही में विलायत पास कर लौटे थे।

कुछ दिन देखभाल के उपरान्त कानून की तरह रजिस्ट्री करके ब्याह हो गया। पृथक् वायु-परिवर्तन आदि ऐसी बहुत-सी बातें हुईं। दोनों ओर से तरह-तरह की बातें सुनी गईं, परन्तु उनकी आलोचना यहाँ वेकार होगी। वह पक्ष हाथोंहाथ पकड़ा गया और कन्या-पक्ष विवाह-विच्छेद का मामला दायर करने की सोचने लगा।

मित्र-मण्डली में आपस में समझौता करने की कोशिश हुई, किन्तु शिक्षिता वेला नर-नारी के समान अधिकारों की सबसे बड़ी ज्ञाता थी। इसलिए उसने इस असम्मान के दावे पर ध्यान नहीं दिया। वह चाहे चरित्र की दृष्टि से जैसा भी रहा हो, आदमी की तरह बुरा नहीं था। स्त्री को वह ताकत और शक्ति की तरह ही प्यार भी करता था। उसने लज्जा के साथ अपनी गलती मान ली तथा अदालत की दुर्गति से छुटकारा पाने के लिए हाथ जोड़कर क्षमा माँग ली, पर स्त्री ने क्षमा नहीं दी। अन्त में बड़े दर्दपूर्ण ढंग से फैसला हुआ।

एक किस्त नकद और खाने-पहनने के लिए मासिक खर्च देना मंजूर करके उसने किसी तरह मामले से अपना सिर छुड़ाया और इधर दांपत्य-युद्ध पर जीत पाकर वेला स्वास्थ्य को ठीक करने के लिए शिमला, मसूरी, नैनीताल आदि पार्वत्य प्रदेश में गर्व के साथ सैर करने चल दी।

उस चीज को आज लगभग छः-सात वर्ष हो गए। इसके थोड़े ही दिन के उपरान्त उसके पिता की मृत्यु हो गई। इस मामले में उनकी इच्छा नहीं थी, किन्तु इससे वहुत ज्यादा दुखी भी हुए थे।

आशु बाबू की स्वर्गीय पत्नी के साथ उसका कोई दूर का रिश्ता था और उसी सम्वन्ध से वेला आशु बाबू की भी रिश्तेदार थी। उसकी शादी में भी आशु बाबू निमन्त्रित होकर गए थे और उसके पति से भी परिचित

होने का उन्हें समय मिला था। इसी तरह कई रिश्तों के बारे में बेला आगरे आई थी; न बिलकुल गैर होकर आई थी और न निराश्रित होकर ही। तुलना में इसी स्थान पर नीलिमा के साथ उसका बहुत अन्तर था।

फिर भी, हालात इससे बिलकुल उलटे हो गए थे। आशु बाबू के घर में किसका कहाँ स्थान है, घर के किसी आदमी को रंचमात्र भी सन्देह न था।

परन्तु देर तक चुप रहकर बेला ने कहा, "माना कि साफ कुछ नहीं कहा, पर इसमें सन्देह नहीं कि मुझे दुःख देने के लिए ही नीलिमा ने ऐसी बात कही है।"

आशु बाबू ने आश्चर्य के स्वर में पूछा, "दुःख देने को किसलिए बेला ?"

बेला ने कहा, "आप सब जानते हैं। बुराई करने वालों की उस दिन भी कमी नहीं थी और आज भी कमी नहीं है; किन्तु अपनी इज्जत की—सम्पूर्ण नारी-जाति की इज्जत की रक्षा के लिए उस दिन भी मैंने डर नहीं किया और आज भी डर नहीं करूँगी। चूँकि मैंने अनुचित काम नहीं किया है इसलिए उस दिन जैसे नहीं डरी, आज भी उसी तरह नहीं डरूँगी।"

नीलिमा ने धीरे से कहा, "एक दिन कमल कह रही थी कि विवेक-बुद्धि ही संसार में सबसे बड़ी वस्तु नहीं है। विवेक की दुहाई देने से ही सारी ठीक-गलत का वर्णन नहीं हो सकता।"

"यह कहती है क्या ?" आशु बाबू ने आश्चर्य में होकर कहा।

नीलिमा ने कहा, "वह कहती है कि यह पागल का वह अस्त्र है जो आगे-पीछे दोनों तरफ से चलाया जा सकता है—"

आशु बाबू ने कहा, "उसे कहने दो नीलिमा, पर ऐसी बात तुम अपने मुँह से न कहो।"

बेला ने कहा, "इतने बड़े बुरे साहस की बात मैंने कभी नहीं सुनी।"

आशु बाबू धीरे-धीरे कहने लगे, "बुरा साहस तो है। उसके साहस की कोई समाप्ति नहीं। वह अपने नियम पर चलती है, उसकी सब बातें न सबके दिमाग में आती हैं और न मानी ही जा सकती हैं।"

बेला ने कहा, "अपने नियम पर तो मैं भी चलती हूँ आशु बाबू, इसलिए मैंने अपने पति को छोड़ दिया; पर सिर न झुका पाई।"

आशु बाबू ने कहा, "इसमें सन्देह नहीं कि यह गहरे दुःख की बात है; परन्तु तुम्हारे पिता के सम्पत्ति न देने पर भी मुझसे तो बिना दिये रहा नहीं गया।"

बेला ने कहा, "धन्यवाद, मुझे ध्यान है आशु बाबू।"

आशु बाबू बोले, "उसका कारण था। स्त्री-पुरुष के समान भार और अधिकार पर मैं विश्वास नहीं करता हूँ। हमारे हिन्दू-समाज में सौ-सौ गलती करने पर भी पति को दण्ड का डर नहीं और तुच्छ-से-तुच्छ गलती पर स्त्री को दण्ड देने के हजारों रास्ते हैं। इस व्यवस्था को मैं एक दिन के लिए भी ठीक न मान सका। इसी से बेला के पिता ने जब मेरे पास सही बात जानने के लिए पत्र लिखा था, तब मैंने उत्तर में यही बात कही थी कि हालाँकि वह कोई शोभा या सुख की बात नहीं परन्तु वह यदि अपने असच्चरित्र पति को सच में ही छोड़ देना चाहती है तो उसे मैं गलत कहकर मना नहीं कर सकता।"

नीलिमा बोली, "आपने क्या सचमुच ही यही बात लिखी थी?"

"सच नहीं तो क्या?"

नीलिमा चुप रह गई।

उस चुप में आशु बाबू ने एक तरह की अशान्ति को महसूस किया।

उन्होंने कहा, "इसमें विस्मय की कोई बात नहीं नीलिमा, किन्तु न लिखना ही गलत होता।"

फिर थोड़ा रुककर कहा, "तुम अपने आप भी तो कमल की बड़ी भक्त हो। बताओ, वह ऐसी अवस्था में क्या करती? क्या उत्तर देती?"

नीलिमा की आँखों में वेदना नाच उठी। बोली, "वह बेचारी सभ्य समाज से बाहर—यहाँ तक कि बस्ती के द्वारों पर पड़ी हुई है। उसे आप लोग क्यों घसीटते हैं?"

आशु बाबू बोले, "ना-ना, घसीटने की बात नहीं नीलिमा, यह तो केवल एक उदाहरण मात्र है।"

नीलिमा ने कहा, "वही तो घसीटना है। थोड़ी देर पहले आपने कहा था कि उसका सारी बातें सारे समय समझ में भी नहीं आतीं और न मानी ही जा सकती हैं।—माना कुछ समाप्त नहीं हो सकता, केवल उदाहरण ही

दिया जा सकता है।"

आशु बाबू क्षुब्ध कंठ से बोले, "कोई भी मतलब हो, आज तुम्हारा मन शायद ठीक नहीं है। इस समय किसी के बारे में बुराई ठीक नहीं।"

नीलिमा बोल उठी, "उस समय आपने इनके विवाह की समाप्ति पर राय दी थी और आज बिना शर्म के कमल का दृष्टान्त दे रहे हैं। इनकी-सी हालत में कमल क्या कर सकती थी, यह तो वही जाने, किन्तु उसके दृष्टांत का असल में पीछा करने के लिए आज इन्हें कुली, मजदूरों के कपड़े सी करके अपना पेट भरना पड़ता है—कमल और जो चाहे करती, पर जिस पति को बुरा-भला कहकर घृणा से छोड़ देती उसी के दिये हुए अनाज का ग्रास मुँह में देकर और उसी के दिये कपड़ों से इज्जत बचाकर कभी न जीना चाहती। अपने को इतनी छोटी या ओछा बनने के पहले वह आत्महत्या करके मर जाती।"

आशु बाबू और बेला पागलों की तरह चुप हो रहे।

नीलिमा के दिन हँसी-मजाक में ही समाप्त हो जाते हैं। कोई इस बात को ध्यान में भी न ला सकता था कि वह इस तरह निर्मम हो सकती है।

एक पल बाद नीलिमा बोली, "आप लोगों की बैठक में मैं नहीं बैठती; परन्तु जो बुराइयाँ होती हैं, वे मैं सब जानती हूँ, नहीं तो शायद मैं कोई बात कहती भी नहीं। कमल ने एक दिन भी शिवनाथ की बुराई नहीं की। एक आदमी के आगे अपना दुःख नहीं रोया—क्यों, जानते हो?"

"क्यों?" आशु बाबू हत्बुद्धि बोले।

नीलिमा ने कहा, "क्यों, यह कहना बेकार है। आप लोग जान नहीं सकेंगे।" फिर चुप होकर कहा, "आशु बाबू, यह एक बहुत साधारण बात है कि पति-पत्नी के अधिकार समान हैं, किन्तु इसका मतलब यह न सोचिएगा कि स्त्री होकर स्त्रियों की ओर से इस दावे का मैं विरोध कर रही हूँ। विरोध मैं नहीं करती। मैं जानती हूँ कि यह सच है, किन्तु साथ ही यह भी समझती हूँ कि सच-सच चिल्लाने वाले एक सच-विलासी गिरोह ने नर-नारी के मुँह के द्वारा और सैकड़ों तरह के आन्दोलनों से उस सच को ऐसा बुरा कर दिया है कि आज उसे झूठ कहने को ही मन करता है। आज मेरी हाथ जोड़कर प्रार्थना है कि सबके साथ मिलकर कमल के बारे

में कोई बात न की जाए।''

आशु वाबू ने उत्तर देना चाहा, पर उनके कुछ कहने के पूर्व ही वह सिलाई की चीजें लेकर भीतर चली गई।

एक लम्बी साँस लेकर आशु वावू ने कहा, ''उसने कब क्या सुना मालूम नहीं, पर मेरे वारे में यह दोष है।''

इतने में हरेन्द्र और अजित आँधी की भाँति कमरे में आ घुसे। दोनों जने थोड़े-थोड़े भीग चुके थे।

हरेन्द्र बोला, ''भाभी कहाँ हैं?''

आशु वावू के जैसे चाँद हाथ लग गया। उनको विश्वास नहीं था कि आज के दिन कोई भी आयेगा। स्वागत के स्वर में वोले, ''बैठो अजित, बैठो हरेन्द्र—''

''बैठता हूँ, भाभी कहाँ पर हैं?''

''ओह! दोनों-के-दोनों खूब भीगे मालूम होते हो!''

''जी हाँ। वे हैं कहाँ?''

''बुलवाता हूँ।'' कहके आशु बाबू ने ज्योंही पुकारने का प्रयत्न किया कि परदा हटाकर नीलिमा अपने आप बाहर निकलकर आई। उसके हाथ में दो धोतियाँ और एक कुरता था।

''आप ज्योतिष भी जानती हैं शायद?'' अजित बोला।

नीलिमा ने कहा, ''ज्योतिष नहीं, अजित दा, एक छतरी में दो-दो जने जो आ रहे थे, खिड़की में से मैंने देखा था।''

''एक छतरी में दो जने? तभी तो दोनों भीग गए।'' हँसकर आशु बाबू बोले।

नीलिमा ने कपड़े हरेन्द्र के हाथ में दे दिये।

हरेन्द्र कपड़े लेकर बोला, ''धोतियाँ दो हैं किन्तु कुरता तो एक ही है?''

''कुरता एक ही बहुत है।'' कहकर नीलिमा गम्भीरता से पास की चौकी पर बैठ गई।

हरेन्द्र ने कहा, ''आशु बाबू के कुरते हैं। यों तो इसके अन्दर दो के बदले चार आ सकते हैं, किन्तु इसे मसहरी बनाकर ओढ़ना ठीक रहेगा?''

वेला हँसी न रोक सकने के कारण बाहर चली गई और नीलिमा चुप

बैठी रही।

आशु वावू वड़ी गम्भीरता से कहने लगे, "वीमारी के कारण आधा रह गया हूँ हरेन्द्र, अव तुम टोको मत। देखते नहीं, औरतों को कैसा वुरा मालूम होता है। एक तो उठकर वाहर चली गई और एक ने मारे गुस्से के मुँह बदल लिया।"

हरेन्द्र ने कहा, "टोका-टाकी नहीं की आशु वावू, वड़े की महिमा है। चिरस्तूयमान हिमालय की तरह यह तन अक्षय बना रहे। स्त्रियाँ निःशंक हों, और समागतजनों के भाग्य में जो मिष्टान्नादि लिखा है, उससे कभी वंचित न हों।"

नीलिमा हँस पड़ी, "वड़ों का सुतिवाद तो अनंतकाल से चला आ रहा है। अजित दा और तुम उसमें सिद्धहस्त हो। वगैर किये इतने आदमियों के भाग्य में मिष्टान्न की जगह कोरा सूना पड़ेगा।"

वेला वरामदे से लौटकर अन्दर आ वैठी।

हरेन्द्र ने पूछा, "क्यों भाभी?"

गम्भीर स्नेह में नीलिमा की आँखें भर आयीं, वोली, "ऐसी अच्छी वात वहुत दिनों से सुनी नहीं है भाई, इसलिए सुनने की तबीयत है।"

"तो चालू कर दूँ?"

"अच्छा, अभी रहने दो। पहले तुम लोग उस कमरे में जाकर कपड़ों को वदल लो, मैं कुरता भेजे देती हूँ।"

"किन्तु कपड़े बदल चुकने के वाद फिर क्या होगा?"

नीलिमा ने हँसते हुए कहा, "फिर प्रयत्न करूंगी कि इतने मनुष्यों के भाग्य से यदि कहीं से खाने-पीने को पा सकूँ।"

हरेन्द्र ने कहा, "कष्ट उठाने की आवश्यकता नहीं भाभी, केवल एक वार देख-भर लो। आपकी अन्नपूर्णा की-सी दृष्टि से अन्न का भण्डार निकल पड़ेगा। चलो अजित, अब फिकर नहीं, हम लोग भीगे कपड़े वदल आवें।" कहकर अजित को वरावर के कमरे में ले गया।

इक्कीस

अजित बोला, "वर्षा बन्द होती दिखाई नहीं पड़ती।"

हरेन्द्र बोला, "तब फिर हम दोनों को उसी टूटी छतरी का सहारा लेकर गहरे मार्ग में चल देना और अन्त में आश्रम पहुँच जाना चाहिए। जाकर गीले कपड़े बदलना और सो जाना ही तो है।"

आशु बाबू व्यग्र होकर बोले, "तो फिर तुम लोगों ने पेट भरके ही क्यों नहीं खाया ?"

हरेन्द्र ने कहा, "आप इसके लिए कोई चिन्ता न करें।"

नीलिमा खिलखिलाकर हँस पड़ी, इसके बाद की आवाज में बोली, "हरेन्द्र दा ! क्यों बेकार में रोगी आदमी को व्यग्र कर रहे हैं।" फिर आशु बाबू से बोली, "ये संन्यासी आदमी, खाने-पीने की ओर इनकी गलती किसी को दिखाई नहीं पड़ती। हाँ, अजित बाबू के लिए जरूर सोच है। इनका आज का खाना देखकर समझा जा सकता है कि ऐसे साथ में भी ये जल्दी पकड़ नहीं पाये हैं।"

हरेन्द्र ने कहा, "शायद मन में पाप होगा, इसी से। किसी दिन पकड़े जायेंगे।"

अजित का चेहरा शर्म से लाल हो गया, "आप न जाने क्या कह रहे हैं हरेन्द्र बाबू !"

नीलिमा हँसकर बोली, "तुम्हारे मुँह पर फूल-चन्दन पड़ें हरेन्द्र दा, ऐसा ही हो। उनके मन में थोड़ा-बहुत पाप हो और किसी दिन पकड़े जाएं तो मैं कालीघाट पर जाकर ठाठ से पूजा कर आऊँ।"

"तो फिर तैयारियाँ करना शुरू कर दीजिए।" हरेन्द्र ने कहा।

अजित नाराज होकर बोला, "क्या बेकार बक रहे हैं हरेन्द्र बाबू—यह बड़ा बुरा मालूम होता है।"

हरेन्द्र ने फिर कुछ नहीं कहा।

अजित के मुँह की ओर देखकर नीलिमा का कौतूहल तेज हो उठा, पर वह भी चुप रही।

कुछ देर वाद हरेन्द्र वोल उठा, "हमारे आश्रम पर कमल बहुत नाराज है, आपको याद है भाभी !"

नीलिमा ने सिर हिलाते हुए कहा, "हाँ, उनका यही विचार है।"

हरेन्द्र ने कहा, "नाराजगी अब तो और भी बढ़ गई है और न केवल हम पर ही वरन् सब धार्मिक संस्थाओं पर उसका गुस्सा है। यहाँ तक कि ईश्वर के प्रति डर और मिजाज ठीक हो तो बूढ़ों और बच्चों के खेल में भी कौतुक कर खुशी लेने में असमर्थ नहीं, आश्चर्य ही जानिये।"

वेला जो अभी तक शांत थी, बोली, "जिनके लिए ईश्वर भी बच्चों का खेल है, आप उन्हीं के साथ मेरी तुलना कर रहे थे, आशु बाबू !"

इस बात को किसी तरह से उत्साह नहीं मिला। उसकी सूखी आवाज किसी के कानों तक शायद पहुँची ही नहीं।

हरेन्द्र कहने लगा, "और मजा यह है कि उनके अपने अन्दर एक ऐसा निर्द्वंद्व संयम, नीरव मिताचार और निःशंक तितिक्षा है कि देख के आश्चर्य होता है। शिवनाथ भला हमारा कौन था। फिर भी उसके अन्याय पर हम उसे दण्ड देने को तैयार हो गए। पर कमल ने कहा, 'ना'। उसकी 'ना' में न विद्वेष था, न जलन थी, न दान लेने की श्लाघा थी और न क्षमा का दंभ। उसका दाक्षिण्य अविकृत करुणा से भरा था। कमल ने केवल यही कहा, 'छिः-छिः, ना-ना, ऐसा नहीं हो सकता।' अर्थात् एक दिन जिसे उसने प्यार किया है उसके प्रति निर्ममता की कल्पना वह नहीं कर सकती और सबकी नजर से ओझल उसके सब दोष चुपके से बिलकुल पोंछकर फेंक दिये। उसमें न कोई कोशिश थी, न चंचलता थी और न शोकाच्छन्न हाहाकार का कोई भाव था, मानो पहाड़ की चोटी पर से जल की धारा अपने-आप ही बह आयी हो।"

आशु बाबू ने एक गहरी साँस लेकर कहा, "सच्ची बात है।"

हरेन्द्र कहने लगा, "पर मुझे गुस्सा तब आता है जब वह हमारे आदर्श, धर्म, इतिहास आदि सबको मजाक में उड़ा देना चाहती हैं। मैं जानता हूँ कि उनके शरीर में दूसरे देश का खून है और मन में भी वैसी उग्रता के साथ परधर्म का भाव प्रवाहित है, फिर भी उनके मुँह के सामने खड़े होकर जवाब नहीं दे पाता। उनके कहने में न मालूम कैसी एक दृढ़ निश्चय की

दीप्ति फूट निकली है। मालूम होता है, मानो उन्होंने जीवन के तत्त्व को खोज लिया है। शिक्षा के द्वारा नहीं, न अनुभव-उपलब्धि के जरिये। ऐसा लगता है कि तत्त्व को जैसे वह आँखों में ठीक-ठीक सामने देख रही हों।"

आशु बाबू खुश होकर बोले, "ठीक यही बात मेरे मन में कई बार आयी है। यही कारण है कि जैसी उसकी बातें हैं वैसे ही उसके काम हैं। वह असत्य भी समझती हो, तो वह झूठ भी गौरवपूर्ण हो उठा है। ठीक हुआ जो वह घमण्डी चला गया।"

हरेन्द्र ने कहा, "एक भाभी को छोड़कर मैं और किसी स्त्री को उनके समान नहीं पाता। सेवा में ऐसी समझिये जैसी लक्ष्मी। मन लुढ़ककर मानो पैरों पर लोट जाना चाहता है।"

नीलिमा हँसकर बोली, "हरेन्द्र दा, तुम पहले जन्म में शायद किसी राजरानी के स्तुति-पाठक थे, इसी से इस जन्म में भी वह संस्कार दूर नहीं हो पाता है। लड़के पढ़ाने का काम छोड़कर यदि यह रोजगार करते तो कहीं अच्छा होता।"

हँसकर हरेन्द्र बोला, "क्या करूँ, मैं सीधा आदमी हूँ, जो बात सोचता हूँ कह डालता हूँ; लेकिन आप उन अजित बाबू से पूछिये जरा, अभी आस्तीन चढ़ाकर मारने को तैयार हो जायेंगे—भले हो जाएँ, पर जिन्दा तो देख लीजिएगा किसी दिन—"

अजित बोला, "आप क्या कह रहे हैं हरेन्द्र बाबू, शायद मुझे अब आपके आश्रम में चला जाना होगा?"

हरेन्द्र ने कहा, "यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ; पर जब तक हूँ तब तक तो सहना ही पड़ेगा—"

"तो आप कहें, मैं जाता हूँ।"

नीलिमा ने कहा, "लालाजी, यदि तुम अपने ब्रह्मचर्याश्रम को बन्द कर दो तो तुम भी बच जाओ और लड़के भी।"

हरेन्द्र ने कहा, "लड़के जरूर बच सकते हैं भाभी, पर अक्षय बाबू के रहते मेरे बचने की कोई आशा नहीं। वह मुझे यमराज के यहाँ से भी पकड़ लाएँगे।"

आशु बाबू ने कहा, "अक्षय से तुम डरते हो?"

"अवश्य डरते हैं। जहर खाना कठिन नहीं, पर उसके कटाक्ष हजम करना मुश्किल है। इन्फ्लुएंजा में इतने मरे, पर वह नहीं मरा।"

सब हँस दिये।

नीलिमा बोली, "अक्षय बाबू से मैं अबकी बार तुम्हारी ओर से क्षमा माँग लूंगी।"

हरेन्द्र ने कहा, "हम लोग ही तो पकड़े जाएँगे भाभी, आप लोग तो सब जलने-भुनने के परे पहुँच चुके हैं। विधाता ने आपकी सृष्टि केवल हम ही लोगों के जानने के लिए की थी, आप लोग उसके इलाके से बाहर हैं।"

नीलिमा मारे लज्जा के लाल होकर बोली, "और नहीं तो क्या?"

बेला ने कहा, "सही तो है, बाहर तो हैं ही।"

पल-भर सब चुप रहे।

अजित ने कहा, "उस दिन ठीक इसी के बारे में एक बड़ी सुन्दर कहानी पढ़ी थी।" फिर आशु बाबू की ओर देखकर पूछा, "आपने नहीं पढ़ी क्या?"

"कौन-सी, याद नहीं पड़ता।"

"किसी फ्रांसीसी लेखिका की कहानी का अंग्रेजी में अनुवाद है। लेडी डॉक्टर अपने परिचय में कहती है, 'मैंने यौवन पार करके प्रौढ़त्व में कदम रक्खा है—' वह है न सामने का शेल्फ—" कहता हुआ वह पत्रिका उठा लाया। आशु बाबू ने पूछा, "कहानी का नाम क्या है?"

अजित ने कहा, "नाम अनोखा है—'एक दिन : जब मैं नारी थी'।"

बेला ने बतलाया, "शायद लेखिका की यह कहानी उसके जीवन की कहानी है। डॉक्टर होकर नारी-तन के क्रम-विकास का जो चित्र खींचा है, वह कई जगहों पर रुचिकर हो गया है जैसे—"

बीच में ही नीलिमा बोली, "जैसे की आवश्यकता नहीं अजित बाबू।"

अजित ने कहा, "किन्तु उन्होंने नारी के हृदय का जो चित्र खींचा है वह मधुर न होने पर भी आश्चर्यजनक है।"

आशु बाबू विस्मय से बोले, "अच्छा अजित, जरा सुनाओ तो।"

अजित किताब खोलकर कहने लगा, "जिसकी यह आत्म-कहानी है वह सुन्दरी है, सुशिक्षिता है और बड़े घर की लड़की है। चरित्र पर कहानी में

प्रकाश नहीं डाला था; पर चरित्र में यदि कोई धब्बा कभी लगा भी हो तो वह यौवन के आरम्भ में लगा होगा।

"उस दिन उसको बहुतों ने चाहा था—एक को आतमहत्या करनी पड़ी और एक चला गया कनाडा। कनाडा तो चला गया, पर आशा को न छोड़ सका, दूर से कृपा-भिक्षा माँगते हुए उसने इतने पत्र लिखे कि उनसे एक बड़ा जहाज पूरा भर पाता, किन्तु कोई उत्तर न दे पाया। आखिर में एक समय दोनों की भेंट हुई। देखने के साथ वह चौंक पड़ा। पन्द्रह वर्ष समाप्त हो गये थे। कुशल प्रश्न हुए। उलाहने भी कम पेश नहीं किये गये; किन्तु पहले आँखें चार होते ही उसकी आँखों के कोनों से जो चिनगारियाँ निकलती थीं, आज उनका कहीं पता नहीं था। अब वह स्वप्न बन गया था। स्त्रियों को धोखा दिया जा सकता है, पर इस बारे में नहीं। यहीं से कहानी आरम्भ होती है।

"फिर वह घर पहुँची। उस आदमी को उसने कभी भी प्यार नहीं किया था और न कभी करना ही चाहा था, किन्तु सर्वातःकरण से उसने सदैव यही प्रार्थना की थी कि भगवान् किसी-न-किसी दिन उसे मोह से मुक्त कर दे। आज देखा कि भगवान् ने इतने दिनों के बाद उसकी वही प्रार्थना मान ली है। दुःसाध्य समस्या की आज मानो आखिरी मीमांसा हो गयी। सदैव से 'नहीं' कहकर बराबर वह इंकार ही करती है, और आज भी उसमें व्यतिक्रम नहीं हुआ; किन्तु वह आखिरी 'नहीं' आज आयी दूसरी ओर से। उस स्त्री ने इसकी स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी कि दोनों 'नहीं' में इतना ज्यादा अन्तर होगा। पुरुषों की लोलुप दृष्टि ने सदैव से दुखी ही किया है, लज्जा से दुखी ही किया है। आज ठीक उसी दिशा से छुटकारा मिला, किन्तु फिर भी घर लौटते समय रास्ते में मानो आज सारा-का-सारा विश्व उसे एकदम अपरिचित मूर्ति धारण करके दिखायी देने लगा। प्रेम नहीं, हृदय में एकांत मिलने की व्याकुलता नहीं—ये सब तो दूसरी बातें हैं, बड़ी बातें हैं; किन्तु आज के पहले उसे इसके क्या समाचार थे कि जो शुभ नहीं है, असुन्दर है, अत्यन्त अस्थायी है, उन पर कुत्सित बातों के लिए भी उसी नारी के अशांत चित्त के नीचे इतना बड़ा आसन बिछा हुआ था और

उसके कारण पुरुष की विमुखता उसे ऐसे निर्मम अपमान से दुखी कर सकती है।"

हरेन्द्र ने कहा, "अजित कहते तो बड़े अच्छे तरीके से हैं। कहानी को खूब ध्यान से पढ़ा है।"

स्त्रियाँ चुपचाप बैठी थीं।

उन्होंने अपनी बात साफ़ नहीं की।

आशु बाबू ने कहा, "हाँ। उसके बाद, अजित?"

अजित कहने लगा—"तब उस महिला को एकदम ध्यान आया कि एक ही पुरुष तो उसे नहीं चाहता था, बहुत-से लोग बहुत दिनों से उससे प्रेम करते आ रहे थे, प्रार्थना करते आ रहे थे—उस दिन उसकी थोड़ी-सी मुस्कान और मुँह के केवल एक शब्द के लिए उनकी व्याकुलता की हद न थी। पर वे सब भी आज कहाँ गये? कहीं भी नहीं गये—अब भी तो कभी-कभी दिखायी दे जाते हैं। तो क्या उसके अपने गले की आवाज भी बिगड़ गयी है? उसकी हँसी का रूप बदल चुका है? अभी-अभी उस दिन की बात ही तो है--दस-पन्द्रह वर्ष ऐसे कितने सारे दिन समाप्त हो गये?—इतने में क्या उसका सबकुछ समाप्त हो गया?"

आशु बाबू एकदम बोल उठे—"गया कुछ भी नहीं अजित, गया हो तो शायद उसका यौवन, उसकी माँ होने की ताकत खो गयी।"

अजित उसकी ओर देखकर बोला, "यही बात है।"

"यह ठीक बात है, आपने कैसे जान ली?"

आशु बाबू उत्तर में केवल थोड़ा हंस दिये, बोले—"तुम आगे पढ़ो।"

अजित कहने लगा, "घर लौटकर वह अपने बड़े शीशे के सामने खड़ी हो गयी। पहले-पहल उसकी निगाह पड़ी कि नारी की जो सबसे बड़ी सम्पत्ति है—माँ होने की शक्ति है, वह शक्ति आज एकदम निस्तेज और म्लान हो चुकी है। वह आज मृत्यु के मार्ग पर पग बढ़ाये खड़ी है। इस जीवन के अन्दर वापस नहीं लाया जा सकता।"

आशु बाबू बोले—"यह सच है अजित, जीवन की अनेकों बड़ी चीजें हम लोग खोकर पहचान सकते हैं। हाँ, फिर?"

अजित कहने लगा—"वह सोचती है कि एक दिन वह क्या थी और

आज क्या वनने जा रही है ? किन्तु उस वर्णन को मैं कह नहीं सकता हूँ और न ही पढ़ सकता हूँ ।"

नीलिमा बोल उठी—"न-न-न अजित वावू, उसे रहने ही दीजिये—उसे छोड़कर आगे कहने को वढ़ो ।"

अजित कहने लगा—"उस महिला ने वर्णन के अन्त में कहा है कि जिस प्रकार से नारी के दैनिक सौन्दर्य के समान असुन्दर चीज इस जगत् में नहीं है, उसी की भाँति इसकी विकृति के समान सुन्दर चीज भी नहीं है ।"

आशु वावू ने कहा—"यह शायद कुछ ज्यादती है अजित वावू ।"

नीलिमा वोली—"ना, एकदम सच है ।"

आशु वावू ने कहा—"किन्तु उनकी जितनी आयु है उसे तो विकृति आयु नहीं कही जा सकती, नीलिमा ।"

नीलिमा ने कहा—"कही जा सकती है । इस बात को और चाहे जो भूल जाय, पर स्त्रियाँ नहीं भूल सकतीं कि यौवन आयु का सवसे ज्यादा छोटा हिस्सा होता है ।"

अजित प्रसन्नतापूर्वक बोला—"एकदम यही उत्तर उसने दिया है । कहा है—आज से समाप्ति की शेष प्रतीक्षा करते रहना ही होगा, शेष जीवन का एकमात्र ही सच है । मैं समझती हूँ कि इसमें कोई सांत्वना नहीं, खुशी नहीं, आशा नहीं—फिर भी उपहास की शर्म से तो बच ही जाऊँगी । ऐश्वर्य का भग्न स्तूप आज भी शायद किसी अभागे का मन हरण कर सके, किन्तु वह मुग्धता जैसे उसके लिए विडम्बना के सिवाय कुछ नहीं, वैसे ही वह मेरे लिए मिथ्या है, झूठ है । यह मुझसे हो नहीं पायेगा कि जिस रूप का सचमुच प्रयोजन हो चुका है, उसी को कई प्रकार से, नाना वेशभूषा से सजाकर कहूँ समाप्त नहीं हुआ, तथा अपने को और दूसरों को भी धोखा देकर ठगती फिरूँ ।"

इस पर सव चुप रहे ।

केवल नीलिमा बोली—"बहुत सुन्दर । ये शब्द उसके मुझे अत्यधिक सुन्दर लगे अजित वावू !"

हरेन्द्र इस मन्तव्य से खुश होकर बोला—"यह केवल आपका आवेश ही है भाभी, खूब सोच-विचार के नहीं कहा गया है, अपनी ऊँची डाल पर

सेमर का फूल भी एकदम सुन्दर दीख पड़ता है, पर फूलों के दरबार में उसकी कोई इज्जत नहीं। नारी का तन क्या ऐसी तुच्छ वस्तु है कि उसके सिवाय उसका और कोई उपाय ही न हो?"

नीलिमा ने कहा—"नहीं है, तो लेखिका ने कहा नहीं। यह आशंका उसे स्वयं भी थी कि अभागे आदमियों की जरूरत आसानी से नहीं मिटती।" फिर थोड़ा हँसकर कहा—"और उफान की जो बात कह रहे थे छोटे बाबू, सो अक्षय बाबू उपस्थित नहीं, वे होते तो जान जाते कि उफान की ज्यादती किधर है।"

हरेन्द्र ने उत्तर दिया—"आप गाली-गलौज करती रहेंगी तो मैं तंग हो जाऊँगा। यह नहीं होगा भाभी।"

सुनकर आशु बाबू भी हँस दिये, बोले, "असल में हरेन्द्र, मुझे भी ऐसा लगता है कि इस कहानी में लेखिका ने नारियों के रूप के असली प्रयोजन की ओर इशारा किया है।"

"किन्तु क्या यही ठीक है?"

"उचित नहीं, यह बात संसार की ओर देखते सोचना कठिन है।" आशु बाबू ने कहा।

हरेन्द्र उत्तेजित हो बोला—"संसार की ओर देखकर आप चाहे कुछ भी सोचा करें, मनुष्य की ओर देखकर इसे मानना मेरे लिए तो कठिन है।"

"यह हो सकता है। कहानी का बाकी भाग क्या है?"

हरेन्द्र बोला—"इस बात को बेकार समझकर आप उत्तर देने से नहीं बच सकते आशु बाबू, मेरी बात मान लीजिये, नहीं तो मेरी गलती दिखा दीजिये। आपने बहुत देखा और पढ़ा है, बड़े ज्ञानी हैं आप—यह मुझसे नहीं सहा जायेगा कि इस अनिर्दिष्ट ढीली-ढाली बात की आड़ लेकर भाभी जीत जाएँ, कहिये?"

आशु बाबू खुश होते हुए बोले—"तुम ब्रह्मचारी आदमी ठहरे, रूप के विवेचन में हार जाना तुम्हारे लिए शर्म की कोई बात नहीं है।"

"मैं नहीं सुनूंगी।"

आशु बाबू धीरे-धीरे बोले—"तुम्हारी बात अप्रमाणित करने को बहस करने में मुझे शर्म आती है। अच्छा यही है कि नारी के रूप का यहाँ उच्छृंखल

विवेचन न हो। अतीत की कहानी सुनकर एक बहुत ज्यादा पुरानी कहानी याद आ गयी। मेरे अंग्रेज मित्र पौलिश स्त्री को प्यार करते थे। लड़की ज्यादा सुन्दर थी, सिर्फ रूप में ही नहीं, बहुत-से गुणों में भी थी। हम सभी निश्चित जानते थे कि उनके विवाह में कोई बाधा न पड़ेगी। एक दिन एकदम उनके मुँह से पता लगा कि उसकी आयु पैंतीस को पार कर गई है।"

आशु बाबू ने कहा—"नहीं ! मेरा कुछ ऐसा विश्वास है कि पूछने पर वह छिपाती नहीं—मगर पूछने की बात किसी के ध्यान में ही न आयी। उसकी देह की गठन ऐसी थी, चेहरे की भी ऐसी सुकुमार-सी थी और ऐसे मधुर गले की आवाज थी कि कभी किसी को शक ही न हुआ कि उसकी उमर तीस से ज्यादा भी हो सकती है।"

वेला ने कहा—"विस्मय है ! आप लोगों में से किसी के क्या आँखें ही न थीं ?"

"थीं क्यों नहीं। किन्तु संसार के सभी विस्मय आँखों से नहीं पकड़े जा सकते।"

"और उस आदमी की आयु क्या थी ?"

"वह मेरी ही आयु का था—तब शायद अट्ठाईस-उनतीस का होगा।"

"फिर ?"

आशु बाबू ने कहा, "फिर भी घटना बहुत संक्षिप्त है। उस युवक का सारा हृदय एक ही पल में उस प्रौढ़ा रमणी के विरुद्ध मानो पत्थर बन गया। बरसों बीत गये पर आज भी सोचा करता हूँ तो मन में एक तरह की टीस उठती है। कितने आँसू, कितनी हाय-हाय, कितना जाना-आना, कितना मानना-रिझाना होता रहा; पर उसके मन से उस घृणा को संसार से भी हिलाया-डुलाया नहीं जा सका।"

नीलिमा ने पूछा, "परन्तु बात इससे ठीक उलटी होती तो शायद असम्भव न होती ?"

"पर ऐसा ब्याह क्या उस देश में एक भी नहीं होता ? ऐसे पुरुष क्या वहाँ हैं ही नहीं ?"

आशु बाबू ने हँसते हुए उत्तर दिया, "अवश्य हैं। पर इस कहानी की लेखिका ने ऐसे ही पुरुषों को लक्ष्य करके 'अभागे' विशेषण का प्रयोग किया

है। लेकिन अब रात तो बहुत हो गयी अजित, इसकी समाप्ति क्या है?"

अजित ने चौंककर कहा, "मैं तो आपकी ही कहानी की बात सोच रहा था। इतना प्रेम जो सच था कैसे एक पल में झूठा हो गया?—जीवनभर वह औरत यही सोचती रही होगी—'एक दिन : जिस दिन मैं नारी थी।' इसके पहले शायद उस विगत यौवन नारी ने कभी इस बात की चिन्ता भी न की होगी कि नारीत्व की असली समाप्ति नारी के बिना जाने ही कब और कैसे हो जाती है।"

"किन्तु तुम्हारी कहानी का शेष?"

अजित चुप भाव से बोला, "रहने दीजिये। यौवन का यह शेष अभी तक निश्शेष नहीं हुआ—अपने और दूसरों के आगे स्त्रियों की इस प्रतारणा की दुःख-भरी कहानी के साथ समाप्त होती है। अब आज रहने दीजिये, फिर किसी दिन सुनाऊँगा।"

नीलिमा ने सिर को झटका देते हुए कहा, "ना-ना! उसे समाप्त ही रहने दीजिये।"

आशु बाबू भी बोले, "स्त्रियों के लिए यही टाइम सबसे खराब होता है। इसी से शायद असहिष्णु, कपटी, पर-छिद्रान्वेषी—यहाँ तक कि कठोर होकर सब देश के आदमी इन अविवाहित प्रौढ़ा औरतों से बचकर चलना चाहते हैं नीलिमा।"

नीलिमा ने खुश होकर कहा, "यह कहना ठीक नहीं आशु बाबू, किन्तु यों कहिये कि तुम जैसे पति-पुत्रहीना अभागी स्त्रियों से बचकर चलना चाहते हैं।"

आशु बाबू बोले, "पर मजा तो यह है कि जो पति-पुत्र से सौभाग्यवती हैं, वे स्नेह-प्रेम और सौंदर्य-माधुर्य से एक-सी परिपूर्ण हो उठती हैं कि उन्हें पता भी नहीं लग पाता कि जीवन का इतना बड़ा दुःख का समय कब और किस प्रकार निकल गया।"

नीलिमा ने कहा, "उन सौभाग्यवतियों से मैं जलती नहीं आशु बाबू, ऐसी प्रेरणा आज तक मन में कभी नहीं आयी; पर भाग्य-दोष से जो हमारी तरह भविष्य की सारी आशाओं को तिलांजलि दे चुकी हैं? बता सकते हैं कि उनके मार्ग का निर्देश किस ओर है?"

आशु बाबू बोले, "इसके उत्तर में मैं केवल बड़ों की बात की प्रतिध्वनि मात्र कर सकता हूँ नीलिमा, उससे ज्यादा मुझमें शक्ति नहीं। वे कह गये हैं कि दूसरों के लिए अपने को उत्सर्ग कर देना चाहिए।" फिर बोले— "मनोरमा को गये तब दो-तीन दिन हुए होंगे। मन भारी था और शरीर विवश। इस कुर्सी पर मौन पड़ा था। अचानक देखा कि कमल आ पहुँची है। आदर से बुलाकर उसे पास बिठाया। याद है उस दिन मैंने उसके सामने स्त्रियों के आत्मोत्सर्ग के विषय में बताया था, परन्तु उसने उसे बिल्कुल नहीं माना। बोली, 'स्त्रियों के विषय में मैं आपसे अधिक जानती हूँ। वह आदत उनमें है तो, पर वह उनके भीतर की पूर्णता से नहीं आती है, केवल शून्यता से, और उठती है हृदय खाली करके। वह स्वभाव नहीं अभाव है।'

मैं बोला—'कमल, हिन्दू सभ्यता में तुम्हारा विश्वास होता तो आज शायद तुम्हें मैं समझा देता कि त्याग और विसर्जन की दीक्षा में सिद्धि प्राप्त करना ही हमारी सबसे बड़ी सफलता है। कितनी ही विधवा स्त्रियाँ इसी मार्ग से चलकर जीवन को सार्थक कर गयीं।'

इस पर कमल हँसकर बोली, 'आपने करते हुए देखा है? एक-आध नाम तो बताइये।' मुझे नहीं मालूम था कि वह ऐसा प्रश्न कर बैठेंगी, बल्कि मैंने तो यह सोचा था कि शायद वह बात को मान लेंगी। मैं बड़े चक्कर में पड़ गया।"

नीलिमा बोल उठी, "वाह, खूब! आपने मेरा नाम क्यों नहीं बता दिया?"

कैसी कठोर हँसी है! हरेन्द्र और अजित ने सिर झुका लिया और बेला ने दूसरी ओर मुँह फेर लिया।

आशु बाबू बोले, "ना, याद ही नहीं आयी। आँखों के सामने की चीज पर जैसे कभी दृष्टि नहीं पड़ती वैसे ही।

वह फिर बोली, 'सहमरण की बात तो आपके ध्यान में आनी चाहिए। जो स्त्रियाँ जलकर मरती थीं और जो उन्हें प्रेरणा दिया करते थे; दोनों पक्षों का अभियान उस दिन यह सोचकर आकाश से जा छूता था कि वैधव्य-जीवन के इतने बड़े आदर्श का उदाहरण संसार में और है कहाँ?'

इसका मैं क्या उत्तर देता, कुछ समझ में न आया।

वह फिर कहने लगी, 'उत्तर है ही नहीं, देंगे क्या ? लगभग सभी देशों में आत्मोत्सर्ग शब्द से एक तरह का व्यापक और प्राचीन पारमार्थिक मोह है। उस मोह का नशा जिसे चढ़ता है, उसकी दृष्टि में परलोक की असाधारण वस्तु भी इस लोक की संकीर्ण साधारण वस्तु को ढंक देती है—वह उसे सोचने ही नहीं देती कि उसमें नर और नारी इन दोनों में से किसी के भी जीवन का श्रेय है या नहीं। उस दिन वस्तु को स्वतःसिद्ध सत्य की भाँति उसके संस्कार उससे मानो कान पकड़वा के मनवा लेते हैं—उसी प्रकार जैसे कि लगभग सहमरण को उन्होंने मनवा लिया था। बस, अब और नहीं, मैं जाती हूँ।' कहकर उसे सचमुच ही चले जाते देखकर व्यस्त होकर कहा, 'कमल, प्रचलित नीति और सब प्रतिष्ठित सत्य को इस प्रकार चूरा-चूरा कर देना ही मानो तुम्हारा व्रत है। यह शिक्षा जिसने तुम्हें दी है, उसने भारत का कल्याण नहीं किया है।'

मैंने कहा, 'तुम्हारे ही मुँह से सुना है कि वे ज्ञानी विद्वान् आदमी थे। यह बात क्या उन्होंने कभी तुम्हें दिखायी ही नहीं कि अन्त तक सर्वस्व दान करके ही प्राणी सत्य-रूप में अपने को पाता है ? स्वेच्छा से दुःख स्वीकार करने में ही आत्मा की वास्तविक प्रतिष्ठा है।'

कमल ने कहा, 'वे तो यही करते थे कि आदमी का सर्वस्व चूस लेने का जिन्होंने षड्यंत्र रच रखा है—जिन्हें दुःख का अनुभव नहीं, वे ही दुःख स्वीकार करने की महिमा गाने में पंचमुख हो जाया करते हैं। वह संसार के दुर्लंघ्य शासन का नहीं है, वह तो मानो उसे स्वेच्छा से जानबूझकर बुला लाना है—अर्थहीन चाव की चीज के समान केवल एक लड़कों का खेल है वह, उससे बड़ा नहीं।'

मैं तो मारे आश्चर्य से विमूढ़-सा हो गया। बोला—'कमल, तुम्हारे पिता शुद्ध भोग का मन्त्र ही दे गये हैं, और जगत् में जो कुछ महान् है, उस पर विश्वास से न चलने को ही कह गये हैं ?'

कमल ने इस दोषारोपण की शायद मुझसे आशा नहीं की थी। उसने क्रुद्ध होकर उत्तर दिया, 'यह आपकी असहिष्णुता की बात है आशु बाबू। कोई पिता अपनी कन्या को ऐसा मन्त्र नहीं दे सकता। मेरे पिता के प्रति आप कुविचार कर रहे हैं। वे तो साधु पुरुष थे।'

यदि वास्तव में यह शिक्षा उन्हीं की दी हुई हो तो उनके प्रति सुविचार नहीं किया जा सकता। मनोरमा की माँ की मृत्यु के बाद अन्य किसी को मैं प्यार न कर सका, इसे तुमने मेरे मन की दुर्बलता कहा, 'मृत पत्नी की स्मृति के सम्मान को तुमने निष्फल आत्मनिग्रह के रूप में देखा। संयम का तुम्हारे मन में कोई स्थान नहीं।'

'आज भी नहीं है आशु बाबू। जो संयम जीवन के आनन्द को म्लान कर देता है वह तो कोई वस्तु है ही नहीं—केवल मन की लीला है—उसे बाँधने की आवश्यकता है। सीमा मानकर चलना ही तो संयम है। शक्ति की स्पर्द्धा में भी संयम की सीमा को लाँघ जाना संभव है। तब फिर उसे उतनी इज्जत नहीं दी जा सकती। यह बात क्या आपने कभी विचार के नहीं देखी कि अति-संयम भी एक प्रकार का असंयम है?'

विचार के नहीं देखी यह सच था। इसी से विचार कर देखने की बात झट से याद आ गयी। मैंने कहा, 'यह तो केवल तुम्हारी बातों की चाटुकारी है, उसी भोग की वकालत से भरी हुई। मानव की भोग की भूख तो मिटती नहीं वरन् निरन्तर अतृप्त हो बढ़ती है। हमारे शास्त्रकारों का कथन है कि आग में घी देने से जैसे वह और जोर से जलने लगती है वैसे ही भोग-उपभोगी के द्वारा इच्छा बढ़ती ही जाती है, कभी घटती नहीं।' "

हरेन्द्र बोला, "उसके सामने शास्त्र-वाक्य क्यों कहा ? हाँ, फिर ?"

आशु बाबू ने कहा, "तुमने ठीक कहा। सुनकर वह हँस पड़ी और बोली, 'शास्त्र में यह लिखा है ? ऐसा तो होना ही चाहिए। उन्हें यह भी तो मालूम था कि ज्ञान की चर्चा से ज्ञान की इच्छा बढ़ती है, धर्म की साधना से धर्म की प्यास भी निरन्तर बढ़ती जाती है, पुण्य की भावना से पुण्य का लोभ भी निरन्तर अधिक होता जाता है। मालूम होता है मानो अभी बहुत बाकी है। इसकी भी ठीक वही दशा है। यह कामना भी शांत नहीं होती। इसलिए, इस क्षेत्र में भी वे लोग क्यों यही आक्षेप नहीं कर गये ?—उनमें बुद्धि थी, शायद इसलिए ?' "

हरेन्द्र, अजित, वेला और नीलिमा चारों ही खिलखिलाकर हँस पड़े।

आशु बाबू बोले, "हँसने की बात नहीं। लड़की की हँसी और व्यंग्य से मानो मैं हतवाक् हो गया। अपने को सँभालकर बोला, 'नहीं, उनका यह

मतलब नहीं, वे तो यही निर्देश कर गये हैं कि भोग से तृप्ति नहीं हो सकती।'

कमल जरा ठहरकर बोली, 'मालूम नहीं, ऐसे बाहुल्य का संकेत वे क्यों कर गये? यह क्या बाजार में बैठकर 'जात्रा' के गान सुनना है या पड़ोसी के घर का ग्रामोफोन है जो मध्य ही में मालूम हो जाएगा कि जाने दो, केवल तृप्ति हो चुकी, अब आवश्यकता नहीं। इस तृप्ति-अतृप्ति की वास्तविक सत्ता तो बाहर के भोग में है नहीं, उसका स्रोत तो है जीवन के मूल में। वहीं से वह हमेशा, जीवन की आशा, आनन्द और रस जुटाया करती है और शास्त्र का धिक्कार व्यर्थ होकर दरवाजे पर पड़ा रह जाता है—उसे छू तक नहीं पाता।'

मैंने कहा, 'सो हो सकता है, मगर है तो वह शत्रु ही, अतः हमें उसे जीतना तो चाहिए ही।'

कमल ने कहा, 'मगर शत्रु कहके गाली देने से ही तो वह छोटा न हो जायेगा। प्रकृति के लिए पक्के पट्टे के अनुसार वह अधिकारी है—उसके इस अधिकार को केवल विद्रोह करके ही कौन उड़ा सका है? दुःख से घबराकर आत्महत्या करना तो दुःख को जीतना नहीं है? फिर भी मजा यह है कि ऐसी ही युक्तियों के बल पर आदमी अकल्याण के सिंहद्वार पर शांति का मार्ग टटोलता फिरता है। इससे शांति तो मिलती नहीं, शक्ति भी नष्ट हो जाती है।'

सुनकर मुझे ऐसा लगा कि वह शायद केवल मुझको ही कोंच रही है।" इतना कहकर वह क्षण-भर चुप रहे, फिर कहने लगे, "और न जाने मेरा कैसा जी हो गया कि मुँह से चट से निकल पड़ा, 'कमल, तुम अपने जीवन पर तो एक विचार कर देखो।'

बात कहने के बाद स्वयं मुझे खटकी, कमल को भी आश्चर्य हुआ, पर उसे क्रोध नहीं हुआ। शांत चेहरे से बोली, 'मैंने विचारा है और मुझे दुःख भी हुआ है आशु बाबू! पर मैं उस दुःख को जीवन की चरम वस्तु नहीं मानती। शिवनाथ को जो कुछ देना था वे मुझे दे चुके। आनन्द के वे छोटे-छोटे क्षण ही मेरे मन में मणि-माणिक्य के समान एकत्रित हैं। उनके प्रेम की आयु जब समाप्त हो गयी, शांत मन से मैंने विदा दे दी। आप लोगों ने सोचा कि इतने बड़े अपराध को कमल ने क्षमा कैसे कर दिया? मगर मेरे मन में उस दिन

उनके अपराध से बढ़कर अपने ही दुर्भाग्य की बात थी।'

मुझे लगा कि मानो उसकी आँखों में आँसू झलक आये हैं। उसमें और मुझमें भेद ही कितना-सा था।

मैंने कहा, 'कमल, ऐसी मणि-माणिक्यों का संचय मैंने भी अपने मन में किया है, वही तो मेरे लिए सात राज्यों का धन है—अब हम लोग किसके वास्ते क्षोभ करने जायें, बतलाओ?'

कमल मौन होकर देखती रह गयी।

मैंने पूछा, 'इस जीवन में क्या अब तुम और किसी को प्यार कर सकती हो कमल? इस तरह समस्त देह-मन से स्वीकार कर सकती हो और किसी को?'

कमल ने उत्तर दिया, 'जीवित तो इसी आशा से हूँ आशु बाबू! बादलों की ओट में आज यदि सूर्य अस्त हो गया, तो क्या वह अँधकार है और कल प्रभात के अरुण प्रकाश को अपनी आँखें बंद करके यह कह दूँगी कि यह प्रकाश नहीं अँधकार है? जीवन को क्या बच्चों के खेल-खेल में नष्ट कर दूँ?'

'परन्तु प्रभात का प्रकाश समाप्त करके रात तो फिर भी आ सकती है?' मैं बोला।

'तब भी प्रभात पर विश्वास करके रात बिता दूँगी।' कमल ने कहा।

मैं तो आश्चर्य से सन्न होकर बैठा रहा, कमल चली गयी।

बच्चों का खेल! सोचा था, शोक में से निकलकर हम दोनों की चिन्ताधारा शायद एक स्रोत में मिल गयी है; परन्तु देखा सो बात नहीं है। उसके दृष्टिकोण से जीवन का अर्थ ही अलग है—हमारे साथ उसका कोई मेल ही नहीं। वह न तो अदृष्ट को ही मानती है और न भूत की स्मृति उसके आगे का मार्ग ही रोकती है। उसके लिए वर्तमान ही सब-कुछ है—जो आज तक आया नहीं है। इसी से उसकी आशा भी जितनी निर्विकार है, आनन्द भी उतना ही सत्य है। केवल इसी कारण से कि किसी ने उसके जीवन को धोखा दिया है, वह अपने जीवन को धोखा देने या वंचित रखने के लिए किसी प्रकार भी प्रस्तुत नहीं।"

सब-के-सब चुप रहे।

फिर जरा ठहरकर कहने लगे, "वास्तव में जीवन में भी कोई बच्चों का

खेल नहीं। भगवान् का इतना बड़ा दान इसलिए नहीं आया। ऐसी बात भी भला मैं कैसे कह सकता था कि कोई एक आदमी किसी दूसरे के जीवन में विफल हो गया तो उसी शून्यता की जीवन-भर जय-घोषणा करता रहे?"

वेला ने धीरे से कहा, "बात तो बड़ी सुन्दर है।"

हरेन्द्र ने खड़े होकर कहा, "रात बहुत हो गयी, और वर्षा भी रुक गयी है। अब आज्ञा दीजिये।"

अजित और हरेन्द्र दोनों नमस्कार करके चल दिये। वेला सोने चली गयी। नीलिमा चुपचाप चल दी।

वेला और नीलिमा के सोने के कमरे आमने-सामने थे। कपड़े बदलने से पहले शीशे के सामने जाकर खड़े होने पर दोनों नारियों के मन में, एक ही समय में, ठीक एक ही प्रश्न उठ खड़ा हुआ—'एक दिन : जिस दिन मैं नारी थी।'

बाईस

कमल दस-बारह दिन हुए आगरा छोड़कर कहीं बाहर चली गयी है। आशु बाबू को उसकी बहुत आवश्यकता है।

कमल का चाय के बगीचे का एक घनिष्ठ परिचित साहब वहाँ काम छोड़कर टूँडला में रेलवे की नौकरी करने आया है। उसके स्त्री नहीं है, दो-ढाई साल की एक छोटी लड़की है। उसकी घर-गृहस्थी की व्यवस्था करने में कमल को इतना समय लग गया।

आज सवेरे वह घर लौटी है और तीसरे पहर उसके लिए मोटर भेजकर आशु बाबू प्रतीक्षा कर रहे हैं।

नीलिमा सहसा बोल उठी, "उस आदमी के घर में एक नन्ही-सी लड़की के अलावा और कोई स्त्री नहीं—फिर भी उसके घर कमल ने साधारणतया दस-बारह दिन बिता दिये।"

आशु बाबू मौन रहे।

नीलिमा फिर बोली, "वह तो मालूम होता है, नदी की मछली है जिसके

पानी में भीजने न भीजने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। खाने-पहनने की उसे कोई चिन्ता नहीं, शासन करने वाला कोई है नहीं, आँखें लाल करने वाला समाज नहीं—बिलकुल ही स्वतन्त्र है।''

आशु बाबू बोले, ''बात तो ठीक ऐसी ही है।''

''उसके रूप-यौवन की सीमा नहीं, बुद्धि भी वैसी ही तेज है। राजेन्द्र को उपद्रव के भय से जब कहीं स्थान नहीं मिला तो उसने बिना संकोच अपने घर में स्थान दिया। जो किसी से नहीं बना, उसने किया। दूसरी औरतों को न जाने कितनी-कितनी बातों का विचार करना पड़ता है!''

''विचार तो रखना ही चाहिए।'' आशु बाबू बोले।

''हम भी चाहें तो वैसी ही स्वतन्त्र हो सकती हैं।'' बेला बोली।

नीलिमा ने कहा, ''नहीं हो सकतीं। मैं भी नहीं और आप भी नहीं। संसार हम पर जो कलंक लगायेगा उसे धो डालने की शक्ति हममें नहीं है।''

''कमल को देखने के पहले समाज के अत्याचार का वास्तविक रूप हमें कभी नहीं दिखायी दिया। स्त्रियों की मुक्ति, स्त्रियों की स्वतन्त्रता तो आज-कल हर स्त्री-पुरुष की जबान पर है, पर वह जबान आगे एक कदम भी नहीं बढ़ती। ऐसा क्यों, जानती हैं? अब मालूम हुआ है कि स्वाधीनता तत्त्व-विचार से नहीं मिलती, न्याय-धर्म की दुहाई देने से भी नहीं मिल सकती, सभा में खड़े होकर पुरुषों के साथ कलह करने से भी नहीं मिलती—वास्तव में स्वाधीनता लेने-देने की वस्तु नहीं। कमल ने स्पष्ट कहा है कि वह स्वाधीनता हमारी अपनी पूर्णता से स्वयं आती है। बाहर से अण्डे का छिलका तोड़कर भीतर का जीव मुक्ति नहीं पाता, बल्कि मर जाता है। हमसे उसका यही अन्तर है।''

वह फिर बोली, ''अभी अचानक उसके बाहर चले जाने से सभी को भय हुआ, परन्तु यह आशंका स्वप्न में भी न हुई कि वह कोई ऐसा काम कर सकती है जिससे उसकी मानहानि हो। बताइये, हर मनुष्य के मनों में इतना विश्वास किस प्रकार पा सकती है? यह गौरव न हमें पुरुष ही देते और न औरतें ही।''

आशु बाबू बोले, ''वास्तव में यह सच है नीलिमा।''

बेला ने पूछा, ''यदि कमल का पति होता तो क्या करती?''

नीलिमा ने कहा, "सेवा करती, रसोई बनाती, घर-द्वार बुहारती, बच्चों का पालन करती। अभी अकेली है और रुपये-पैसे से भी तंग है, नहीं तो वैसी दशा में समय के अभाव में वह हम लोगों से मिलने-जुलने तक न आ सकती थी।"

नीलिमा फिर कहने लगी, "कमल तब घर-गृहस्थी के काम में पूर्णरूप से लग जाती—आनन्द की जलधारा बनकर घर-गृहस्थी उसके सिर पर से बहती परन्तु जिस दिन समझती कि पति का काम बोझ बनकर उसके सिर पर सवार हो गया है उस दिन कोई भी उसे एक दिन भी पकड़कर नहीं रख सकता।"

आशु बाबू धीरे से बोले, "यह ठीक है।"

थोड़ी देर बाद नौकर ने कमल के आने की सूचना दी।

कमल ने आकर सबको नमस्कार किया और आशु बाबू के पास कुर्सी पर बैठ गयी, बोली, "सुना है कि आप मेरे लिए व्याकुल हैं। क्या पता था कि आप मुझे इतना चाहते हैं, वरना जाने के पूर्व सूचना अवश्य दे जाती।"

आशु बाबू उसकी बात का कुछ भी उत्तर न दे सके। कमल ने समझा कि उनके स्वस्थ होने के पूर्व वह चली गयी। इसी से उनका यह अभिमान है। फिर उसने उनकी उँगलियों में अपनी चम्पा की कली-सी उँगलियाँ उलझाते हुए कान के पास मुँह ले जाकर चुपके से कहा, "मुझसे गलती हुई, मैं क्षमा चाहती हूँ।" परन्तु इसका भी जब कोई उत्तर न मिला तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ और साथ ही भय भी लगा।

बेला ने खड़े होकर विनय के साथ कहा, "यदि मालूम होता कि आप आयेंगी तो आज मालिनी का निमन्त्रण मैं स्वीकार न करती, परन्तु अब तो जाना ही होगा।"

"मालिनी कौन?" कमल ने पूछा।

नीलिमा ने उत्तर दिया, "मजिस्ट्रेट साहब की स्त्री।" फिर बेला की ओर मुख करके कहा, "सचमुच आपका जाना आवश्यक है। न जाने से उनकी गाने की संगोष्ठी तो मिट्टी हो जायेगी।"

"मिट्टी नहीं होगी—परन्तु हाँ, दुःख अवश्य होगा। उन्होंने और भी दो-चार सज्जनों को आमन्त्रित किया है। अच्छा, अब मुझे आज्ञा दीजिये

और किसी दिन बातचीत होगी। नमस्कार।"

वेला चली गयी।

"सात-आठ दिन से तुम्हें हम लोग खोज रहे थे। हमारा यह केवल खोजना ही नहीं था बल्कि मेरी ओर से यह तुम्हें पाने के लिए मन-ही-मन की तपस्या थी।" नीलिमा बोली।

कमल स्नेह के मिठास की कल्पना करके हँसती हुई बोली, "इस सौभाग्य का कारण? मैं तो सबकी त्याज्य हूँ दीदी, सभ्य समाज में तो कोई मुझे चाहता नहीं।"

'दीदी' का सम्बोधन कमल ने बिलकुल नया किया था।

नीलिमा की आँखें सहसा भर आयीं, पर वह चुप रही।

आशु बाबू बोले, "सभ्य समाज की इच्छा होगी तो वह इसका उत्तर देगा। मैं जानता हूँ जीवन में किसी ने यदि वास्तव में तुम्हें चाहा है तो नीलिमा ने ही। इतना प्रेम तुमने शायद किसी से न पाया होगा कमल।"

कमल ने कहा, "यह मैं जानती हूँ।"

नीलिमा बोली, "कमल, तुम्हें आज दो समाचार सुनाती हूँ।"

कमल हँस के बोली, "सुनाइये।"

नीलिमा आशु बाबू पर संकेत करके बोली, "ये शरमा रहे हैं इसी से मैं ही सुनाती हूँ। मनोरमा के साथ शिवनाथ का ब्याह होना निश्चित हो गया है—पिता और भावी श्वसुर की अनुमति और आशीर्वाद पाने के लिए दोनों के पत्र आये हैं।"

कमल का चेहरा फक पड़ गया पर तुरन्त अपने को सम्भालकर बोली, "इसमें इनके लिए लज्जा की क्या बात है?"

नीलिमा ने कहा, "इनकी लड़की जो है। पत्र पाने के बाद इनके मुँह से केवल यही बात बार-बार निकलती है कि आगरे में इतने आदमी मरे, भगवान् ने मुझ पर दया क्यों नहीं की? मेरे अलावा और किसी से कुछ कह नहीं सके हैं। रात-दिन मन-ही-मन केवल तुम्हीं को पुकार रहे हैं। शायद है कि तुम इससे निकलने का कोई मार्ग बता सको।"

कमल कुछ देर बाद बोली, "एक समाचार यह हुआ और दूसरा?"

नीलिमा कुछ परिहास के ढंग पर बोली, "दूसरा हमारे मुखर्जी

महाशय स्वस्थ हो गये हैं और उसके बाद उनके भाई और भाभी ने मिलकर उनकी इच्छा के सर्वथा विरुद्ध उनका व्याह करा दिया है और बड़ी शर्म के साथ उन्होंने वह सम्वाद आशु बाबू को अपने पत्र में लिखा है—बस।" इतना कहकर नीलिमा हँस दी।

उसकी इस हँसी में न तो सुख ही था और न कौतुक ही।

कमल उसके मुँह की ओर देखकर बोली, "दोनों व्याह की खबरें हैं। एक हो गया है, और एक का होना तय हो गया—लेकिन मेरी पुकार क्यों हुई? इनमें से किसी को भी तो मैं रोक नहीं सकती।"

नीलिमा ने कहा, "रुकवाने की सोच करके ही शायद ये तुम्हें खोज रहे थे; लेकिन मैं तो मन से भेंट होने पर तुम्हारी प्रसन्न-दृष्टि प्राप्त करने की ही इच्छा कर रही थी। इस देश में स्त्रियों के रूप में जन्म लेकर भाग्य को दोष देना व्यर्थ है। आज ससुराल और मायके दोनों में कहीं स्थान नहीं। रही आशु बाबू की बात, सो इनकी दया की सीमा नहीं, जितने दिन ये यहाँ हैं, किसी प्रकार दिन कट जायेंगे, परन्तु बाद में मुझे तुम्हीं को आश्रय देना होगा, और न मिला तो मर जाऊँगी। अब पुरुषों से कृपा की भिक्षा न माँगूंगी।" कहते-कहते उसका स्वर भारी हो गया।

नीलिमा ने फिर कहा, "आजकल बीच-बीच में न जाने कहाँ छिप जाती हो?—मुझे इससे भय लगता है।"

कमल ने कहा, "परन्तु आवश्यकता पड़ने पर मुझे खोजना नहीं होगा दीदी, मैं आपको स्वयं ढूँढ़ने निकल पड़ूँगी, आप निश्चिन्त रहें।"

आशु बाबू ने कहा, "इसी प्रकार मुझे भी निश्चिन्त करो कमल।"

"आज्ञा दीजिये, मैं आपके लिए क्या कर सकती हूँ?"

"तुम्हें और कुछ नहीं करना होगा कमल, जो करना होगा, मैं स्वयं ही करूँगा। मुझे केवल इतना उपदेश दो कि पिता के कर्तव्य के विरुद्ध मैं कोई अपराध न कर बैठूँ। इतना ही नहीं कि इस व्याह में मैं केवल राय ही नहीं दे सकता, बल्कि मैं उसे होने भी नहीं दे सकता।"

कमल ने कहा, "राय आपकी है, यह आप न दें; पर व्याह नहीं होने देंगे, यह कैसे कर सकते हैं आप? लड़की तो आपकी अब बालिग हो चुकी है।"

आशु बाबू बोले, "मैं जानता हूँ; परन्तु लड़की को जानना चाहिए कि बाप से बड़ा नहीं हुआ जा सकता। मतामत के साथ सम्पत्ति भी मेरी अपनी वस्तु है। आशु वैद्य की निर्बलता का परिचय ही लोगों ने पाया है, पर उसका दूसरा पहलू लोग भूल गये हैं।"

कमल ने कहा, "लेकिन उसका परिचय सबसे पहले अपनी लड़की को ही देना होगा क्या ?"

"हाँ, पागल लड़की को।" वे क्षण-भर चुप रहकर बोले, "वह मेरी मातृहीन एकमात्र सन्तान है। जिस प्रकार मैंने उसे आदमी बनाया है, इसे वे ही जानते हैं जिन्होंने पितृ-हृदय की सृष्टि की है; लेकिन पिता का केवल प्रेम ही नहीं है। कमल, उसका कर्तव्य भी तो है ? शिवनाथ को मैं पहचान गया हूँ। उसके सत्यानाशी ग्रास से लड़की को बचाने का इसके सिवा और कोई मार्ग ही मुझे नहीं सूझता। कल उन लोगों को चिट्ठी में लिख दूँगा कि इसके बाद मणि मुझसे एक कौड़ी की भी आशा न रखे।"

'पर उस चिट्ठी पर यदि विश्वास न करें ? सोच लें कि यह क्रोध क्षणिक रहेगा—तब ?"

"तब वे उसका फल भोगने लगेंगे। सूचना देना कर्तव्य है, मेरा विश्वास करने की बात उनकी।"

"यही क्या आपने निश्चय किया है ?"

"हाँ।"

"संसार में यह पुरानी व्यवस्था है कि एक का जब दूसरे के मत से मेल नहीं खाता, तो जो शक्तिशाली है, वह निर्बल को दण्ड दे डालता है।"

आशु बाबू बोले, "यह क्या कहती हो कमल ? सन्तान के साथ पिता की शक्ति-परीक्षा ? कठोर होना कितना कठिन है, पिता ही जानता है। इतना कठोर संकल्प उसे गलती से बचाने को ही मैंने किया है। क्या तुम इसे नहीं समझ सकी हो ?"

कमल बोली, "समझ तो सकी हूँ, यदि आपकी बात न मानकर वह भूल कर बैठे, तो उसका दुःख भी तो वही पायेगा। यदि उस दुःख को दूर न कर सकें तो इसलिए क्या आप क्रोध में आकर उसके दुःख के बोझ को और भी बढ़ा देंगे ? अपनी लड़की को किसी दिन लौटने का कोई मार्ग ही खुला

न रहने देंगे ?"

आशु बाबू की दोनों आँखों से आँसुओं की बड़ी-बड़ी बूंदें ढुलक पड़ीं। वह कुछ बोल न सके। फिर रुके हुए कण्ठ को साफ करके धीरे-धीरे कहा, "लौटने का मार्ग आज तो है, बाद में नहीं। पति को त्यागकर लौटना ईश्वर करे, मुझे अपनी आँखों से न देखना पड़े।"

कमल ने कहा, "यह अनुचित है, बल्कि मैं तो यह कामना करती हूँ कि भूल यदि अपनी आँखों से दिखायी दे जाय तो उस दिन उसके संशोधन का मार्ग किसी भी ओर से बन्द न रहे।"

मनोरमा उनकी लड़की न होकर और कोई होती तो यह बात सहज ही में उनकी समझ में आ जाती; परन्तु एकमात्र सन्तान के भयंकर भविष्य की दुर्गति की कल्पना ने कमल के सम्पूर्ण आवेदन को विफल कर दिया।

वह फिर बोले, "कमल, इस ब्याह को रोकना ही होगा। क्या इसका कोई भी उपाय तुम नहीं सोच सकतीं ?"

"ना, इस विषय में मैं आपकी कोई सहायता न कर सकूँगी। नहीं जानती कि उत्तराधिकारी से वंचित करने का भय दिखाने से वह डरेगी या नहीं। पर यदि डर जाये तो मैं कहूँगी कि आपने खिला-पिलाकर और स्कूल-कालेज की किताबें रटाकर लड़की को बड़ा भले ही किया हो पर उसे मनुष्य नहीं बनाया। उस कमी को दूर करने का समय दैव ने आज ला दिया तो मैं उसके बीच में मध्यस्थ बनने क्यों जाऊँ।"

आशु बाबू बोले, "तो क्या तुम यह कहना चाहती हो कि रोकना मेरा कर्तव्य नहीं ?"

कमल ने कहा, "कम-से-कम भय दिखाकर रोकना नहीं। फिर भी मैं इतना कह सकती हूँ कि यदि मैं आपकी लड़की होती और शायद बाधा पाती, तो इस जीवन में फिर कभी आप पर श्रद्धा नहीं कर सकती थी। मेरे पिता ने मेरा निर्माण इसी प्रकार किया है।"

आशु बाबू बोले, "असम्भव नहीं कमल, तुम्हारा कल्याण उन्होंने इधर ही देखा होगा। पर मुझे नहीं दीखता। मैं पिता हूँ कमल, और स्पष्ट देख रहा हूँ कि शिवनाथ से वह पूर्ण प्रेम नहीं कर सकती—यह केवल इसका मोह है, एक नशा है।"

कमल ने कहा, "नशे में ही चिन्ता की बात है; पर जब नशा उतर जायेगा और वह स्वस्थ हो जायेगी, तब भय कहाँ रहेगा ? तब वह स्वस्थता ही उसकी रक्षा करेगी।"

आशु बाबू ने अस्वीकार करते हुए कहा, "यह सब वाक्-चातुर्य है, युक्ति नहीं। सत्य इससे बहुत दूर है। भूल का दण्ड उसे पाना ही होगा।"

कमल ने कहा, "मैं जानती हूँ कि भूल का दण्ड उसे पाना ही पड़ता है। पर उस दण्ड पाने में दुःख है, लज्जा नहीं, क्योंकि मणि ने किसी को ठगना नहीं चाहा। यही भरोसा मैंने आपको दिलाना चाहा कि भूल मालूम होने पर यदि जहाँ की तहाँ लौटना चाहे, तो उसे सिर नीचा करके न आना पड़े।"

"मैं जानता हूँ कि मणि से भूल अवश्य होगी; परन्तु उसके बाद जियेगी क्या लेकर ? किस आधार पर दिन काटेगी ?"

"ऐसी बात न कहिये। दुःख पाना मनुष्य का अन्तिम परिणाम नहीं। एक हानि दूसरे लाभ से पूरी हो जाती है। नहीं तो, मैं भी भला कैसे जी सकती थी ? बल्कि आप तो यह आशीर्वाद दीजिए कि किसी दिन भूल यह मालूम पड़े तो वह अपने को मुक्त कर सके, तब उसे कोई लोभ, कोई भय भयभीत न कर सके।"

कुछ सोचकर आशु बाबू बोले, "पिता की दृष्टि से मैं मणि का भविष्य जीवन अँधकारमय देख रहा हूँ। इस पर भी तुम कहती हो कि बाधा नहीं डालनी चाहिए।"

"मैं माँ होती तो अवश्य मानती। उसके भविष्य के भय से शायद आप जैसा ही दुःख पाती, फिर इस प्रकार रुकावट डालने को प्रस्तुत न होती।"

आशु बाबू फिर बोले, "मैं नहीं समझ पाया कमल। शिवनाथ का चरित्र मणि जानती है—एक दिन इस घर में आने देने में भी उसे आपत्ति थी; परन्तु आज जिस सम्मोहन से उसकी बुद्धि ढक गई है, वह प्रेम नहीं, जादू है, मोह है—वह छल हर प्रकार से दूर करना पिता का कर्तव्य है।"

इतनी देर में कमल इस बात को समझी कि जिस प्रकार उनकी दृष्टि है उधर हजारों वर्ष देखते रहने पर भी सत्य का साक्षात्कार नहीं हो सकता और समझ गई कि गणित फैलाकर ये लोग प्रेम का परिणाम निकालना

चाहते हैं। अपने जीवन में आशु बाबू ने अपनी पत्नी को अत्यन्त एकांत स्वभाव से प्रेम किया था। उनकी स्त्री को मरे काफी समय बीत गया, फिर भी आज तक शायद उस प्रेम की जड़ उनके हृदय में शिथिल नहीं हुई। संसार में इसकी तुलना बहुत कम मिलती है। फिर भी यह सब-कुछ सत्य होते हुए भी, यह मानना पड़ता है कि ये दोनों पृथक् जाति के हैं।

इन दोनों धाराओं की भलाई-बुराई का प्रश्न उठाकर तर्क करना निष्फल है। अपने दाम्पत्य जीवन में एक दिन के लिए भी पत्नी के साथ आशु बाबू का मतभेद नहीं हुआ—हृदय में मालिन्य तक ने स्पर्श नहीं किया। निर्विघ्न शांति और अविच्छिन्न सुख-चैन के साथ जिनका दीर्घ विवाहित जीवन बीता है उनके गौरव और माहात्म्य को भला कौन तोड़ सकता है?

आशु बाबू ने फिर कहा, "कमल, तुम्हारे पिता यूरोपीय थे, फिर भी तुमने कभी उन लोगों में बहुत दिन बिताये हैं, उनका बहुत कुछ देखा है। बहुत-से प्रेम के विवाहोत्सव में मैं शामिल हुआ हूँ, और फिर सम्बन्धों के टूटने पर मैंने आँसू पोंछे हैं। वहाँ जातीं तो तुम भी ऐसा ही देखतीं।"

कमल बोली, "बिना गये भी देखा है आशु बाबू। सम्बन्धविच्छेद उस देश में प्रतिदिन होते हैं—परन्तु जैसे यह सच है वैसे ही उन उदाहरणों से वहाँ के समाज का रूप भी नहीं समझा जा सकता। विचार का यह तरीका ही नहीं आशु बाबू।"

आशु बाबू अपनी गलती को समझकर बोले, "उसे जाने दो और हमारे देश की ओर ध्यान से देखो। यहाँ वर-कन्या पर दायित्व नहीं। होता है माँ-बाप और गुरुजनों पर। बड़े-बूढ़ों की एक शांत और अविचलित मंगल-भावना जीवन-भर सदा उनके साथ बनी रहती है।"

कमल ने कहा, "मगर मणि तो मंगल का हिसाब लगाने नहीं बैठी आशु बाबू, उसने चाहा है प्रेम। एक का हिसाब गुरुजनों की संयुक्तियों से मिल जाता है, पर दूसरे का भाग हृदय के देवता के सिवा और कोई नहीं जानता लेकिन मैं तर्क करके व्यर्थ आपको दुखी कर रही हूँ। जिसके घर में पश्चिम की खिड़की के सिवा और सब खिड़कियाँ बंद हैं, वह भारत में सूर्य का आविर्भाव नहीं देख पाता। देख पाता है केवल संध्या का अवसान; परन्तु संध्या के उस चेहरे और रंग का सादृश्य मिलकर यदि वह प्रभात पर तर्क

करता रहे तो सिर्फ बात ही बढ़ेगी, मीमांसा नहीं हो सकती। अब रात हो रही है। मैं जाती हूँ।"

कमल उठ के खड़ी हो गई तो आशु बाबू व्याकुल कण्ठ से कह उठे, "जाओ मत कमल, और जरा बैठो। मुँह में अन्न नहीं जाता, आँखों में नींद नहीं—निरन्तर हृदय के भीतर ऐसा हो रहा है कि मैं तुम्हें समझा नहीं सकता। तो भी एक बार कोशिश कर देखूँ, तुम्हारी बातें यदि सचमुच ही समझ सकूँ। तुम यथार्थ ही कह रही हो कि मैं चुप रहूँ और यह बुरी घटना हो जाने दूं?"

कमल ने कहा, "मनोरमा यदि वास्तव में उनको प्रेम करती है तो मैं उसे बुरा नहीं कह सकती।"

"मगर यही तो मैं तुम्हें सौ-सौ बार समझाना चाहता हूँ कमल कि यह मोह है, प्रेम नहीं।"

कमल ने कहा, "केवल मोह ही नष्ट होता है, ऐसा नहीं आशु बाबू, वास्तविक प्रेम भी संसार में नष्ट हो जाया करता है। इसी से अधिकांश प्रेम के विवाह क्षणस्थायी हो जाते हैं, इसीलिए उस देश की इतनी बदनामी है और इतने विवाह-विच्छेद के मामले वहाँ चला करते हैं।"

आशु बाबू सहसा कह उठे, "यही कहो, यही कहो। यह तो मैं अपनी आँखों से देख आया हूँ।"

नीलिमा अवाक् होकर उनकी ओर देखती रही।

आशु बाबू ने कहा, "मगर हमारे देश की विवाह-प्रथा? उसे तुम क्या कहोगी? वह तो सारे जीवन में बना रहता है, कभी नहीं टूटता?"

कमल ने कहा, "टूटने का कारण भी नहीं आशु बाबू, क्योंकि वह यौवन का पागलपन नहीं, बहुदर्शी बड़े-बूढ़ों के हिसाब से की गई व्याख्या है। स्वप्न का मूलधन नहीं, आँखों देखी पक्के आदमी की जाँच-पड़ताल की चीज है। गणित करने में कोई बड़ी गलती जब तक न हो तब तक उसमें दरार नहीं पड़ती। क्या इस देश में और क्या उस देश में, सभी जगह वह बड़ी मजबूत चीज होती है। जीवन-भर वह वज्र की तरह टिकी रहती है।"

आशु बाबू एक लम्बा सांस छोड़कर मौन हो रहे।

नीलिमा ने धीरे से पूछा, "कमल, तुम्हारी बात ही यदि सच हो,

वास्तविक प्रेम भी यदि भूत के प्रेम के समान ही टूट जाता हो, तो मनुष्य खड़ा किस पर होगा ? उसके पास आशा करने के लिए फिर क्या रह जायेगा ?''

कमल ने कहा, ''रह जायेगी उसकी एकान्त मधुर स्मृति और रह जायेगा उसी की बगल में व्यथा का समुद्र। आशु बाबू के सुख और शांति की सीमा नहीं थी; लेकिन उससे अधिक उनकी पूँजी नहीं है। भाग्य ने जिन्हें इतनी-सी पूँजी देकर विदा कर दिया है, उनके लिए हम क्षमा करने के अलावा और कह ही क्या सकती हैं दीदी ?''

जरा ठहरकर बोली, ''बाहर से सहसा लोग ऐसा समझ लेते हैं कि गया, अब सब गया और इष्ट-मित्रों के भय का ठिकाना नहीं रहता। फिर तो वे दोनों हाथों से उसका मार्ग रोकना चाहते हैं, और निश्चित समझ लेते हैं कि उसके हिसाब के बाहर सिवा शून्य के और कुछ है ही नहीं, पर शून्य नहीं होता दीदी, सब चला जाने पर भी जो बचा है, वह मणि-माणिक्य के समान मुट्ठी में आ जाता है, मगर हाँ, दर्शकों का दल जब चीजों की भर-मार के मार्ग-भर के जुलूस को देखता है तो निकला नहीं जा सकता तब वे उसे धिक्कारते हुए अपने-अपने घर लौट जाते हैं और कहते हैं यही तो सर्वनाश है।''

नीलिमा ने कहा, ''कहने का कारण है, कमल। वास्तव में मणि-माणिक्य सबके लिए नहीं होता, और न वह सर्वसाधारण के लिए है। पाँव से लेकर चोटी तक सोने-चाँदी के गहने मिले बिना जिसका मन नहीं भरता वे तुम्हारी तरह उस मुट्ठी-भर मणि-माणिक्य की कद्र नहीं समझेंगी। उनके लिए बहुत-सा बोझ, बहुत-सा आयोजन, बहुत-सी घिरनी चाहिए, तब कहीं वे चीज के मूल्य का अनुमान लगा सकते हैं। पश्चिम का दरवाजा खोल सूर्योदय दिखाने की कोशिश व्यर्थ होगी कमल, बन्द करो यह चर्चा।''

नीलिमा फिर आशु बाबू से बोली, ''ना, सत्य क्या केवल कमल के विचारों में ही है, और पिता की शुभ बुद्धि में नहीं है ? ऐसा हो ही नहीं सकता। कमल के लिए जो सत्य है, मणि के लिए वह असत्य भी हो सकता है। स्त्री के दुश्चरित्र पति को त्याग देने में चाहे जितना भी हो, यह मैं गर्व के साथ कह सकती हूँ कि बेला के पति परित्याग में रत्ती-भर भी सत्य

नहीं। सत्य न तो पति त्यागने में है और न पति की दासी-वृत्ति करने में —ये दोनों ही केवल दायें-बायें के मार्ग हैं। गन्तव्य स्थान तो अपने-आप ढूंढ़ लेना पड़ता है, तर्क करके उसका पता नहीं लगाया जा सकता।"

कमल चुपचाप उसकी ओर देखती रही।

नीलिमा कहने लगी, "सूर्य का उदय होना ही उसका सब-कुछ नहीं है, उसका अस्त होना भी इतना ही महत्त्व रखता है। रूप और यौवन का आकर्षण यदि प्रेम का सर्वस्व होता, तो लड़की के सम्बन्ध में बाप की दुश्चिन्ता की कोई आवश्यकता ही न थी—मगर ऐसा नहीं है। मैंने किताबें नहीं पढ़ीं, ज्ञान-बुद्धि भी कम है, तर्क से मैं तुम्हें समझा नहीं सकती, लेकिन मुझे मालूम होता है कि असल चीज का पता तुम्हें अभी मिला ही नहीं, श्रद्धा, भक्ति, स्नेह, विश्वास—इन्हें भयभीत करके नहीं पाया जा सकता; बड़े दुःख से और बहुत देर में ये दिखाई देते हैं कमल, तब रूप-यौवन का प्रश्न जाने कहाँ मुँह छिपाकर दुबक जाता है, कुछ पता ही नहीं पड़ता।"

तीक्ष्ण बुद्धि कमल एक क्षण में यह समझ गई कि उपस्थित आलोचना में उसका यह कथन असत्य है। यह न तो प्रतिवाद ही है और न समर्थन ही। ये सब नीलिमा की अपनी बातें हैं। उसने देखा कि उज्ज्वल दीपलोक में नीलिमा के बिखरे हुए घने काले बालों की श्यामल छाया ने उसके चेहरे पर एक अकल्पित सुन्दरता ला दी है और उसकी प्रशान्त आँखों की सजल दृष्टि स्निग्धता से ऊपर तक लबालब भर उठी है।

कमल ने मन-ही-मन यह कहा, "पूछना व्यर्थ है कि यह नवीन सूर्योदय है या थके हुए सूर्य का अस्तंगत आभा से आकाश की जो दिशा रंगीन हो उठी है—पूर्व-पश्चिम दिशा का निर्णय किये बिना ही उसके लिए मेरा श्रद्धा के साथ नमस्कार है।"

दो-तीन मिनट बाद आशु बाबू सहसा चौंककर बोले, "कमल, तुम्हारी बातों पर एक बार विचार कर देखूँगा, पर हमारी बातों की भी तुम इस प्रकार अवज्ञा मत करना।"

कमल ने अनमनी की भाँति जरा हँसकर सिर हिला दिया, लेकिन उसने नीलिमा को उत्तर दिया। बोली, "जिस चीज से एक बच्चे को बहकाया जा सकता है, उसी से लाख बच्चों को भी बहकाया जा सकता

है। संख्या का बढ़ जाना ही बुद्धि बढ़ने का प्रमाण नहीं दीदी। एक दिन लोगों ने कहा था कि नर-नारी के प्रेम का इतिहास ही मानव-सभ्यता का असली इतिहास है, उन्होंने सबसे बढ़कर सत्य का पता पाया था; किन्तु जिन लोगों ने यह घोषणा की कि पुत्र के लिए पत्नी की आवश्यकता है, वे स्त्रियों का केवल अपमान ही करके शांत नहीं हुए बल्कि अपने बड़े होने का मार्ग भी वे चिरकाल के लिए बन्द कर गए। चूँकि उस असत्य पर ही उन्होंने सारी भीत उठाई थी इसलिए आज तक भी उनकी सन्तान को दुःख का कोई किनारा नहीं मिला।"

"पर यह बात मुझे क्यों कह रही हो कमल?"

"क्योंकि आज मुझे आपको ही जताने की सबसे अधिक आवश्यकता है। हमें चाटुकारी वाक्यों के कई जेवर पहनाकर जिन लोगों ने यह प्रचार किया था कि मातृत्व में नारी की चरम सार्थकता है, उन लोगों ने समस्त नारी-जाति को धोखा दिया था। जीवन में किसी भी अवस्था में क्यों न पड़ना पड़े दीदी, पर इस गलत नीति को कभी न मानना। यह मेरा अंतिम अनुरोध है; अब मैं जाती हूँ।"

आशु बाबू ने थके हुए स्वर में कहा, "अच्छा, जाओ। नीचे तुम्हारे लिए गाड़ी खड़ी है, पहुंचा आयेगी।"

कमल ने दुःख के साथ कहा, "आप मुझसे प्रेम करते हैं—पर हम दोनों में कहीं भी तो मेल नहीं।"

नीलिमा ने कहा, "है क्यों नहीं कमल, पर वह बनावटी मेल नहीं, विधाता की सृष्टि का मेल है। चेहरा अलग-अलग है, पर खून एक है। इसी से तो बाहर का अनैक्य चाहे जितनी ही गड़बड़ी क्यों न पैदा करे, भीतर का प्रचण्ड आकर्षण कभी नहीं छुटता।"

कमल ने आशु बाबू के पास आकर कंधे पर हाथ रखकर धीरे-धीरे कहा, "लड़की के बदले आप मेरे ऊपर क्रोधित न हो सकेंगे यह मैं कहे देती हूँ।"

आशु बाबू केवल मौन होकर बैठे रहे।

"अच्छा, मैं जाऊँ?" कमल ने कहा।

आशु बाबू ने कहा, "जाओ।"

और वह चली गई।

तेईस

अजित अनर्गल बक रहा था। कमल मौन थी।

कमल सिलाई करने में लगी थी, मानो उसे सिर उठाकर अजित की बात सुनने का अवकाश ही नहीं।

दो-तीन मिनट तो सन्नाटे में बीते।

फिर अजित खुद ही बोला, "विस्मय तो यही है कि शिवनाथ का व्यवहार तुम्हारी दृष्टि में भी नहीं पाया, इस पर क्या कोई विश्वास कर सकता है ?"

इस पर कमल ने हँसकर कहा, "तो जरा देखो और कहो, कर सकते हैं या नहीं ?"

अजित ने कहा, "तुम्हारी ही बात ठीक है। उस पर विश्वास इसलिए किया, उसी का यह परिणाम हुआ।"

"अच्छा, यह भी बताइये कि आपने अपने संदेह का अच्छा परिणाम पाया ?" कमल ने कहा।

इसके बाद अजित बहुत-सी बातें दस-पन्द्रह मिनट तक करता रहा।

अन्त में थककर बोला, "कभी हाँ, कभी ना—पहेली के सिवाय क्या तुम सीधी बात समझतीं ही नहीं ?"

कमल बोली, "स्त्रियाँ पहेली ही ज्यादा पसन्द करती हैं।"

"मैं इस आदत की प्रशंसा नहीं कर सकता। साफ कहना भी तो सीखो। उसके बिना संसार में काम नहीं चलता।"

"आप भी पहेली समझना जरा सीखिये। नहीं तो दूसरे पक्ष वालों को भी ऐसे सुविधा नहीं होती है। साफ कहने वाले वक्ता हैं तो समाचार-पत्र में छपने वाले छापते हैं। लेखक हुए तो अपने ग्रन्थ की भूमिका लिखते हैं, यदि नाट्यकार हुए तो अपने नाटक के नायक ही बनकर अभिनय करते हैं, पर यह मैं नहीं जानती कि यदि वे प्रेम करते हैं तो क्या करते हैं।"

अजित ने कहा, "बोलने वाला या लिखने वाला नाट्यकार मैं नहीं हूँ, इसलिए उनके बारे में कुछ नहीं कह सकता; परन्तु वे प्रेम करते हैं तो क्या

करते हैं, यह मैं जानता हूँ। वे शैव-विवाह का पाखण्ड नहीं करते, किन्तु जाने हुए मार्ग पर चलते हैं। उन्हें विचारना पड़ता है, उनके कारण कहीं उनके सम्बन्धियों को दु:ख उठाना पड़े, आश्रय के लिए किसी मालिक-मकान का मुँह न देखना पड़े, असम्मान की चोट—"

कमल बीच में ही रोककर बोल उठी,"अच्छा, समझ गयी। यानी अंत-से-अंत तक इमारत को ऐसी ठोस बनाते हैं कि कब्र के मुर्दे के अतिरिक्त उसमें जीवित आदमी के लिए साँस लेने का स्थान न हो। वे बेसुध पुरुष हैं—"

दरवाजे के बाहर से आवाज आयी, "क्या हम लोग अन्दर आ सकते हैं?"

यह आवाज हरेन्द्र की थी।

तभी हरेन्द्र ने आकर कहा, "सतीश को तुमने आश्रम में एक दिन देखा था। आशा है कि भूली न होगी।" साथी की ओर इशारा किया।

कमल ने कहा, "ना, उस दिन यह सफेद कपड़े पहने थे, आज नीले।"

हरेन्द्र ने कहा, "यह तो उच्चतर धरती पर आरोहण की बाह्य घोषणा ही है और कुछ नहीं। काशीधाम से सद्य:प्रत्यागत हुए हैं—दो घण्टे से अधिक नहीं हुए। एक तो थके हुए हैं, और दूसरे तुम्हारे प्रति खुश नहीं, तब भी मुझे इधर को आता देख आवेग का संवरण न कर सके। यह हम ब्रह्मचारी लोगों के मत का औदार्य है, और कुछ नहीं।"

उसने भीतर की ओर झाँका, और वह कहने लगा, "अरे, आप हैं, किंतु दूसरा नया पैदा हुआ ही जानो।" यह कहकर वह अन्दर घुसा, दूसरी कुर्सी सतीश को दिखाता हुआ बोला,"बैठो," और आप खाट पर जाकर बैठ गया।

यह देखकर कि कमल खड़ी है, और तीसरा आसन है नहीं, सतीश बैठने में नुक्ताचीनी कर रहा था।

हरेन्द्र इस बात को समझ ही न पाया सो बात नहीं, तब भी वह हँसकर बोला, "बैठो जी सतीश, जान न जायेगी। काशी हो आने के कारण तुम चाहे जितने भी ऊँचे चढ़ गये हो; पर इस बात को न भूलो कि जग में उससे भी ऊंचा कोई स्थान है।"

कमल हँसकर बोली, "किसी पर व्यंग्य करना आपको शोभा नहीं देता हरेन्द्र बाबू। आश्रम की प्रतिष्ठा भी आप हैं और महंत-महाराज भी आप

ही हैं। अतः—"

हरेन्द्र ने बीच में कहा, "आपका अतः एकदम व्यर्थ है। आश्रम की इज्जत शायद मैं ही हूँ; पर महंत और महाराज ये ही दोनों मित्र सतीश और राजेन्द्र हैं। एक का काम है मुझे उपदेश देना और दूसरे का मेरी न मानकर चलना। एक का तो पता नहीं और दूसरे लौटे हैं बहुत अधिक तत्त्व संचय करके। उनके साथ कदम मिलाकर मैं नहीं चल सकता।"

कमल ने कहा, "सुना है शायद आप आश्रम बन्द कर रहे हैं।"

"सच सुना है। तुम्हारे बातों के बाण मुझसे सहे नहीं जाते। सतीश की धारणा है कि तुम भारतीय नारी की निगूढ़ सत्य चीज को पहचान नहीं सकतीं। तुम्हें मैं यही बता देना चाहता हूँ। मुझे सूचना मिली है कि अजित-कुमार बहुत-सा खर्च करके ऐसे और भी दस-बीस आश्रम स्थान-स्थान पर खोल देना चाहते हैं। उनके पास धन भी है और देने की शक्ति भी, इसलिए उनमें से एक का नायकत्व तो सतीश को मिल ही जायेगा।"

कमल खुश होकर बोली, "भारत की सत्य चीज को मुझे समझाने पर सतीश बाबू को क्या लाभ होगा? हरेन्द्र बाबू से मैंने आश्रम समाप्त करने को नहीं कहा, और रुपयों के दम पर सारे भारत में आश्रम खोलने को भी अजित बाबू को मैं मना नहीं करूँगी, मेरा विरोध तो केवल उसी सच मानने में है। उसमें किसी की क्या हानि है?"

सतीश विनीत स्वर में बोला, "तर्क के लिए नहीं, किन्तु शिक्षार्थी के नाते मैं आपसे यदि कुछ प्रश्न करूँ तो क्या आप उनका उत्तर देंगी?"

"किन्तु आज तो मैं बहुत थकी हुई हूँ सतीश बाबू।"

उस पर कुछ भी ध्यान न देकर सतीश ने कहा, "हरेन्द्र भाई की आपके प्रति सीमातीत श्रद्धा है। आश्रम टूटना कोई हानि नहीं, पर आपकी बातों से इनका यदि मन टूट गया, तो हानि पूरी न हो पायेगी।"

कमल चुप ही थी।

सतीश कहता गया, "राजेन्द्र को आप जानती हैं, मेरा मित्र है। असली विषय पर मेल न होता तो हमारी मित्रता नहीं होती। उसी की तरह मैं भी चाहता हूँ कि भारत की सर्वांगीण भक्ति से स्वजाति का परमकल्याण हो। उसी आशा से हम लड़कों को सुध-बुध करके गढ़ना चाहते हैं। हमें मृत्यु के

बाद स्वर्ग का लोभ नहीं, परन्तु नियमबन्धन के विना दृष्टि नहीं हो सकती। दुःख वहाँ अवश्य है—और रहेगा। क्यों, श्रम करके ही महान् चीज को पाने का स्थान ही 'आश्रम' कहलाता है। इससे उपहास की तो कोई बात नहीं।"

कोई उत्तर न पाकर सतीश दुवारा वोला, "भारतीय आश्रमों में भारत के अतीत के प्रति निष्ठा और श्रद्धा होनी चाहिए। समय के वल पर ही मरणोन्मुख भारत को जीवन-दान दिया जा सकता है। आश्रम के आचरण और अनुष्ठान के द्वारा हम अपने इसी विश्वास और इसी श्रद्धा को वनाये रखना चाहते हैं।"

सतीश के भाषण में गहरा प्रभाव था। उसकी ओर निष्पलक नजर से देखते रहने के कारण धार्मिक जोश से अजित रोमांचित हो उठा। आश्रम के विगत गौरव के वर्णन से विश्वास और अविश्वास के वीच आँधी के वेश से झूलने लगा।

उसी के मुँह की तरफ तेज दृष्टि रखकर सतीश बोला, "हरेन्द्र दा, यह अटल सत्य है कि आश्रमों में ही हमारे नव-जन्म-लाभ का विज्ञान है। आप आश्रम तोड़ना चाहते हैं, पर तोड़ना ही क्या बड़ी बात है? क्या वनाना उससे बड़ी वात नहीं?"

फिर कमल के मुँह की ओर देखकर वोला, "जीवन में कितने आश्रम आपने अपनी आँखों से देखे हैं और कितनों के साथ आपका सही आंतरिक परिचय हुआ है?"

कमल बोली, "आप लोगों के आश्रम के अतिरिक्त और किसी के साथ मेरा कोई परिचय नहीं।"

"तव आपको क्या ज्ञान हो सकता है?"

कमल ने हँसकर कहा, "आँखों से क्या सभी कुछ देखा जा सकता है? आप लोगों के आश्रम का 'श्रम' मैंने देखा है, किन्तु उससे किसी महान् वस्तु के प्राप्त करने की बात तो ओट में रह गयी।"

सतीश ने कहा, "आप तब हँसी उड़ा रही हैं।"

उसका क्रोध-भरा चेहरा देखकर हरेन्द्र स्निग्ध स्वर में बोल उठा, "ना ना, सतीश, हँसी नहीं, यह विनोद है। स्वभाव है।"

सतीश बोला, "स्वभाव? पर स्वभाव कहने से ही बचत नहीं हो जाती

हरेन्द्र दा। यह तो भारत के अतीत काल का जो भी कुछ नित्य-पूजनीय और नित्य-आचरणीय तत्त्व है, उसी की निन्दा है--उसी के प्रति अश्रद्धा दिखाता है। इसकी तो उपेक्षा भी नहीं की जा सकती।"

हरेन्द्र बोला, "इस बात पर इनसे बहुत बार बहस हो चुकी है। इनका कहना है कि अतीत की बात बेकार होती है। अपने गुण से केवल पुरानी होने से वह पूज्य नहीं हो सकती। जो बर्बर जाति किसी जमाने में अपने बूढ़े माँ-बाप को जीवित ही गाड़ देती थी, वह आज भी यदि उस पुराने अनुष्ठान की दुहाई देकर मनुष्य के कर्तव्य का निर्देश करना चाहे, तो उसे भी तो रोका नहीं जा सकता, सतीश।"

सतीश क्रोध में आकर ऊँची भावना में कह उठा, "पुराने भारत के साथ बर्बरों की तुलना नहीं कर सकती हरेन्द्र दा।"

हरेन्द्र ने कहा, "तो मैं समझता हूँ; पर यह तो युक्ति नहीं सतीश, यह तो गले के जोर की बात है।"

सतीश फिर क्रोध से बोला, "हमने जीवन में भी न सोचा था हरेन्द्र दा कि आप भी एक दिन इतने नास्तिक नहीं बन जायेंगे।"

हरेन्द्र ने कहा, "मैं नास्तिक नहीं हूँ सतीश। यह गाली देकर मेरा अपमान ही किया जा सकता है।"

सतीश ने शर्मिंदा होकर कहा, "अपमान मैंने नहीं किया, हरेन्द्र दा। आप जानते हैं, हम आपकी कितनी भक्ति करते हैं; परन्तु भारत की शाश्वत तपस्या पर भी आपका अविश्वास देखकर दुःख होता है। भारत का प्राचीन धर्म ही हमारी वस्तु है। इस ध्वंसोन्मुख जाति को फिर जिलाने का केवल वही रास्ता है।"

हरेन्द्र ने कहा, "यह तुम्हारा विश्वास है--और इसकी कीमत भी तुम्हारे तक सीमित है। एक दिन ऐसी ही बात के उत्तर में कमल ने कहा था, संसार के मनुष्य-युग में एक दिन विशिष्ट अस्थि, विराट देह और विराट क्षुधा वाले एक जीव की सृष्टि हुई थी; उसी तन और क्षुधा से वह भारत को जीतता फिरता था, तब एक दिन ऐसा आया कि उसी तन और उसी क्षुधा से उसकी मौत हो गयी। एक दिन सच के उपादानों ने दूसरे दिन झूठ के उपादान बनकर उस जगह से निश्चित कर दिया --जरा भी रोड़ा न

अटकाया। उसकी हड्डी पत्थर में परिणत हो गयी और अब वह केवल तत्त्वज्ञ विद्वानों की गवेषणा की वस्तु रह गयी है।''

सतीश बोला, "तो क्या हमारे पूर्वपुरुषों का आदर्श भ्रांत था? उनके तत्त्व-निरूपण में सच नहीं था?''

हरेन्द्र ने कहा, "हो सकता है उस दिन में सच हो, आज भी वह सच है, कैसे कहा जा सकता है। उस दिन जो सोने का रास्ता था आज वही हमें यमराज के घर पहुँचाता है, इसमें क्रोध का कोई मतलब नहीं सतीश।''

सतीश गुस्से को दबाकर बोला, "यह आप लोगों की आधुनिक शिक्षा का परिणाम है, और कुछ नहीं।''

हरेन्द्र बोला, "यह भी हो सकता है; पर आधुनिक शिक्षा यदि कल्याण-मार्ग दिखा सके, तो शर्म की कोई बात नहीं।''

थोड़ी देर चुप रहकर धीरे से सतीश बोला, "पर मैं तो इसमें महालज्जा पाता हूँ। भारत का ज्ञान और इसके पुराने तत्त्व भारत के प्राण हैं। उस तत्त्व को छोड़कर यदि देश को स्वाधीनता प्राप्त करनी हो, तो वह स्वाधीनता भारत की जीत नहीं, हार होगी। वह हार का नामान्तर है। उससे मौत भली।''

अब की बार उत्तर कमल ने दिया। उसमें न मजाक था, न कठोरता का भाव।

उसने कहा, "सतीश बाबू, आपने अपने जीवन में जैसे अपने-आपको समर्पित कर दिया है, अपने संस्कारों को भी वैसे ही यदि समर्पित कर सकते, तो आज यह बात भी सोचने में आपको कठिनाई नहीं होती कि किसी विशेष भाव के लिए या किसी वैशिष्ट्य के लिए आदमी नहीं है, परन्तु आदमी के लिए ही उस तत्त्व की महिमा की प्रचेष्टा से लाभ ही क्या होगा? भारत के मत का गीत न भी हो पाये तो ही क्या हुआ, मानव की जीत तो होती ही। तब स्वतन्त्रता पाकर इतने नर-नारी धन्य हो जायेंगे, जरा नये तुर्की की तरफ तो देखिये। जब तक वह अपनी पुरानी रीति-नीति, आचार-विचार और परम्परागत तथा पुराने अनुष्ठान मार्ग को सच जानकर पकड़े रहा, तब तक उसकी बार-बार हार ही होती रही। आज उसने क्रांति में से सच को पाया है—उसका सारा-का-सारा कूड़ा-करकट बह गया है—किसी की हिम्मत है

कि आज उसका मजाक करे? और आनन्द यह कि किसी दिन उसके इस पुराने मत और मार्ग ने ही उसे विजय दी थी, ऐश्वर्य दिया था, कल्याण दिया था, मनुष्यत्व दिया था। पहले उसने सोचा था कि वही शायद चिरंतन सच है। उसे वर्तमान का ध्यान भी न था। आज उसका मोह समाप्त हो गया हो, पर मानव जी उठा। ऐसे दृष्टांत और भी हैं, और भी होंगे। सतीश बाबू, आत्म-विश्वास और आत्म-अहंकार दोनों एक चीज नहीं हैं।"

सतीश ने कहा, "जानता हूँ। परन्तु ऐसा भी हो सकता है कि पश्चिम के लोगों ने मानव के प्रश्न का उत्तर दिया है, वह शेष उत्तर न हो? यह भी तो हो सकता है कि उनकी सभ्यता का भी किसी दिन ध्वंस हो जाय?"

कमल बोली, "हाँ, मेरी धारणा है कि अवश्य होगा।"

"उसके बाद?"

कमल ने कहा, "उसमें लज्जा की कोई बात नहीं, सतीश बाबू। गलत ठीक का शत्रु नहीं, ठीक का शत्रु उससे भी ठीक होता है। वह 'उससे ठीक' जिस दिन ठीक के सामने आता है तो उसी के हाथ में राजदण्ड सौंपकर उसे अलग हो जाना पड़ता है। एक दिन शक, हूण और तातारों ने आकर भारत को शारीरिक शक्ति से जीत लिया, किन्तु यहाँ की सभ्यता को वे नहीं बाँध सके। वे अपने-आप ही बँध गये। इसका कारण वास्तव में यह था कि वे अपने-आप ही छोटे थे। पर मुगल पठानों की परीक्षा बाकी रह गयी, क्योंकि इसी बीच फ्रांसीसी और अंग्रेज आ धमके, किन्तु उनकी आय आज भी समाप्त नहीं हुई है। भारत को इसका उत्तर उन्हें एक दिन देना ही होगा। चलो, इस प्रश्न को जाने दीजिये—लेकिन पश्चिम के ज्ञान-विज्ञान और सभ्यता के सामने भारतवर्ष को आज यदि नीचा देखना पड़े तो उससे अहंकार को चोट अवश्य पहुँचेगी, किन्तु यह मैं निश्चय से कह सकती हूँ कि उससे उसके कल्याण को चोट न पहुँचेगी।"

सतीश ने जोर से कहा, "ना-ना-ना। जिसको भक्ति नहीं, श्रद्धा नहीं, विश्वास की नींव जिनकी रेत पर है, उनके सामने यह कहना तो सर्वनाश को निमन्त्रण देना होगा।" कहकर उसने कनखियों से हरेन्द्र को देखा और कहा, "ठीक इसी तरह एक दिन बंगाल में—अभी अधिक दिन नहीं हुए—विदेश के विज्ञान विदेश के दर्शन और विदेश की सभ्यता को बड़ा मानकर

कुछ सत्य भ्रष्ट और आदर्श भ्रष्ट लोगों ने अपनी अधूरी शिक्षा के विजातीय अहंकार से अपने देश का जो कुछ अपना था उसी को वेकार करके मन को विक्षिप्त सदाचारी वना डाला था।"

कमल वोली, "हरेन्द्र वावू, कुछ ऐसे जन होते हैं जो भूत तो नहीं मानते, पर भूत से डरते अवश्य हैं। आप उन्हीं में से एक हैं और इसी का नाम है भगवान् के घर चोरी। इतना गलत और कुछ हो ही नहीं सकता। इस देश में आश्रम जैसी संस्थाओं के लिए न कभी रुपयों के लिए कमी होगी और न लड़कों का अकाल पड़ेगा, अतः आपके विना सतीश वावू का··· मेरे पिता ईसाई थे; पर मैं कौन हूँ, इस वात की खोज न तो कभी उन्होंने की और न कभी मैंने। उन्हें इसकी कोई आवश्यकता नहीं थी और मुझे कुछ ध्यान न था। मैं तो यही इच्छा करती हूँ कि धर्म को आमरण इसी तरह भूली रह सकूँ। परन्तु अभी-अभी उच्छृंखल और अनाचारी कहकर आपने जिनका अनादर किया और वंदनीय कहकर नमस्कार किया, उनमें से स्वदेश के सर्वनाश में कितना दान अधिक है, इस प्रश्न का उत्तर लोग किसी-न-किसी दिन अवश्य चाहेंगे।"

सतीश के तन पर मानो किसी ने जोर से चावुक लगा दिया। तीव्र दुःख से वह एकदम उठकर खड़ा हो गया और वोला, "आप जानती हैं उनके नाम? कभी सुने हैं किसी के मुँह से?"

"ना।" कमल ने दृढ़ स्वर में कहा।

"तो पहले जान लीजिए।"

"पर नाम की इच्छा मुझे नहीं है। नाम जानने को ही मैं जानने का अन्त नहीं मान सकती।" कमल वोली।

उसके उत्तर से सतीश अपनी आँखों से केवल अवज्ञा और घृणा वरसाता हुआ तेज कदमों से वाहर चला गया।

वह क्रोध में चला गया है, इसमें कोई संदेह नहीं रहा।

इस अप्रीतिकर घटना को कुछ हलका करने के खयाल से कुछ देर बाद हरेन्द्र ने हंसने की कोशिश करते हुए कहा, "कमल की परोसी हुई चीज तो खाई जा सकती है, पर पचाते समय पेट की नाड़ियों में मानो मरोड़ उठने लगता है। हमारी किसी भी पुरानी वस्तु पर न तो इन्हें विश्वास है

और न सहानुभूति ।"

कमल ने कहा, "विश्वास तो कर सकती हूँ ।"

हरेन्द्र ने कहा, "मैंने तय कर लिया है कि आश्रम जरूर उठा दूंगा। मुझे सन्देह हो गया है कि इस शिक्षा से बच्चे आदमी बनकर देश की स्वतंत्रता और परम कल्याण को दुबारा प्राप्त कर सकेंगे या नहीं; किन्तु समझ में नहीं आता कि गरीब घरों के जिन लड़कों को सतीश घर छुड़ाकर ले आया है उनका क्या करूँ ? सतीश के हाथ सौंप देना भी मुझसे नहीं हो सकता ।"

कमल ने कहा, "भार देने की आवश्यकता नहीं । आवश्यकता है कि उनके द्वारा कोई असाधारण या अलौकिक बात करवा डालने की इच्छा न रखी जाय ।"

हरेन्द्र ने कहा, "इसके बारे में भी तब मैं निःशंक नहीं हो सकता हूँ कमल। मास्टर लगाकर मैं उन्हें पढ़ा-लिखा सकता हूँ, पर इसका मुझे डर है कि जिस संयम और त्याग की शिक्षा उन्हें दी जा रही थी, उससे दूर करके भी उन्हें मनुष्य बनाया जा सकता है या नहीं ।"

कमल ने कहा, "हरेन्द्र बाबू, सभी बातें जो आप लोग इस एकांत रूप से सोचा करते हैं, इसी से किसी प्रश्न का सीधा उत्तर आप लोगों को मिल नहीं सकता। आपका मत है कि बच्चे या तो देवता बनेंगे या फिर बिलकुल ही उच्छृंखल पशु बन जायेंगे । संसार का सरल स्वाभाविक सौन्दर्य आपकी दृष्टि के सामने आता ही नहीं। आप लोग दूसरों के हाथ के मनगढ़ंत अन्याय की अनुभूति से अपने चित्त को शंका से और मलिन रखा करते हैं। उस दिन मैं आश्रम में जो कुछ देख आई हूँ वह क्या समय और त्याग की शिक्षा है ? उन लोगों को मिला क्या है ? केवल दूसरों का दिया दुःख का बोझ ही तो मिला है, अनधिकार मिला है और मिली है प्रवंचित की क्षमा। चीन देश की लड़कियों के पाँव आरम्भ से छोटे बनाये जाते हैं। मैं इसको सह नहीं सकती हूँ कि पुरुष-वर्ग उन्हें सुन्दर बतावे, पर वहाँ की स्त्रियाँ ही जब अपने उन पंगु और विकृत पैरों की सुन्दरता पर अपने-आप मोहित हो जाती हैं, उसके बाद फिर सुधार की कोई इच्छा बाकी नहीं रह जाती। इस समय आप लोग अपने कृतित्व पर स्वयं ही खुश हो रहे हैं। मैंने उन

लोगों से पूछा, 'कैसे रहते हो तुम लोग, बताओ ?'

लड़कों ने एक साथ उत्तर दिया, 'बहुत अच्छी तरह से।'

उन्होंने एक बार भी न सोचा कि 'अच्छी तरह' किसे कहते हैं। सोचने-विचारने की ताकत भी उनकी जाती रही है—ऐसा पक्का शासन है उन पर। नीलिमा जीजी ने मेरी ओर देखकर शायद उनका उत्तर चाहा था, पर छाती पीटकर रोने के सिवाय मुझे इस बात का कोई उत्तर ही ढूंढ़े न मिला। मन-ही-मन सोचने लगी, 'ये ही लोग क्या आगे देश की स्वतन्त्रता अर्जन करेंगे ?' ''

हरेन्द्र ने कहा, ''बच्चों की बात को जाने दो; लेकिन राजेन्द्र, सतीश आदि तो युवक हैं ? ये तो सर्व-त्यागी हैं ?''

कमल ने कहा, ''राजेन्द्र को आप लोग पहचान नहीं पाये हैं, लिहाजा उसकी बात छोड़िये। बात वास्तव में यह है कि वैराग्य यौवन के सर पर ही अधिक सवार होता है। वह जहाँ हिम्मत बनकर बैठा है वहाँ विरुद्ध शक्ति के बिना वश में कौन करेगा ?''

हरेन्द्र ने कहा, ''क्रोध में मत होना कमल—तुम्हारे खून में तो वैराग्य है ही नहीं। तुम्हारे पिता यूरोप निवासी थे, और उन्हीं के हाथों से तुम्हारा शिशु-जीवन बनाया गया है। माँ इस देश की थीं पर उनका वर्णन न करना ही अच्छा है। तन के रूप के सिवाय शायद उनकी ओर से कोई वस्तु तुम्हें नहीं मिली। उसी से, पश्चिम की शिक्षा से तुमने भोग को ही जीवन की सबसे बड़ी वस्तु जान लिया है।''

कमल ने कहा, ''क्रोध मैं नहीं करती, हरेन्द्र बाबू, पर ऐसी बात आप न कहें। केवल भोग को ही जीवन की सबसे बड़ी वस्तु जानकर जग में कोई भी जाति बड़ी नहीं हो सकती। मुसलमानों ने भी जिस दिन ऐसी ही गलती की, उस दिन उनका त्याग भी गया और भोग भी छूट गया। ऐसी गलती यदि पश्चिम वालों ने की तो वे भी मरेंगे। पश्चिम भी तो कोई संसार से अलग नहीं है। यदि वे इस विधान की बुराई करके चलेंगे तो उनके भी जीने का तब कोई मार्ग नहीं रह जायेगा।''

थोड़ी देर चुप रहकर दुबारा कहने लगी, ''किन्तु तब मन-ही-मन मुस्कराकर आप लोग कहेंगे, क्यों, कहा था न ! हम तो पहले ही समझते

थे कि यह थोड़े ही दिनों की उछल-कूद है इनकी, सो किसी-न-किसी दिन समाप्त हो जायेगी। किन्तु, इधर देखो, हम लोग आरम्भ से अंत तक वैसे ही टिके हुए हैं।''

कमल का हँसी से सारा-का-सारा चेहरा खिल उठा।

हरेन्द्र बोला, ''ऐसा ही हो, वही दिन आये।''

कमल ने कहा, ''ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए हरेन्द्र बाबू, इतनी बड़ी जाति यदि नीचे गिरे, तो उसकी धूल से ही जगत् के बहुत-से प्रकाश-स्तंभ म्लान हो जाएँगे। मानव-जाति के लिए वे बहुत ही बुरे दिन साबित होंगे।''

हरेन्द्र उठ खड़ा हुआ, बोला, ''उसके लिए अभी समय है, पर अपने बुरे दिनों का आभास मैं अभी से पा रहा हूँ। बहुत-से प्रकाश-स्तम्भ बुझते से दिखाई पड़ रहे हैं। अपने पिता से तुमने उनको बुझाने की ही विद्या सीखी है कमल, जलाने की विद्या नहीं सीखी। अच्छा, अब चला जाय। अजित बाबू को अभी देर लगेगी?''

अजित उठने के लिए थोड़ा हिला-डुला, पर उठा नहीं।

कमल ने कहा, ''हरेन्द्र बाबू, प्रकाश-स्तम्भ का प्रकाश रास्ते पर न पड़-कर यदि आँखों पर गिरे, तो ठोकर खाकर नाली में गिरना पड़ता है। उस प्रकाश को जो बुझा देता है उसे हितैषी मित्र ही जानना चाहिए।''

हरेन्द्र ने तेज साँस ली, और कहा, ''बहुत बार ध्यान आता है कि तुम्हारे साथ बुरे पल में मित्रता हुई थी। विश्वास की इतनी शक्ति तो मुझ में नहीं है जितनी कि तुममें है फिर भी मैं कह सकता हूँ कि वे विद्या, बुद्धि, ज्ञान और पौरुष से चाहे जितने चकाचौंध हुए, भारत के सामने वह कुछ भी नहीं—सब तुच्छ है।''

कमल ने कहा, ''यह तो ऐसी बात हुई जैसे कक्षा के अन्दर प्रमोशन के पाने वाले विद्यार्थी का एम० ए० पास करने वाले को अधिकार देना। हरेन्द्र बाबू, 'आत्म-सम्मान-ज्ञान' जैसे एक शब्द है वैसे ही 'बड़ाई करना' भी एक शब्द है।''

हरेन्द्र को क्रोध आ गया। बोला, ''शब्द तो बहुत हैं, किन्तु यह भारत ही एक दिन सारे जग का गुरु था। बहुतों के पुरखे तो तब शायद पेड़ों की डालियों पर उछला करते थे और तब एक दिन ऐसा आयेगा जब भारतवर्ष

ही जग के शिक्षक का आसन ग्रहण करेगा।—करेगा, अवश्य ही करेगा।"

कमल को क्रोध नहीं आया। वह हँस पड़ी। बोली, "आज तो वे लोग डालियों पर से नीचे उतर आये हैं। परन्तु यदि इस बुराई का सुख उठाना हो कि किसके पूर्व पुरुष जगत् के गुरु थे और कौन-से महा-भविष्य काल में उनके वंशधर, फिर पैतृक पेशा धारण कर लेंगे, तो अजित बाबू को जाकर पकड़िये। मुझे बहुत-से काम करने हैं।"

हरेन्द्र ने कहा, "अच्छा, नमस्कार।"

और वह व्यथाजनित गम्भीर चेहरा लिए घर से निकल गया।

चौबीस

आठ दिन बाद।

कमल आशु बाबू के घर पर मिलने गई।

जिन लोगों को लेकर यह कहानी है, उनके जीवन में इधर कुछ दिनों में एक उलट-फेर हो गया है; परन्तु न तो एकदम कहा ही जा सकता है और न अप्रत्याशित ही।

इधर कई दिनों से जो आकाश में इधर-उधर से हवा में उड़ते हुए बादलों के टुकड़े इकट्ठे हो रहे थे, उनके परिणाम के बारे में विशेष संशय न था।

फाटक पर दरवान हाजिर नहीं है।

नीचे के बरामदे में आम तौर पर कोई बैठता न था, तब भी वहाँ कुछ मेजें और कुर्सियाँ पड़ी रहती थीं, दीवार पर बड़े आदमियों की कई एक तस्वीरें भी थीं, किन्तु आज वे सब नहीं हैं। केवल छत से काली-कलूटी लालटेन लटक रही है। स्थान-स्थान पर कूड़ा-करकट जमा हो रहा है। उसे साफ करने की अब शायद आवश्यकता ही नहीं रह गई है।

न जाने कैसा एक श्रीहीन वातावरण है, जिसे देखकर सहज ही अंदाजा किया जा सकता है कि मकान-मालिक अब यहाँ से पलायन कर रहे हैं।

कमल सीधी आशु बाबू की बैठक में जा पहुँची। दिन अस्त हो रहा

था। आशु बाबू आरामकुर्सी पर पैर फैलाये पड़े थे। कमरे में और कोई न था। परदा हटने के शब्द से उन्होंने आँखें खोलीं और वे उठकर बैठ गए।

कमल के आने की शायद उन्होंने आशा नहीं की थी; इससे कुछ अधिक खुश होकर उन्होंने अभ्यर्थना की, बोले, "कमल हो ! आओ बेटी, अन्दर आओ।"

उनके चेहरे की ओर देखकर कमल के हृदय में चोट पहुँची। उसने कहा, "यह क्या ? आप तो बूढ़े से दिखाई देने लगे हैं, चाचाजी ?"

आशु बाबू हँस दिये, बोले, "बूढ़ा ? वह तो भगवान् का आशीर्वाद है कमल। अन्दर-ही-अन्दर जबकि उमर बढ़ती है, आदमियों के लिए इससे ज्यादा दुर्भाग्य और नहीं हो सकता कि बाहर से बूढ़ा न दिखाई दे। यह अवस्था बचपन में ही गंजे हो जाने जैसी करुण है।"

"लेकिन तबीयत भी तो अच्छी नहीं दिखाई पड़ रही ?"

"ना।"

किन्तु इसके पश्चात् फिर उन्होंने आगे प्रश्न करने का समय ही नहीं दिया, "तुम कैसी हो, बताओ ?"

"अच्छी हूँ। मैं तो कभी बीमार नहीं पड़ती चाचाजी !"

"यह तो मालूम है। न तन और न मन, तुम्हारे दोनों ही बीमार नहीं होते। कारण इसका यह है कि तुम्हें लोभ नहीं। तुम कुछ भी चाहतीं नहीं, इसी से भगवान् ने तुम्हें दोनों हाथों से सब-कुछ उँडेलकर दे दिया है।"

"मुझे क्या देते देखा आपने, बताओ तो ?"

आशु बाबू ने कहा, "यह डिप्टी साहब की अदालत नहीं जो धमकी देकर मामला जीत जाओगी। अच्छा, कुछ भी हो, पर मैं मानता हूँ कि फिर मैंने स्वयं भी कुछ कम नहीं पाया। यही तो आज सवेरे से थैली झाड़-कर और फर्क मिला-मिलाकर देख रहा था। देखा कि शून्य के अंकों ने ही इतने दिनों से तयबील फुला रखी थी। लोग केवल गलती से ही सोचा करते हैं बेटी, गणितशास्त्र के अनुसार शून्यों का भी मूल्य है। मैंने तो देखा कि उनका कोई भी मूल्य नहीं। एक ही अंकों की दाहिनी ओर वे यदि पंक्ति-वार खड़े हो जाएँ तो उस एक को ही एक करोड़ बना देते हैं, पर यदि केवल शून्य ही अपनी गिनती के जोर से चाहें कि करोड़ हो जाएँ तो नहीं हो

सकते। जहाँ कोई अंक नहीं, वहाँ तो वे केवल माया ही हैं। मेरा पाना भी ठीक उन शून्यों को पाने जैसा है।"

कमल ने तर्क नहीं किया।

वह उनके पास कुर्सी खींचकर बैठ गई। आशु बाबू ने अपना दाहिना हाथ कमल के हाथ पर रखते हुए कहा, "बेटी, अबकी बार तो सचमुच ही मेरे जाने की बारी आ गई, कमल, परसों तक चला जाऊँगा। बूढ़ा हो गया—न जाने अब फिर कब भेंट होगी; पर इतना तुम भरोसा दो कि मुझे कभी भूलोगी नहीं।"

कमल ने कहा, "ना, भूलूंगी नहीं और भेंट भी होगी फिर कभी। आपको अपनी थैली खाली जान पड़ती है; पर मैंने अपनी थैली शून्यों से नहीं भर रखी है चाचाजी, उसमें सचमुच की वस्तु भी है—माया नहीं।"

इस बात का आशु बाबू ने कोई उत्तर नहीं दिया पर मन में समझ लिया कि लड़की ने रंचमात्र भी झूठ नहीं कहा।

कमल ने कहा, "मैं घर में घुसते ही जान गई कि आप यहाँ अवश्य हैं पर आपका मन यहाँ से विदा हो गया है इसलिए अब आपको पकड़कर नहीं रखा जा सकता। कहाँ जायेंगे? कलकत्ते?"

आशु बाबू धीरे से सिर हिलाते हुए बोले, "ना। अबकी बार जरा दूर जाने की सोची है। पुराने मित्रों को वचन दिया था कि यदि जीवित रहा तो फिर एक बार मिल जाऊँगा। यहाँ तो तुम्हें कोई काम नहीं कमल, चलोगी बिटिया मेरे साथ विलायत? यदि वहाँ से मैं न लौट सका, तो तुम्हारे मुँह से कोई समाचार तो सुन ही लेगा।"

कमल एकदम चुप रही।

आशु बाबू कहने लगे, "भय की कोई बात नहीं बेटी, इस बूढ़े की तुम्हें सेवा न करनी होगी। इस अकर्मण्य देह का मूल्य ही क्या है!—इसे ढोते रहने के लिए मैं अपने ऊपर किसी का ऋण नहीं बढ़ाना चाहता; पर कौन जानता था कमल कि मांसपिंड को लेकर भी प्रश्न कठिन हो सकता है? लगता है मारे शर्म के जमीन पर गड़ा जा रहा हूँ। इस जगत् में इतनी बड़ी विस्मय की बात भी होती है, भला कौन सोच सका है, बताओ?"

कमल सन्देह से चौंक पड़ी, बोली, "नीलिमा दीदी नहीं दिखाई दे

रही हैं चाचाजी, वे कहाँ हैं ?"

आशु बाबू ने कहा, "शायद अपने कमरे में होगी—कल सवेरे से ही नहीं दिखाई दे रही है। सुना है हरेन्द्र उसे अपने घर ले जायेगा।"

"अपने आश्रम में ?"

"आश्रम अब नहीं रहा। सतीश चला गया है; कुछ लड़कों को भी अपने साथ ले गया है। केवल चार-पाँच लड़कों को हरेन्द्र ने नहीं जाने दिया है, वे यहीं हैं। उनके माँ-बाप, नाते-रिश्तेदार कोई भी नहीं हैं। वह चाहता है कि उन्हें वह अपने विचार के अनुसार नये तरीके से तैयार करे। तुमने सुना नहीं शायद ! सुनती भी किससे ?"

जरा रुककर फिर कहने लगे, "परसों शाम को लोगों के चले जाने पर अधूरा पत्र पूरा करके नीलिमा को सुनाने लगा। कई दिनों से वह बराबर कुछ अन्यमनस्क-सी रहती थी, इधर उसे देख भी कम पाता था। पत्र था कलकत्ते के अपने कर्मचारी के नाम, मेरे विलायत जाने का सारा आयोजन जल्दी ही पूरा करने के लिए। एक नये वसीयतनामे का मसविदा भी भेजा था—शायद यही मेरा अन्तिम वसीयतनामा है। अटार्नी को दिखाकर पक्का करके दस्तखत के लिए वापस भेजने को लिखा था, और भी बहुत-सी आज्ञाएँ थीं। नीलिमा क्रुद्ध-सी हो रही थी। उसकी ओर से भला-बुरा कुछ भी उत्तर न पाकर मैं मुँह उठाकर उसकी ओर देखने लगा तो देखा, उसके हाथ का सिलाई का कपड़ा जमीन पर पड़ा है, सिर चौकी के एक किनारे लुढ़क गया है, आँखें मिची हैं और चेहरा बिलकुल सफेद है। मेरी कुछ समझ में नहीं आया कि एकदम क्या हो गया। झटपट उठकर जमीन पर लिटाया, गिलास में पानी था, उसके मुँह और आँखों पर छींटे मारे। पंखा था नहीं, सो अखबार उठाकर उससे हवा करने लगा—नौकर को पुकारना चाहा, पर मुँह से आवाज ही न निकली। शायद दो-तीन मिनट ही यह अवस्था रही; अधिक नहीं; इसके बाद उसने आँखें खोलीं और झिझक के साथ उठकर बैठ गयी। एक बार सारा शरीर काँप उठा और फिर वह औंधी होकर मेरी गोद में मुँह को छिपाकर तेजी से रोने लगी। ऐसी रोई कि कुछ पूछो ही मत। मालूम हुआ कि जैसे उसकी छाती फट जायेगी। बहुत समय बाद मैंने उसे उठाकर बिठाया—कितने दिनों की कितनी ही बातें, कितनी ही घटनाएँ

याद आ गयीं—फिर मुझे समझने में कुछ भी बचा न रह गया।"

कमल मौन होकर उनके मुँह की ओर देखती रही।

आशु बाबू को पल-भर अपने को सम्भालने में लगा और तब कहा, "मैं समझता हूँ, इस तरह दो-तीन मिनट बीते होंगे। मेरे यह सोचने के पहले ही कि ऐसी दशा में मुझे क्या करना चाहिए, वह तीर की भाँति उठ खड़ी हुई—मेरी ओर एक बार देखा तक नहीं—और कमरे से बाहर निकल गयी। न तो उसने कोई बात ही कही और न मैं ही कुछ बोल सका। उसके बाद फिर भेंट नहीं हुई।"

कमल ने कहा, "यह क्या आप पहले जान नहीं पाये थे?"

आशु बाबू ने कहा, "ना। कभी सपने में भी न सोचा था, और कोई होता तो संदेह करता कि यह केवल छल है, स्वार्थ है; उसके बारे में ऐसी बात सोचना भी गलती है। यह स्त्रियों का मन कितनी विस्मयी वस्तु है! इससे ज्यादा जग में और क्या विस्मय की बात होगी कि यह रोगातुर शरीर, ऐसा अक्षय और अवसन्न मन, जीवन की यह सांध्य वेला जिसमें जीवन की कानी कौड़ी का भी मूल्य नहीं—इस पर भी किसी सुन्दरी युवती का मन आकृष्ट हुआ हो? फिर भी यह सत्य है, थोड़ा भी झूठ नहीं।"

इतना कहकर सदाचारी प्रौढ़ आदमी क्षोभ, वेदना और निष्कपट शर्म से एक साँस लेकर चुप हो रहा।

आशु बाबू कुछ देर इसी तरह रहकर कहने लगे, "किन्तु मैं यह अच्छी तरह जानता हूँ कि यह बुद्धिमती नारी मुझसे कुछ भी प्रत्याशा नहीं करती। वह केवल चाहती है मेरी सेवा करना और वह भी इसलिए कि सेवा के अभाव में मेरे जीवन के बाकी दिन कहीं दुःख में न बीतें। केवल दया और अपूर्व करुणा, बस।"

कमल को मौन देखकर वे कहने लगे, "बेला ने विवाह-विच्छेद का जब मामला सामने रखा था, तब मैंने इसमें अपनी सम्मति दी थी। बातों-ही-बातों में उस दिन जब प्रसंग उठ पड़ा, तो नीलिमा बहुत गुस्सा हुई और उसके बाद से तो बेला उसके लिए असह्य हो गयी। अपने पति को इस तरह सर्वसाधारण के सामने लज्जित और बेइज्जत करने की प्रतिहिंसा को नीलिमा हृदय से खुश न कर सकी। उसने कहा, 'पति को त्याग देना

कोई बड़ी बात नहीं, उसे फिर पाने की साधना ही स्त्री के लिए परम सार्थक है। अपमान का बदला लेने में ही स्त्री की वास्तनिक मर्यादा नष्ट हो जाती है, नहीं तो वह तो कसौटी है जिस पर जाँचकर प्रेम का मूल्य आँका जाता है। फिर कैसा आत्मसम्मान का भाव जिसे असम्मान के साथ अलग कर दिया, उसी से अपने खाने-पहनने का खर्च हाथ फैलाकर लिया जाय ? क्या गले में फाँसी डालने के लिए रस्सी भी नहीं मिली ?' सुनकर मैंने सोचा था कि नीलिमा की यह बात गलत है--अधिकता है; पर आज सोचता हूँ कि क्या प्रेम नहीं कर सकता ? रूप, यौवन, सम्मान—यह सब-कुछ नहीं बेटी, क्षमा ही उसकी असली आत्मा है। जहाँ क्षमा नहीं वहाँ केवल प्रेम पाखण्ड है—वहाँ पर रूप-यौवन का विचार-वितर्क उटता है और वहीं पर आता है आत्म-सम्मान ज्ञान का टग् आफ वार।"

कमल उनके मुँह की ओर देखती हुई मौन हो रही।

आशु बाबू कहने लगे, "कमल, तुम ही उसकी आदर्श हो; पर चाँद की चाँदनी मानो दिनकर की किरणों से भी वढ़ गयी है। तुमसे जो कुछ उसने पाया है अपने हृदय के रस में भिगोकर स्निग्ध माधुर्य के साथ उसने उसे न जाने कितनी ओर बिखेर दिया है। मैंने इन दो दिनों में दो सौ वर्ष की चिन्ता की है कमल। स्त्री का प्रेम मैंने पाया था, उसका स्वाद मैं पहचानता हूँ, स्वरूप जानता हूँ किन्तु इस नये तत्त्व ने कि नारी के प्रेम का केवल एक ही पहलू था, एकदम आज मुझे आच्छन्न कर दिया है। इसमें न जाने कितनी बाधा, कितना दुःख है, अपने को छोड़ देने की न जाने कितनी अनजानी तैयारियाँ हैं। तब भी मैं उसे हाथ फैलाकर ले नहीं सका, पर क्या कहके उसे नमस्कार करूँ, यह मेरी बुद्धि में नहीं वैठ रहा है कमल।"

कमल जान गयी कि पत्नी-प्रेम की सुदीर्घ छाया ने इतने दिन जिन दिशाओं में अन्धेरा कर रखा था, आज वे धीरे-धीरे स्पष्ट होती जा रही हैं।

आशु बाबू ने कहा, "सही है, मणि को मैंने क्षमा दी है। वाद के अभिमान को मैं अव उसके आगे लाल आँखें न करने दूँगा। मैं हूँ कि वह दुःख पायेगी, जग का विधिबद्ध शासन उसे ठीक नहीं होने देगा, आज्ञा तो नहीं दे सकूँगा; पर जाते समय यह आशीर्वाद छोड़ जाऊँगा कि दुःख में से वह फिर अपने को खोजकर पा ले। इसकी भूल, भ्राँति और प्रेम—भगवान् उन लोगों

का अच्छा करें।" कहते-कहते उनका गला भर आया।

इसी तरह मौन में बहुत-से पल मिट गये। उनके मोटे हाथ पर कमल धीरे-धीरे हाथ फेर रही थी, बहुत देर पश्चात् उसने मधुर गले से कहा, "चाचाजी, नीलिमा जीजी के बारे में आपने क्या निर्णय किया?"

आशु बाबू एकदम सीधे होकर बैठ गये—जैसे किसी ने उन्हें धक्का देकर उठा दिया हो, "देखो बेटी, तुम्हें मैं पहले भी नहीं समझा पाया हूँ और अब भी न समझा पा सकूंगा और शायद अब सामर्थ्य भी नहीं है; पर ऐसा संशय मेरे मन में कभी नहीं आया कि एकनिष्ठ प्रेम का आदर्श मनुष्य का सच्चा आदर्श नहीं। नीलिमा के प्रेम पर मैं सन्देह नहीं करता, पर जैसे वह सच है वैसे ही स्वीकार करना भी मेरे लिए वैसे ही सच है। किसी तरह भी मैं इसे निरर्थक आत्म-वंचना नहीं कह सकता। तर्क से इसका मेल नहीं बनेगा, पर यह सत्य है कि निष्फलता में से होकर मानव आगे बढ़ेगा। मैं नहीं जानता कि यह किधर जायगा, पर जायगा अवश्य। यद्यपि वह मेरी कल्पना से दूर है, पर मैं यह अवश्य जानता हूँ कि इतना बड़ा दुःख का प्रतिफल मनुष्य किसी-न-किसी दिन पायेगा अवश्य, नहीं तो जग असत्य, सृष्टि न हो जायेगी।"

वे कहते रहे, "इसी नीलिमा को ही ले लो, किसी भी नर के लिए जो नारी अमूल्य सम्पदा हो सकती है उसके लिए कहीं भी खड़े होने का स्थान नहीं। उसकी बेकार निराशा मेरे बाकी दिनों को शूल की तरह चुभाती रहेगी। इसी से सोचता हूँ, यदि वह और किसी से प्रेम करती? यह उसकी कैसी भूल है!"

कमल ने कहा, "भूल-सुधार का समय तो अभी उनका समाप्त नहीं हो गया चाचाजी।"

"कैसे? तुम समझती हो, अब क्या वह दुबारा किसी से कभी प्रेम कर सकती है?"

"कम-से-कम सम्भव तो है। इसे भी क्या आपने कभी सम्भव समझा था कि आपके अपने जीवन में भी कभी ऐसी घटना हो सकती है?"

"लेकिन नीलिमा? उसके जैसी स्त्री?"

कमल ने कहा, "यह नहीं जानती; पर उनके लिए क्या आप यही प्रार्थना

करेंगे कि जिसे उन्होंने पाया नहीं, और पा सकती नहीं, उसी की याद में सारा जीवन निराशा में काट दें ?"

आशु बाबू के चेहरे की दीप्ति बहुत मलिन हो गयी। बोले, "ना, ऐसी प्रार्थना नहीं करूँगा।" फिर पल-भर चुप रहकर कहने लगे, "किन्तु मेरी बात भी तुम नहीं समझोगी, कमल। मैं जो कर सकता हूँ, वह तुम नहीं कर सकतीं। सत्य का मूलगत संस्कार तुम्हारे और मेरे जीवन का एक नहीं है—बिलकुल भिन्न है। इस जीवन को ही जिन लोगों ने मानव-आत्मा की चरम प्राप्ति समझा है उनके लिए प्रतीक्षा करना कठिन है। वे तो आनन्दभोग की अन्तिम बूँद तक इस जीवन में पी लेना चाहेंगे; किन्तु हम जन्मांतर मानते हैं। प्रतीक्षा करने का समय हमारे लिए बहुत है, उसमें लेटकर पीने की आवश्यकता नहीं पड़ती।"

कमल ने शांत गले से कहा, "यह बात मैं आपकी समझती हूँ चाचाजी, लेकिन केवल इसी कारण तो आपके संस्कार को युक्ति के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता और आकाश-कुसुम की आशा से भगवान् के दरवाजे पर हाथ पसारे जन्मान्तर-काल तक प्रतीक्षा करने लायक साहस भी मुझमें नहीं है। जिस जीवन को सबके बीच सरल बुद्धि मे पाया है, वही मेरे लिए सच है, वही महान् है। फूल-फल और शोभा-सम्पदा से मेरा यह जीवन भर उठे। परलोक के बड़े लोभ की आशा से इस जीवन की मैं उपेक्षा, अवज्ञा और अपमान न करूँ—इतना ही मैं ठीक समझती हूँ। चाचाजी, इसी तरह आप लोग खुशी से और सौभाग्य से स्वेच्छापूर्वक अलग रहा करते हैं। आप लोग इस लोक को व्यर्थ समझते हैं, इसी से इस लोक ने भी आप लोगों को सारे संसार के सामने छोटा बना रखा है। नीलिमा दीदी से भेंट होगी या नहीं सो नहीं मालूम, यदि होगी तो मैं उनसे यही बात कह जाऊँगी।"

कमल उठकर खड़ी हो गयी।

आशु बाबू ने सहसा झटके से उसका हाथ पकड़ लिया, बोले, "जा रही हो बेटी? यह सोचते ही कि तुम जा रही हो मेरे हृदय में हाहाकार-सा मच जाता है।"

कमल बैठ गयी। बोली, "पर आपको तो मैं किसी भी प्रकार से सन्तोष दे नहीं पाती चाचाजी, शरीर और मन से जबकि आप बहुत

निर्बल हैं; और सांत्वना देना ही जबकि सबसे आवश्यक वस्तु है, तब मैं सब तरफ से मानो आपको चोट ही पहुँचाया करती हूँ। फिर भी, यह सच है कि मैं आपको किसी से भी कम प्यार नहीं करती चाचाजी।"

आशु बाबू ने मन-ही-मन स्वीकार करते हुए कहा, "इसके अलावा नीलिमा—यह भी क्या साधारण विस्मय है! पर जानती हो, इसका कारण क्या है कमल?"

कमल ने हँसते हुए कहा, "हो सकता है आपके अन्दर दलदल नहीं है इसलिए। दलदल अपने शरीर का भी भार नहीं ढो सकता—पाँवों के नीचे से अपने को हटाकर स्वयं डुबा देता है; लेकिन ठोस मिट्टी लोहे और पत्थर का भी भार झेल लेती है—इमारत तो उसी पर ही बनायी जा सकती है। नीलिमा दीदी को सब स्त्रियाँ नहीं समझ सकतीं। हाँ, जिनके अपने को लेकर खेल खेलने के दिन बीत चुके हैं और सिर का भार उतारकर जो सहज में ही निःश्वास लेती हुई जीना चाहती हैं वे ही उन्हें समझ पायेंगी।"

"हाँ।" कहकर आशु बाबू ने एक तेज साँस ली और कहा, "और शिवनाथ?"

कमल ने कहा, "जिस दिन से मैंने उन्हें ठीक तरह से समझा है, उस दिन से क्षोभ और दर्द मेरे मन से बिलकुल धुल गया है—ज्वाला बुझ चुकी है। शिवनाथ गुणी आदमी हैं—कलाकार हैं। अस्थायी प्रेम कलाकारों के मार्ग का विघ्न है, उनकी सृष्टि के लिए अन्तराल है। उनकी आदतों का परम विरोधी है। यही बात उस दिन ताज के सामने खड़ी होकर मैं कहना चाहती थी। औरतें तो एक उपलब्ध मात्र हैं—नहीं तो, असल में वे प्रेम करते हैं केवल अपने आपसे। अपने मन को दो भागों में बाँटकर उनकी दो दिन की लीला चलती है—उसके बाद वह समाप्त हो जाती है। अतः उनके गले का स्वर ऐसा विचित्र होकर बजता है, कभी तो वह बजता नहीं, सूखकर जम जाता है। मैं तो समझती हूँ, शिवनाथ ने उसे नहीं ठगा, मनोरमा ने अपने आप ही गलती की है। सूर्यास्त के समय बादलों पर जो रंग खिलने लगता है चाचाजी, वह तो अस्थायी होता है और उसका यह स्वाभाविक रंग है नहीं; किन्तु तब भी उसे झूठ कौन कह सकता है?"

आशु बाबू ने कहा, "यह तो ठीक है, किन्तु रंग से ही तो मनुष्य के दिन

नहीं कटते बेटी, और न उपमा से ही उसका दुःख ही मिटता है। बताओ बेटी, उसके लिए क्या करना है?"

कमल का चेहरा क्लांति से मलिन हो गया। उसने कहा, "इसी से घूम-फिरकर एक ही प्रश्न बार-बार सामने आ जाया करता है चाचाजी, वह जैसे समाप्त ही नहीं होता, किन्तु यह ठीक है कि जाते समय आप अपना यही आशीर्वाद छोड़ जायें कि मणि दुःख के दिनों में अपने आपको ढूँढ़ निकाले। जो झड़ने वाला है उसके झड़ जाने के पश्चात् वह बिना किसी संशय के अपने को समझ सके, और आपसे भी मैं कहूँगी कि जगत् में होने वाली बहुत-सी घटनाओं में से विवाह भी एक घटना है, उससे ज्यादा कुछ नहीं। उसी को जिस दिन से नारी का सब-कुछ मान लिया गया है उसी दिन से स्त्रियों के जीवन की सबसे बड़ी ट्रेजेडी शुरू हो चुकी है, विदेश जाने के पहले अपने मन की झूठ की जंजीर से अपनी लड़की को स्वतन्त्र कर जाइये चाचाजी, यही आपसे मेरी अन्तिम प्रार्थना है।"

एकदम दरवाजे के पास किसी के पैरों की आवाज सुनकर दोनों उधर देखने लगे।

हरेन्द्र ने अन्दर आकर कहा, "भाभीजी को मैं लिवाने आया हूँ आशु बाबू, वे अन्दर तैयार हैं, ताँगा लाने के लिए आदमी भेज दिया है।"

आशु बाबू का चेहरा फक पड़ गया, बोले, "अभी? लेकिन दिन तो अब नहीं रहा।"

हरेन्द्र ने कहा, "दस-बीस कोस दूर नहीं है, पाँच मिनट के अन्दर पहुँच जायेंगी।"

उसका चेहरा जैसा गम्भीर था, बातें भी उसकी वैसी ही रसहीन थीं।

आशु बाबू ने धीरे से कहा, "यह ठीक है; पर संध्या का समय है— आज जाये बिना काम नहीं चलेगा?"

हरेन्द्र ने जेब से एक कागज का टुकड़ा निकालकर आगे बढ़ाते हुए कहा, "आप ही विचार कीजिये।"

उसमें लिखा था, 'हरेन्द्र दा, यहाँ से मुझे ले जाने का उपाय यदि तुम न कर सको, तो मुझे खबर देना; पर कल मत कहना कि मुझसे क्यों नहीं कहा?—नीलिमा।'

आशु बाबू सन्न रह गये।

हरेन्द्र ने कहा, "निकट आत्मीय के रूप में तो मैं दावा नहीं कर सकता, पर उन्हें तो आप जानते हैं। उनके इस पत्र को पाने के पश्चात् देर करने का भी साहस नहीं रहता।"

"तुम्हारे ही घर तो रहेंगी।"

"हाँ, कम-से-कम उससे अच्छी व्यवस्था जब तक न हो सके तब तक। सोचा कि इस घर में उनके इतने दिन समाप्त हो गये तो उस घर में भी कुछ बुरा न होगा।"

आशु बाबू मौन रहे। इतना भी न कहा कि यह अच्छी बुद्धि अब तक कहाँ रही?

इतने में बैरा आ गया और बोला, "मेम साहब का सामान लेने मजिस्ट्रेट साहब के यहाँ से आदमी आया है।"

आशु बाबू ने कहा, "उनका जो कुछ सामान हो सब बता दो।"

कमल की आँखों से आँखें मिलते ही उन्होंने कहा, "कल सवेरे बेला यहाँ से चली गयी। मजिस्ट्रेट की स्त्री उसकी सहेली है। तुम्हें एक सुसंवाद देना तो भूल ही गया कमल—बेला के पति आये हैं, उसे लेने के लिए—ऐसा लगता है शायद आपस में उनका मेल-जोल हो गया है।"

कमल ने जरा विस्मय प्रकट करते हुए कहा, "किन्तु यहाँ क्यों न आये?"

आशु बाबू ने कहा, "शायद आत्म-गौरव पर आँच आती। जब विवाह-बंधन तोड़ने का मामला चला, तब बेला के पिता को पत्र में अपनी ओर से सम्मति दी थी। उसके पति शायद इस बात को क्षमा न कर सके होंगे।"

"आपने अच्छी सम्मति दी थी?"

आशु बाबू ने कहा, "इसमें विस्मय की बात ही कौन-सी है कमल! जो पति चरित्र-दोष का अपराधी है, उसे छोड़ने को मैं बुरा नहीं समझता। मैं मान नहीं सकता कि यह अधिकार केवल पति को है, स्त्री को नहीं।"

धीरे से कहा, "एक जदू के सिवाय इस घर में पुराना कोई नहीं रह गया।"

"पर जदू तो यहाँ नहीं है बिटिया। लड़का बीमार होने से छुट्टी लेकर देश चला गया।"

फिर बहुत देर तक कोई भी बातचीत न हो पायी।

आशु बाबू एकदम पूछ बैठे, "अच्छा, वह हरेन्द्र लड़का कहाँ है, तुम्हें कुछ मालूम है, कमल ?"

"ना चाचाजी।"

"जाने के पूर्व उसे एक बार देखने की इच्छा हो रही है। तुम दोनों मानो बहन-भाई हो, एक ही पेड़ के दो फूल के समान लगते हो।"

कमल ने कोई उत्तर नहीं दिया।

अन्त में आशु बाबू ने कहा, "डर की कोई बात नहीं बेटी, जो आज तक मुझे छोड़कर नहीं गयी, वह आज भी मुझे छोड़कर नहीं जायेगी।" कहते हुए उन्होंने हाथ उठाकर सामने की दीवार पर टँगी हुई अपनी स्वर्गीया धर्मपत्नी की तस्वीर की ओर इशारा किया।

पच्चीस

कमल ने घर जाकर देखा कि बक्सों का ढेर सीढ़ी के पास पड़ा हुआ है। किसी प्रकार से ऊपर पहुंची। रसोईघर में झाँककर देखा कि अजित ने स्टोव जलाकर चाय के लिए पानी चढ़ा दिया है और चाय-चीनी आदि की खोज में घर-भर की सारी चीजें इधर-उधर कर दी हैं।

"यह क्या है अजित बाबू ?"

अजित चौंककर बोला—"चाय-चीनी इत्यादि क्या तिजोरी में बन्द रखती हो ? पानी कब से खौल रहा है।"

"मेरे घर वस्तुएँ आपको मिलेंगी कैसे ? आइये, मैं तैयार करती हूँ।"

अजित खड़ा हो गया।

"परन्तु बक्स-ट्रंक, गठरी-पोटली—यह सब किसका सामान है ?" कमल बोली।

"हरेन्द्र बाबू ने नोटिस दे दिया।"

"नोटिस दिया वहाँ से चले जाने का; पर यहाँ आने की बुद्धि किसने दी ?"

"वह मेरी अपनी बुद्धि का प्रयोग है, आज से पूर्व दूसरों की बुद्धि पर चला था।"

"ठीक है; पर वस्तुएँ क्या नीचे ही पड़ी रहेंगी? चाय छोड़िये, चलिये, पहले सामान ऊपर लाने का प्रयत्न करें।" कमल बोल पड़ी।

छब्बीस

डाक से हरेन्द्र का भोजन का निमन्त्रण आया।

आशु बाबू की विदाई के समय बहुत-से परिचित लोगों को आमन्त्रित किया गया है।

एक कोने में लिखा है, 'कमल, अवश्य आना बहन।—नीलिमा।'

"जाओगी क्या?" अजित ने पूछा।

"अवश्य। मेरी इज्जत इतनी बढ़ी कि निमन्त्रण की लापरवाही कर सकूं!"

बंगाली समाज में यह समाचार सबको मिल गया है कि ये दोनों आगरा छोड़कर कहीं जा रहे हैं; पर कहाँ और किस उद्देश्य से, इसका ज्ञान किसी को भी नहीं था। कमल से पूछने से मालूम हो सकता था कि अभी तो उनका गंतव्य स्थान अमृतसर है; पर पूछने का किसी को साहस न हुआ।

अजित ने कहा, "हरेन्द्र के यहाँ तुम अकेली जाओगी?"

"आश्रम के द्वार तुम्हारे लिए भी सदैव खुले रहेंगे, जब चाहो तब आ सकते हो, परन्तु मेरे लिए तो उस द्वार के खुलने की आगे कोई आशा नहीं—अन्तिम बार जाकर मिल आऊँ—क्यों, क्या विचार है?"

नयी मोटर खरीदी गयी। उसी में शाम को ड्राइवर कमल को लेकर चला गया।

हरेन्द्र के घर अतिथियों के लिए अच्छी व सुन्दर व्यवस्था है। बहुत-सी बत्तियाँ जल रही हैं। बीच में आशु बाबू हैं और उन्हें घेरे हुए कुछ सज्जन बैठे हैं।

बेला मजिस्ट्रेट की स्त्री मालिनी के साथ आयी है। नीलिमा नहीं है,

शायद अन्यत्र कहीं काम में फँसी हुई होगी ।

हरेन्द्र ने कमल को देखकर मीठी आवाज में स्वागत किया, "ओ हो कमल, आ गयीं ? अजित कहाँ है ?"

सबकी दृष्टि कमल की ओर मुड़ गयी ।

कमल ने देखा कि महिलाओं के साथ बात करने वाला व्यक्ति अक्षय है। कुछ पतला हो गया है। इन्फ्लुएंजा से तो बच गया, पर बंगाल के मलेरिया से न बचा ।

कमल ने कहा, "अजित बाबू नहीं आये, जरा तबीयत ठीक नहीं है ।"

हरेन्द्र बोला, "अब कहीं हमारी मिलन-सभा पूर्णता को प्राप्त हुई ।" कमल के सिवाय शायद और किसी से ऐसी बात नहीं कह सकता था ।

अध्यक्ष ने कहा, "क्यों, इससे दर्शनशास्त्र का ऐसा कौन-सा तत्त्व परिस्फुटित हो गया, जरा मैं भी सुनूँ तो ?"

कमल ने हँसकर कहा, "अब बताइये ? दीजिये उत्तर ?"

हरेन्द्र ने तथा और सभी ने मुँह फेरकर अपनी-अपनी हँसी छिपाने का प्रयत्न किया ।

अक्षय ने नीरस कण्ठ से पूछा, "क्यों कमल, क्या मुझे तुमने पहचाना ?"

"तुमने तो पहचान लिया ।" नीरसता से आशु बाबू बोले ।

कमल ने कहा, "आपका यह प्रश्न बेकार है, आशु बाबू । आदमी पहचानना तो इनका पेशा है । इसमें भी सन्देह करना इनके पेशे पर चोट पहुँचाना है ।"

बात उसने इस तरह से कही कि अबकी बार किसी से हँसी दबाये नहीं दबी । कुछ रुककर हरेन्द्र बोला, "हमारे शहर से—या यों कहिये कि भारत से आशु बाबू चले जा रहे हैं। इनके साथ परिचित होना किसी भी आदमी के लिए सौभाग्य की बात है, और यह सौभाग्य हम लोगों को प्राप्त हुआ है ।"

बातें साधारण-सी थीं पर उस शांत सहृदय प्रौढ़ व्यक्ति के चेहरे की ओर देखते ही वे सबके दिल में बैठ गयीं ।

आशु बाबू ने बातों का सिलसिला बदलकर कहा, "अक्षय, तुम्हें मालूम है कि हरेन्द्र का ब्रह्मचर्याश्रम बन्द हो गया, राजेन्द्र तो पहले से लापता है

और सतीश भी उस दिन चलता बना। जो दो-चार लड़के रह गये हैं, हरेन्द्र की इच्छा है कि उन्हें संसार के सीधे रास्ते से ही आदमी बनाया जाय। अब तुम लोगों का कर्तव्य है कि कमल को धन्यवाद दो।"

अक्षय भीतर से जलकर सूखी हँसी हँसता हुआ बोला, "अन्त में परिणाम शायद इनकी बातों से···? किन्तु कुछ भी कहिये आशु बाबू, मुझ विस्मय नहीं हुआ। यह अनुमान मैंने पहले से ही कर रक्खा था।"

"सो तो ठीक कहते हो क्योंकि पहचानना आपका पेशा ठहरा?" हरेन्द्र बोला।

आशु बाबू बोले, "तब भी मैं सोचता हूँ, तोड़ने की कोई आवश्यकता नहीं। सभी धर्म-मत मूलतः एक हैं—प्राचीन आचार-अनुष्ठान जो नहीं मानते वे न मानें; पर जिनमें मानने का अध्यवसाय है उन्हें निरुत्साह करने से क्या लाभ? क्यों अक्षय?"

अक्षय ने कहा, "अवश्य।"

आशु बाबू ने कमल की ओर देखा।

वह जोर से कह उठी, "आपका पक्का विश्वास नहीं आशु बाबू, यह तो उपेक्षा की बात है। यह सोच सकती तो मैं आश्रय के विरोध में एक शब्द भी न कहती; किन्तु ऐसी बात नहीं। यह कहना कि आचार-अनुष्ठान मानव के लिए धर्म से भी बड़ी वस्तु है वैसा ही जैसे राजा से बढ़कर उसके कर्मचारियों को बड़ा बताना।"

आशु बाबू ने हँसते हुए कहा, "समझा कि यह ठीक है, पर इससे क्या तुम्हारी उपमा को यही युक्ति मान लूं?"

कमल ने कहा, "क्या यह केवल उपमा ही है आशु बाबू, उससे अधिक कुछ नहीं? इसे मैं जानती हूं कि सभी धर्म वास्तव में एक हैं, सर्व काल और सर्व देशों में उसी एक अज्ञेय वस्तु की असाध्य साधना है। प्रकाश तथा हवा को लेकर मनुष्य का विवाद नहीं होता, विवाद होता है अनाज के बँटवारे के लिए—जिसे कि अपने अधिकार में ले लिया जा सकता है। या दखल करके अपने वंशधरों के लिए जोड़ा जा सकता है। इसी से तो जन्म-भर की आवश्यकताओं में वह इतना बड़ा सच हो रहा है। यह तो सभी जानते हैं कि विवाह का मूल उद्देश्य सभी क्षेत्रों में एक ही है, पर इससे क्या उसे मान

सकते हैं ? आप ही बताइये न अक्षय बाबू, ठीक है कि नहीं ?'' कहकर कमल ने हँसकर मुँह फेर लिया।

इसका भीतरी अर्थ सभी समझ गये।

क्रुद्ध अक्षय ने उत्तर में कोई कड़ी बात कहनी चाही, पर उसे ढूँढ़े न मिली।

आशु बाबू ने कहा, ''पर कमल, सभी आचार-अनुष्ठानों के प्रति तुम्हारे अन्दर अवज्ञा का भाव है। इसी से तुम्हें समझना कठिन है।''

कमल ने कहा, ''कठिन कुछ नहीं और आपके समझने में तो देर ही न लगेगी। यह न होता तो आपका प्यार मैं कैसे पाती ? आचार-अनुष्ठानों को मैं झूठ नहीं बताती। मैं चाहती हूँ उसमें परिवर्तन। अपनी अवज्ञा का मूल्य मैं समझती हूँ। झूठ समझती तो झूठ के साथ आवाज मिलाकर झूठी श्रद्धा से सबके साथ मेल मिलाकर ही जीवन बिता देती—विद्रोह न करती।''

थोड़ा रुककर फिर बोली, ''यूरोप में रिनेसाँ काल में उन लोगों ने नयी सृष्टि करनी चाही पर आचार-अनुष्ठान ज्यों-के-त्यों रहे। प्राचीन तन पर ताजा रंग चढ़ाना चाहा पर वह दो ही दिन में समाप्त हो गया। हरेन्द्र बाबू को डर था कि कहीं उच्च इच्छा इसी तरह समाप्त न हो जाय; पर अब कोई भय नहीं, वे सम्भल गये हैं।'' और वह हँसने लगी।

हरेन्द्र शांत हो गया। उसने कार्य तो कर डाला है, पर अब भी उसे सब ओर से समर्थन नहीं मिला।

वह बोला, ''आश्रम उठा देकर मैं गर्व नहीं करता। उस दिन जब लड़कों को लेकर सतीश चला गया, तब मैंने अपनी कमजोरी को ही महसूस किया।''

कमल ने कहा, ''तब तो आपने ठीक नहीं किया हरेन्द्र बाबू, मेरे पिता कहते थे कि जिनका भगवान् जितना ज्यादा सूक्ष्म और टेढ़ा है, वे लोग उतने ही उलझकर मरते हैं और जिन लोगों के भगवान् जितने स्थूल और सरल हैं, उनका जीवन उतना ही ठीक है। ईश्वर को समझना नुकसान का व्यापार है। व्यापार जितना बड़ा और व्यापक होगा, नुकसान भी उतना अधिक होगा। समेटकर, छोटा कर देने से लाभ ज्यादा नहीं, पर नुकसान की मात्रा अवश्य घट जाती है। सतीश से मैंने बातचीत कर देखी है। उनकी

इच्छा थी कि गगन की आयु में से दो हजार वर्ष काट डालने से ही परम लाभ पहुँचेगा। यूरोप में भी ऐसे ही झूठे लाभ की चर्चा प्यूरिटनों ने की थी। सोचा था अमेरिका जाकर बाइबिल का सत्युग बना लेंगे; किन्तु उनके लाभ का हिसाब आज बहुतों को मालूम हो गया है। नहीं मालूम है तो केवल मठाधीशों के दल को। हरेन्द्र बाबू, आपके आश्रम को शायद हानि पहुँचायी हो मैंने पर उस टूटे आश्रम से जो बाकी बच रहे हैं उनकी मैंने हानि नहीं की।''

प्यूरिटनों का इतिहास अक्षय जानता था। इतिहास का प्रोफेसर होने के कारण केवल उसी ने कमल का समर्थन किया।

आशु बाबू बतलाने लगे, ''पर उस युग के इतिहास का जो उज्ज्वल चित्र है—''

कमल बीच में बोल उठी, ''चाहे जितना ही उज्ज्वल क्यों न हो वह चित्र पर है तो वह चित्र ही, उससे अधिक कुछ नहीं। आलोचना करके हम गर्व का अनुभव कर सकते हैं, पर पुस्तक से मिला-मिलाकर समाज नहीं बना सकते। श्रीरामचन्द्र के युग का भी नहीं, युधिष्ठिर के युग का भी नहीं। माँ की कोख चाहे जितनी सुरक्षित क्यों न हो, बड़े होने पर उसमें वापस नहीं जाया जा सकता। संसार की समस्त मानव-जाति को मिलाकर ही मनुष्य का अस्तित्व है। कम्बल ओढ़कर क्या हवा के दबाव को रोका जा सकता है?''

बेला और मालिनी चुपचाप बैठी सुन रही थीं। इस स्त्री के सम्बन्ध में बहुत-सी बातें उन लोगों ने सुन रखी थीं, पर आज आमने-सामने बैठकर इस परित्यक्ता और आश्रयहीन महिला की निडरता देखकर उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

दूसरे ही क्षण ठीक यही भाव आशु बाबू ने अपने मुँह से प्रकट किया—''तर्क में चाहे कुछ भी कहे कमल, पर तुम्हारी-सी बातें हम मानते हैं। इसी घर में किसी दिन स्त्रियों का दरवाजा बन्द था, और सुना है, एक दिन तुम्हारे आ जाने से सतीश ने इसे कलुषित किया था; मगर आज हम सभी यहाँ आमन्त्रित होकर आये हैं—''

इतने में एक लड़का दरवाजे के पास आकर बोला—''दीदी ने कहा है,

रसोई तैयार है, आसन बिछाये जायें ?"

अक्षय ने कहा, "हाँ-हाँ, बिछाये जायें।"

लड़का चला गया।

हरेन्द्र ने कहा, "जब से भाभीजी हैं, खाने-पीने की चिन्ता किसी को नहीं होती।"

पर सतीश क्रोधित होकर चला गया।

वह फिर कहने लगा, "सतीश के लिए भी और कोई उपाय न था। वह त्यागी ब्रह्मचारी ठहरा, उसकी साधना में यह एक विघ्न था; पर कठिनाई तो यह है कि मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि वास्तव में कौन-सा काम ठीक हुआ।"

कमल ने निःसंकोच होकर कहा, "यही काम हरेन्द्र बाबू, यही काम ठीक हुआ।"

इतने में उस लड़के ने फिर आकर कहा, "सब तैयार है, अब खाने चलिये।"

सब नीचे चले गए।

सत्ताईस

भोजन के बाद।

एकांत में अक्षय ने कमल से कहा, "सुना है, आप यहाँ से चली जा रही हैं।"

"जी।"

"लगभग सभी परिचितों के घर आप एक बार हो आयी हैं, केवल मेरे ही—"

"आप!" कमल आश्चर्यचकित हो देखती रह गई।

केवल स्वर में ही परिवर्तन हो, यह बात नहीं, सम्बोधन में भी 'आप'। इस बात पर कि क्यों सब लोग उससे 'तुम' कहकर बोलते हैं, उसे न तो कोई शिकायत थी और न किसी से वह अप्रसन्न ही होती थी। परन्तु

अक्षय की बात ही और थी। वह इस स्त्री के लिए 'आप' कहना ज्यादती समझता था, बल्कि उसकी तो यहाँ तक धारणा थी कि ऐसा करना सभ्यता का दुरुपयोग है।

"आपने तो कभी वुलाया नहीं ?" कमल हँसकर वोली।

"यह मेरा दोष है। जाने के पहले आपको समय मिलेगा ?"

"यह लोग कल तड़के ही रवाना हो रहे हैं।"

"तड़के ही ?" फिर जरा ठहरकर कहा, "भविष्य में इधर यदि फिर कभी आना हो तो मेरे घर आपका निमन्त्रण रहा।"

कमल ने हँसते हुए कहा, "क्या आपसे एक बात पूछ सकती हूँ अक्षय बाबू ? अचानक मेरे विषय में आपकी राय कैसे बदल गयी बल्कि आपको और भी कठोर होना चाहिए था ?"

अक्षय ने कहा, "साधारण तरीके से तो वैसा ही होता; लेकिन अबकी बार देश से कुछ अनुभव बाँधकर लाया हूँ। आपने जो प्यूरिटनों का उदाहरण दिया न, वह मेरे हृदय में जाकर बिंध गया। और वह किसी ने समझा या नहीं, पर मैं उस सम्बन्ध में काफी जानता हूँ। गाँव में लगभग चौदह आने मुसलमान हैं।"

"अच्छा, अब ऊपर चलिए।" कमल बोली।

"नहीं, मैं यहीं से विदा लूंगा। मेरी स्त्री बीमार है। इतने आदमियों से भेंट की आपने, एक बार भी उससे भेंट न कीजियेगा ?"

"कैसी हैं वे देखने में ?'

अक्षय ने कहा, "ठीक नहीं मालूम। हमारे परिवार में ऐसा प्रश्न कोई नहीं करता। पिताजी नौ साल की आयु में उसे पुत्रवधू बनाकर घर ले आये थे। पढ़ने-लिखने का न तो समय ही था, न आवश्यकता ही समझी गई। रसोई वनाना, घर के काम-धन्धे, व्रत-उपवास, पूजा-पाठ—इसी में लगी रहती है—मुझको ही इहलोक-परलोक का देवता समझती है। बीमार होने पर दवा खाना नहीं चाहती; कहती है, पति के चरण-स्पर्श से ही सब बीमारियाँ अच्छी हो जाती हैं। यदि न भी अच्छी हों तो समझना चाहिए कि पत्नी की आयु समाप्त हो चुकी।"

इसका थोड़ा-वहुत आभास कमल को हरेन्द्र से मिल चुका था।

उसने कहा, "तब तो आप भाग्यवान हैं—कम-से-कम पत्नी की ओर से। इसका अधिक विश्वास इस युग में असम्भव है।"

अक्षय ने कहा, "शायद ऐसा ही हो, ठीक नहीं जानता। सम्भव है, इसी को स्त्री-भाग्य कहते हों; पर कभी-कभी ऐसा मालूम होता है कि संसार में मेरा कोई नहीं, मैं अकेला हूँ, बिलकुल ही अकेला—सुनिए।"

कमल ने हाथ उठाकर प्रति-नमस्कार किया, "कहिये।"

"यदि कभी समय मिले और याद रहे, तो एक पत्र लिखियेगा। अच्छा, नमस्कार।" इतना कहकर अक्षय जल्दी से चला गया और कमल वहीं मौन होकर खड़ी रही।

ऊपर पहुँचते ही आशु बाबू ने कहा, "हरेन्द्र, एक बड़े मजे की बात कमल कह रही थी, लोग इतना भी नहीं समझ सकते कि समाज में प्रचलित विधि-विधानों के उल्लंघन करने का दुःख केवल चरित्र-बल और विवेक-बुद्धि के बल पर ही सहन किया जा सकता है। मनुष्य बाहर के अन्याय को ही देखता है, अंतःकरण की प्रेरणा की कुछ सुध ही नहीं रखता और यहीं से तमाम द्वंद्व और विरोधों की सृष्टि आरम्भ होती है।"

कमल ने समझा इसका लक्ष्य वह स्वयं और अजित है, इसलिए वह चुप रही। उसने यह बात नहीं कही कि उच्छृंखलता के बल से समाज के विधि-विधानों का उल्लंघन किया जा सकता है, कुबुद्धि और विवेक-बुद्धि दोनों एक चीज नहीं हैं।

बेला और मालिनी ने कमल की उपेक्षा करके हरेन्द्र और आशु बाबू को नमस्कार किया और चली गयीं।

आशु बाबू ने हरेन्द्र के सामने आज पहली बार कमल को बेटी कहकर पुकारा। कहा, "वे ऊँचे पद की स्त्रियाँ हैं, अंग्रेजी बातचीत में, चाल-चलन और पहनाव-उढ़ाव में अप-टू-डेट हैं। उन पर क्रोधित मत होना कमल।"

कमल ने हँसते हुए कहा, "क्रोधित तो मैं नहीं हुई।"

आशु बाबू ने कहा, "मैं जानता हूँ, क्रोध मुझे भी नहीं आया—केवल हँसी आयी, पर घर कैसे जाओगी बेटी, मैं उतारता जाऊँ?"

"वरना मैं जाऊँगी कैसे?"

"अब देर करना ठीक नहीं।" आशु बाबू बोले।

इतने में जीने में जूते की आवाज सुनाई दी और दूसरे क्षण सबने आश्चर्य के साथ देखा कि दरवाजे पर अजित बाबू हैं।

हरेन्द्र ने कहा, "कभी न आने से तो देरी में आना कहीं अच्छा है अजित।"

अजित प्रतिभाहीन होकर बोला, "लेने आया हूँ। हम लोग प्रातःकाल यहाँ से प्रस्थान कर रहे हैं।"

"कल, यानी आज की रात बीते?"

"हाँ, सब तैयारियाँ हैं। यहीं से हम लोगों की यात्रा आरम्भ होगी।"

बात किसी से छिपी न थी, फिर भी सब-के-सब मानो लज्जा से म्लान हो उठे। इतने में दबे पाँव चुपके से नीलिमा आकर एक ओर बैठ गई।

आशु बाबू धीरे-धीरे बोले, "हो सकता है कि हम लोगों की अब फिर कभी भेंट न हो, तुम दोनों मेरे प्रेम के पात्र हो, यदि तुम लोगों का ब्याह हो जाता तो मैं देख जाता।"

अजित व्यग्र होकर बोला, "यह चीज मैं नहीं चाहता आशु बाबू, यह तो मेरे लिए कल्पना के बाहर की बात है। विवाह के लिए मैंने बार-बार कहा है और बार-बार सिर हिलाकर कमल ने अस्वीकार कर दिया है। अपनी सारी सम्पत्ति जो कुछ मेरे पास है—सब उनके नाम लिखकर मैं मजबूती से पकड़ में आने को प्रस्तुत था, पर कमल राजी नहीं हुई। आज इन सबके सामने मैं फिर प्रार्थना करता हूँ कमल, तुम फिर राजी हो जाओ। मैं अपना सर्वस्व तुम्हें देकर शायद जी जाऊँ। छल-कपट और कलंक से छुटकारा पा जाऊँ।"

नीलिमा अवाक् थी।

अजित जैसे झेंपू आदमी की ऐसी व्याकुलता देख दंग रह गई। आज वह अपने को सारहीन कर देना चाहता है। अपनी कहने को कोई चीज अपने हाथ रखने की उसे कोई आवश्यकता नहीं रही।

"मैं पूछती हूँ तुम्हें इतना भय किस बात का है?" कमल ने पूछा।

"भय आज न सही, पर—"

"पर का दिन पहले आये तो सही।"

"आने पर तो फिर तुम कुछ भी नहीं लोगी, मैं जानता हूँ।"

"जानते हो ? तो वही होगा, तुम्हारे लिए सबसे बड़ा और अटूट बन्धन।" कमल हँसकर बोली, "मैंने एक दिन कहा था कि अधिक सुदृढ़ बनाने के लोभ से बिलकुल ठोस और रोशनदानरहित मकान बनाने का प्रयत्न करोगे तो वह मुर्दे की कब्र बन सकती है, जीवित मनुष्य का शयनागार नहीं।"

अजित बोला, "वह मुझे याद है। तुम बाँधना नहीं चाहतीं; पर मैं बंधना चाहता हूँ, नहीं तो फिर मैं तुम्हें किस प्रकार बाँध रखूँगा कमल, मुझमें कहाँ है इतना बल ?"

कमल ने कहा, "शक्ति की आवश्यकता नहीं। तुम अपनी निर्बलता से ही मुझे बाँधे रखना। मैं इतनी कठोर नहीं कि तुम जैसे आदमी को दुनिया में यों ही बहाकर चली जाऊँ।" फिर पलक-मात्र आशु बाबू की ओर देखकर बोली; "भगवान् को तो मैं मानती नहीं जो उनसे प्रार्थना करती कि तुम्हें संसार के तमाम संकटों से बचाकर ही मैं एक दिन मर सकूँ।"

नीलिमा की आँखों में आँसू भर आये।

आशु बाबू अपनी व्याकुल आँखों को पोंछते हुए बोले, "तुम्हें भगवान् के मानने की आवश्यकता नहीं कमल। यह आत्म-समर्पण ही तुम्हें एक दिन गौरव के साथ उनके पास पहुँचा देगा।"

कमल हँस दी। फिर बोली, "वह तो मेरी ऊपरी प्राप्ति होगी। अधिकार की प्राप्ति से भी उसका अधिक आदर है।"

"ठीक है बेटी, पर मेरा आशीर्वाद व्यर्थ नहीं हो सकता।"

हरेन्द्र ने कहा, "अजित, खा के तो आये नहीं होंगे, चलो नीचे।"

आशु बाबू हँसते हुए बोले, "तुम्हारी बुद्धि भी खूब है। ऐसा भी कभी हो सकता है कि अजित बिना खाये-पिये ही चले आवें और कमल यहाँ खा-पीकर निश्चिंत हो जाये।"

अजित ने यह स्वीकार किया कि वह खाना खा चुका है।

इस बात की याद आते ही कि रात्रि अभी शेष है, किसी का भी जी नहीं चाहता था कि सभा भंग हो, परन्तु आशु बाबू के स्वास्थ्य का ध्यान करके आखिर उठने की तैयारी करनी पड़ी।

हरेन्द्र ने कमल के पास जाकर धीमें स्वर में कहा, "इतने दिनों बाद

अब वास्तविक चीज पाई कमल, मेरा अभिनन्दन ग्रहण करो।"

कमल ने धीमे स्वर में उत्तर दिया, "पायी है, कम-से-कम यही आशीर्वाद दीजिये।"

कमल को दरवाजे के पीछे बुलाकर नीलिमा ने अपनी आँखें पोंछते हुए कहा, "कमल, मुझे भूल न जाना कहीं।"

कमल ने झुककर नमस्कार किया, "दीदी, मैं फिर आऊँगी, पर जाने से पहले मैं आपके पास एक प्रार्थना रखकर जाऊँगी कि जीवन में कल्याण को कभी स्वीकार न करना। उसका सत्य रूप आनन्द का रूप है। उसी रूप में वह दिखा देता है—उसे और किसी प्रकार भी पहचाना नहीं जा सकता। तुम और चाहे जो भी करो दीदी, अविनाश बाबू के घर की बेगार करने को अब राजी न होना।"

नीलिमा ने कहा, "ऐसा ही होगा कमल।"

आशु बाबू गाड़ी में जाकर बैठे तो कमल ने हिन्दू रीति से उनके पैरों को छूकर प्रणाम किया।

आशु बाबू ने उसके माथे पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया और कहा, "तुमसे मुझे एक वास्तविक तत्त्व का पता लगा कमल। अनुकरण से मुक्ति नहीं मिलती, मिलती है ज्ञान से। इसी से भय लगता है कि तुम्हें जिसने मुक्ति दी है कहीं अजित को वही अनादर में न डुबो दे, उससे इसकी रक्षा करना बेटी। आज तो इसका भार तुम्हीं पर है।"

कमल ने इशारा समझ लिया।

आशु बाबू फिर कहने लगे, "तुम्हारी ही बात मैं तुम्हें स्मरण कराये देता हूँ कमल। उस दिन से मैंने इस बात पर बार-बार विचार किया है कि प्रेम की पवित्रता का इतिहास ही मनुष्य की सभ्यता का इतिहास है—उसका जीवन है। बूढ़े की इतनी-सी बात याद रखना कमल कि आदर्श या आइडिया केवल दो-चार आदमियों के लिए ही है—इसी से उसका मूल्य है। उसे साधारण के बीच खींच लाने से फिर वह पागलपन हो जाता है, इसका शुभ मिट जाता है और बोझ से दुःखद हो उठता है। बौद्ध-युग से लेकर वैष्णव-युग तक इसके बहुत-से उदाहरण संसार में फैले पड़े हैं। क्या तुम फिर से वही भयंकर दुःख संसार में खींच लाना चाहती हो बेटी ?"

कमल ने मृदु स्वर में उत्तर दिया, "यह तो मेरा धर्म है चाचाजी !"

"धर्म ? तुम्हारा यह धर्म ?"

कमल ने कहा, "हाँ। जिस दुःख से आप डर रहे हैं चाचाजी, उसी में से फिर उससे भी बड़ा आदर्श पैदा होगा और उसका भी काम जिस दिन समाप्त हो जायेगा, उस दिन उसके मृत शरीर के साये में से उससे भी महान् आदर्श की सृष्टि होगी। इसी प्रकार संसार में आज का शुभ कल के शुभ के चरणों में आत्म-विसर्जन करके अपना ऋण चुकाता रहता है। यही तो मनुष्य की मुक्ति का मार्ग है। देखते नहीं चाचाजी, सती-दाह का बाहरी रूप राजाज्ञा से बदल गया है, पर उसकी भीतरी आग आज भी ज्यों-की-त्यों धधक रही है और उसी प्रकार भस्म किये जा रही है। यह आग बुझेगी किस चीज से ?"

आशु बाबू बोल उठे, "कमल, मणि की माँ का बन्धन मैं आज तक नहीं तोड़ सका। इसे तुम कहा करती हो कि मोह है, दुर्बलता है—मालूम नहीं वह क्या है; पर यह मोह जिस दिन जाता रहेगा उस दिन उसके साथ-साथ मनुष्य का बहुत कुछ चला जायेगा बेटी। मनुष्य की यह बहुत तपस्या का धन है कमल ! अच्छा, अब जायें। चलो वासुदेव।"

इतने में टेलीग्राम-पियून सामने आकर साइकिल से उतरा। अर्जेंट तार है।

हरेन्द्र ने गाड़ी की बत्ती के प्रकाश में जाकर तार खोलकर पढ़ा। लंबा तार है, मथुरा जिले के एक छोटे सरकारी अस्पताल से डॉक्टर ने भेजा है। उसमें लिखा है—

'गाँव के मन्दिर में आग लग गई थी। बहुत दिनों की पूजा की मूर्ति नष्ट होने को थी। रक्षा का कोई उपाय न रह गया था कि इतने में उस जलते हुए मन्दिर के भीतर राजेन्द्र घुस पड़ा और मूर्ति को बाहर ले आया। देवता की रक्षा हो गई, पर उनके रक्षा करने वाले की रक्षा न हो सकी। वह दो दिन तक चुपचाप भयंकर वेदना सहता हुआ आज सवेरे वैकुंठ चला गया। दस हजार जनता ने मिलकर कीर्तन-भजनादि के साथ जुलूस निकाल-कर यमुना तट पर उनकी अंत्येष्टि-क्रिया की। मरते समय राजेन्द्र आप···। यह समाचार देने के लिए कह गया है।'

स्वच्छ नील आकाश से मानो वज्र गिरा।

हरेन्द्र का श्वास रुक गया और आशु वाबू रो पड़े, बोले, "दो दिन, अड़तालीस घण्टे और—इतने निकट, फिर भी कोई सूचना न दी?"

हरेन्द्र आँखें पोंछकर बोला, "आवश्यकता नहीं समझी होगी। कुछ किया नहीं जा सकता था, इसी से उसने किसी को कष्ट नहीं देना चाहा।"

आशु वाबू ने अपने दोनों हाथ माथे से लगाकर कहा, "इसका अर्थ यह है कि केवल देश के अलावा किसी आदमी को भी उसने अपना आत्मीय नहीं माना। देश—समस्त भारतवर्ष। फिर भी, भगवान् अपने चरणों में उसे स्थान देगा। तुम और चाहे जो भी करो, पर इस राजेन्द्र की जाति को संसार से न मिटाना। वासुदेव, चलो।"

इस शोक का भयंकर आघात कमल से अधिक शायद और किसी को न पहुँचा होगा; परन्तु वेदना की भाप से उसने अपने कण्ठ को रुँधने नहीं दिया।

उसकी आँखों से चिनगारियाँ-सी निकलने लगीं, बोली, "दुःख किस बात का? वह बैकुंठ गया है।" फिर हरेन्द्र से बोली, "रोइये मत हरेन्द्र बाबू, अज्ञान की बलि हमेशा इसी प्रकार चुकाई जाती है।"

कमल की स्पष्ट और कठोर आवाज ने तेज छुरी के समान सब उपस्थितों के हृदयों को छेद दिया।

आशु बाबू चले गए।

और!

उस शोकाच्छन्न स्तब्ध मौनता में कमल अजित के साथ गाड़ी में जा बैठी और बोली, "रामदीन, गाड़ी चलाओ!"

□□□

डा. ... कल्याणी ... स्मारक ... 9059

C59.832
不352



पूजा के फूल कितने पवित्र होते हैं ! उनसे भी अधिक पवित्र हैं शरत् के उपन्यास । तुलसो की पवित्रता सूख सकती है, मगर शरत् के उपन्यासों की हरियाली पवित्रता अमर है। पढ़ते-पढ़ते लगता है जैसे गंगा की धारा में मन-प्राण निर्मल हो रहे हों । पढ़ने पर दिमाग में दीवालियां झिलमिला उठती हैं।

जो लोग कहते हैं कि आज की पीढ़ी को उपन्यासों ने बिगाड़ दिया है, उन्हें हम अपनी शरत्-उपन्यास-माला से अपनी मनपसन्द के फूल चुनने की दावत देते हैं। हमें विश्वास है कि धीरे-धीरे आप पूरी माला खरीदने पर मजबूर हो जायेंगे ।

याद रहे, यह 'सुबोध'-प्रकाशन है !

सुबोध पब्लिकेशन्स